

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh



A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary
Quarterly International E-Research Journal

जुलाई-सितंबर-2025

<https://shodhutkarsh.com/>

अतिथि संपादक- डॉ.अंजली एस.



शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh



A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly international E- Research Journal
वर्ष-03 अंक - 11 जुलाई - सितंबर -2025

सलाहकार मण्डल (Advisory Board)

Shri Jai Prakash Pandey

Director-Department of Education And Literacy, Ministry Of Education, Govt.Of India.

Prof. Prabha Shankar Shukla

Vice Chancellor North Eastern Hill University (NEHU) Shillong

डॉ. कन्हैया त्रिपाठी पूर्व (OSD), महामहिम राष्ट्रपति 'भारत'

प्रो. दिनेश कुशवाह, रीवा (म.प्र.)

प्रो. राजेश कुमार गर्ग प्रयागराज (उ.प्र.)

प्रो. अनुराग मिश्रा द्वारका, नई दिल्ली

प्रो. कै. एस. नेताम सीधी (म.प्र.)

डॉ. एम.जी. एच. जैदी पन्त नगर (उत्तराखण्ड)

डॉ. राजकुमार उपाध्याय 'मणि' बठिंडा (पंजाब)

डॉ. संगीता मसीह शहडोल (म.प्र.)

डॉ. अंजनी कुमार श्रीवास्तव मोतिहारी विहार

डॉ. अनिल कुमार दीक्षित, भोपाल (म.प्र.)

श्री संकर्षण मिश्रा ऊधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड

प्रो. एम.यू. सिद्दीकी सिंगरौली (म.प्र.)

डॉ. बी.पी. बडोला (हिमाचल प्रदेश)

डॉ. अजय चौधरी, नागपुर (महाराष्ट्र)

श्री प्रदीप कुमार- मूल्यांकक केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली

डॉ. रेणु सिन्हा, रांची- (झारखंड)

डॉ. निशा मुरलीधरन, वडपलनी- चेन्नई

डॉ. अंजलि एस. एर्नाकुलम, (केरल)

श्री पांडुरंग एस. जाधव बेंगलुरु, (कर्नाटक)

संपादक मंडल

प्रधान संपादक - डॉ. एन. पी. प्रजापति सह **संपादक** - प्रो. युरी बोल्वीकिन तारास शेव्चेको कीव (युक्रेन), प्रो. सिराजुद्दीन नर्मतोव (उज़्बेकिस्तान गणराज्य) प्रो. रीनु रानी मिश्रा (उत्तराखंड), डॉ. संतोष कुमार सोनकर अमरकंटक (म.प्र.) प्रो. मोहन लाल 'आर्य' निदेशक एवं डीन IFTM (U.P.) डॉ. बालेन्द्र सिंह यादव, उंचाहार-रायबरेली (उ.प्र.) डॉ. उमाकांत सिंह सिंगरौली (म.प्र.) कैप्टन डॉ. बाबासाहेब माने पुणे (महाराष्ट्र)

लेख भेजने के लिए :- Mail-ID-shodh utkarsh@gmail.com नोट:- पत्रिका में प्रकाशित लेख / शोध आदि में विवाद की स्थिति में लेखक / शोधार्थी स्वयं जिम्मेदार होंगे. पत्रिका के बारे में विस्तार से जानने के लिए देखें:-

Website:-<http://www.shodhutkarsh.com>

प्रकाशक :-

Radha publications

Mail id-radhapub@gmail.com फोन -087505 51515, 9350551515 Website:-<https://radhapublications.com>

पता :-4231, 1, Ansari Rd, Delhi Gate, Daryaganj, New Delhi, Delhi, 110002

दलित उत्कर्ष
समिति द्वारा
प्रकाशित

क्रमांक	शोध आलेख का शीर्षक	पृष्ठ से तक
	संपादकीय..	01
1.	भारतीय मूर्तिकला-उद्भव एवं विकास (प्रागैतिहासिक से गुप्तकाल पर्यन्त)- डॉ. पंकज पाण्डेय	02-04
2.	पारंपरिक ज्ञान - विज्ञान का संरक्षण बनाम स्थानीय भाषाओं का संरक्षण - डॉ.संजीव सिंह नेगी	05-07
3.	पचपन खंभे लाल दीवारें उपन्यास में अभिव्यक्त स्त्री विमर्श - डॉ.श्रीमाया सी	08-09
4.	आन्तरिक लय की कवयित्री : महादेवी वर्मा - डॉ. सत्य प्रकाश पाल	10-11
5.	डॉ. शिवप्रसाद सिंह के उपन्यास 'औरत' में ग्राम-चित्रण - डॉ. पी. एम. आर. जयंती	11-12
6.	स्त्री मन की व्यथा : 'लगता नहीं है दिल मेरा - डॉ. खुशब	13-15
7.	छायावादी काव्य में नवजागरण की चेतना और स्वतंत्रता की आकांक्षा - रवि कुमार झा	16-18
8.	NEP 2020: Transforming Higher Education in India- Dr.Mousumi Borah&Dr.Saurabh Pran Sharma	19-22
9.	राजस्थानी लोक गीतों में नारी जीवन - प्रीति पारीक & डॉ. पिकी पारीक	22-24
10.	Refined Sugar: Impact on Health-Dr.Sanjay Kumar Yadav, Prof. C.K.Dixit, & Dr.Dinesh Kumar Singh	25-30
11.	Beyond Borders: The Role of Global Governance in Solving Transnational Issues - Dr. Subhash Kumar Baitha & Sumit Kumar Rajak	31-35
12.	Analyzing internal migration in Raebareli, Uttar Pradesh - Harsh Vardhan Awasthi & Dr. Sarda Prasad	36-40
13.	Borders and Balance: Navigating India's Migration Challenge with Lessons from the U.S.-Nihar Sharma	40-41
14.	Problems and Prospects of Rural Women Worker with Special Reference to Small Scale and Cottage Industries in Jaipur District, Rajasthan, India - Pratibha Bhaskar, Ravi Ranjan Kumar & Saket Kushwaha	42-48
15.	निलज वनिता का सांस्कृतिक भौतिकवाद - अमर सिंह & डॉ. सीमा चन्द्रन	49-51
16.	भारतीय सामासिक संस्कृति के पुनर्निर्माण में दारा शुकोह की भूमिका -आशीष कुमार तिवारी&प्रो.चंद्रकांत सिंह	51-53
17.	वीरांगना झलकारी बाई (मोहनदास नैमिशराय):दलित अस्मिता के सरोकार - डॉ. अंकिता विश्वकर्मा	54-56
18.	आदिवासी कविताओं में स्त्री अस्मिता - डॉ. भारती लक्ष्मी पाल	57-58
19.	Digital Payment Frauds in India-Challenges and Solutions - Sri Rajashekara.N, IPS & Dr Abhishek Mishra	59-65
20.	Tribal Communities and Environment of Singrauli District- Dr.Vishwanath Singh Kushram	66-68
21.	कृत्रिम बुद्धिमत्ता: समकालीन तकनीकी विकास और भविष्य की संभावनाएं - डां सुधामणि. एस.	69-71
22.	Dandin: Master of Sanskrit Prose and Poetics - Saurabh Shubham	72
23.	उज्जैन जिले में जल संसाधनों का प्रबंधन: एक विस्तृत विश्लेषण - डॉ. गणेश राठौर	73-74
24.	ट्रांसजेंडर जीवन का कसैला यथार्थ:श्रापित किन्नर- डॉ. मेरली के पुन्नस	75-76
25.	महिला शिक्षा एवं डिजिटलीकरण - श्री रवि शंकर जोशी & पनम राय	77-81
26.	आदिवासी संस्कृति पर मुख्यधारा संस्कृति का प्रभाव- अभिषेक कुमार मीना	82-84
27.	A potential medical strategy treating hypothyroidism is the combination of herbal medicine and conventional medical therapies - Ashutosh Pathak, Priya Rai & Nilesh Kumar Upadhyay	84-89
28.	हिन्दी भाषा और वंचित समाज की अस्मिता - डॉ.सुनीता	90-91
29.	मोहनदास नैमिशराय के साहित्य में वंचित समाज का यथार्थ चित्रण- बेलावती सिंह & डॉ.परमानन्द तिवारी	92-93
30.	A Study of Students' Attitude Towards Learning Chemistry Through Art Integration at Secondary School of Boudh District-Dr. Jayant Shankar Boargaonkar & Shraddhanjali Sasini	94-98
31.	आंचलिक कथाकारों का हिंदी साहित्य में योगदान - डॉ. रेखा नागर	99-100
32.	भास के नाटक 'स्वप्नवासवदत्ता' में पर्यावरण संरक्षण का चिंतन: एक विश्लेषण - डॉ. हुकुम सिंह मण्डलोई	101-103
33.	Implementation of Right to Equality under the Indian Constitution: Challenges and Solutions -Dalganjan Singh	103-107
34.	बोली विज्ञान की संभावनाएं - ज्वाला प्रसाद कश्यप	108-110
35.	बंजारा समाज की रहन-सहन : परंपरा, संघर्ष और परिवर्तन का समाजशास्त्रीय अध्ययन - राठोड अजय	111-112
36.	To study the utility of hybrid model of IoT in vehicle accident reporting system in India.- Sanjay Kumar Joharam & Dr. Nidhi Sedhi	113-116
37.	Negotiating Hybrid Identities: Socio-Cultural Impacts of Migration on the Punjabi Diaspora and Rural Punjab.- Akash Bhati	117-120
38.	'लोकनायक युगे युगे' नाटक में धार्मिक समानता- डॉ. लक्ष्मण भोसले	121-123



"प्रकृति की गोद में शांति मिलती है, जहाँ हम हर पल नया सबक सीखते हैं।"

संपादकीय ...

निज भाषा उन्नति अहड़ सब उन्नति को मूल.....

विश्व का सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक देश भारत तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। एक समय ऐसा था कि भारत ही नहीं सम्पूर्ण विश्व हमारी बढ़ती हुई जनसंख्या के प्रति चिंतित था। किन्तु आज की वैश्विक पृष्ठभूमि में भारत की युवा जनसंख्या एवं श्रमबल हमारी शक्ति है। आज भारत आत्मनिर्भर बनता जा रहा है। विश्व के विकसित एवं शक्तिशाली देशों के कंधे से कंधा मिलाकर हम आगे बढ़ रहे हैं। सीना तानकर, आँखों से आँख मिलाकर हम महाशक्तिशाली राष्ट्रों से अपनी ही शर्तों पर राजनयिक संवाद कर रहे हैं।

स्वतन्त्रता के पिछले सात दशकों में भारत के युवा अपनी दक्षता एवं विशेषज्ञता को लेकर विश्व के कोने कोने में पहुँचे हैं। मध्य-एशिया के अरब देश हो, यूरोप, अमेरिका या ऑस्ट्रेलिया हो, इनके विकास के सपनों को सच करने वाले अधिकतर भारतीय विशेषज्ञ तथा श्रमिक ही हैं। यह तो सच है कि प्रवासी भारतीयों द्वारा भेजी जानेवाली विदेशी मुद्रा भारतीय वित्त व्यवस्था को और दृढ़ता प्रदान करती रही है। किन्तु अब स्थितियाँ बदल गयी हैं। विकासशील भारत, आत्मनिर्भर भारत बन रहा है। अब और अधिक प्रतिभा पलायन भारत झेल नहीं सकता। आत्मनिर्भर भारत से विश्वगुरु भारत तक की यात्रा में अपना देश, अपनी परम्परा और सांस्कृतिक विरासत के प्रति स्वाभिमान से युक्त, चिंतनशील, मानवीय मूल्यों पर अडिग, दृढ़ व्यक्तित्ववाले, अनुशासित नई पीढ़ी की आवश्यकता है।

ऐसी एक पीढ़ी का निर्माण हम कैसे करें ? स्वतन्त्रता के स्वर्ण जयंती के उपरान्त भी भारत की सुशिक्षित युवा पीढ़ी अंग्रेजी भाषा एवं संस्कृति के गुलाम हैं। भारतीय जनमानस में आज भी गुलामी के चिन्ह इतना गहरा है कि शिक्षा का मापदंड ही अंग्रेजी का ज्ञान हो गया है। अंग्रेजी न बोल सकने वाले व्यक्ति को हम शिक्षित ही नहीं मानते, चाहे वह अन्य विषयों में निष्णात ही क्यों न हो और उस ज्ञान की सफल अभिव्यक्ति मातृभाषा के माध्यम से करता भी हो, भारत में अंग्रेजी शिक्षा को लागू करते हुए लार्ड मेकॉले का लक्ष्य था - सोच-विचार, आचरण, भाषा, वेश-भूषा आदि सभी मायनों से अंग्रेजों के अनुकरण करनेवाले, मात्र त्वचा के रंग से भारतीय एक पीढ़ी का निर्माण करना। दुर्भाग्य की बात है कि यह कूटनीति स्वतन्त्रता के सात दशकों बाद भी सफल होती हुई दिखाई देती है।

भाषा अभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं है, अपितु संस्कृति का संवाहक भी है। देश और उसकी संस्कृति के विकास में भाषा और साहित्य की भूमिका को भली भांति जानते हुए ही भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने "निज भाषा उन्नति अहड़ सब उन्नति को मूल" कहा था और भारत को हिंदी भाषा के सत्र में बाँधने का प्रयास किया था। इसीलिए ही गांधीजी जैसे नेताओं ने हिंदी को देशीय आंदोलन के माध्यम के रूप में स्वीकार किया था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकृति भी मिली थी। आज हम उस स्वीकृति की 75वीं वर्षगांठ मना रहे हैं। किन्तु हिंदी को हम भारत की राजभाषा के रूप में कहाँ तक अपना पाए हैं, यह चिंता का विषय है।

हिंदी दिवस के इस अवसर पर हमें यह प्रण लेना है कि हम हिंदी के सर्वतोन्मुख विकास के लिए प्रयत्न करेंगे, साथ ही साथ अन्य प्रादेशिक भाषाओं का भी संवर्धन करेंगे। तब जाकर भारत के विकास का फल यहाँ के साधारण से साधारण व्यक्ति तक पहुँच सकता है। उनमें

देशीय बोध जागृत हो सकता है। हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को हमें अपने विचारों की अभिव्यक्ति और प्रशासन का माध्यम बनाना होगा। इन भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा की वैज्ञानिकता एवं शब्द निर्माण की क्षमता से हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को हमें पुष्ट करना है। संस्कृतभाषा ज्ञान की कुंजी है। इस ज्ञान को भारतीय भाषाओं के माध्यम से जन साधारण तक पहुँचाना है। पारम्परिक ज्ञान से आधुनिक ज्ञान को पुष्ट कराना है। इस प्रकार भारतीय भाषा, वाङ्मय, विज्ञान एवं जीवन शैली को हमें विश्व के बदलते परिवेश एवं नई आवश्यकताओं के अनुरूप अपनाना है। मात्र इससे हम भारत की सांस्कृतिक परंपरा पर गर्व करनेवाली नई पीढ़ी का निर्माण कर सकते हैं। ऐसी पीढ़ी ही भारत को विकास की ओर ले जा सकती है। भारतीय संस्कृति ही विश्व को सत्य, धर्म, त्याग और शान्ति का मार्ग दिखा सकती है। संसार को भौतिकता की मृगतृष्णा की तुलना में आध्यात्मिक संतृप्ति का पथ प्रदर्शन कर सकती है। इस महान लक्ष्य के लिए हमें भारत माता को विश्व गुरु के रूप में प्रतिष्ठित करना है। तब हिंदी विश्वभाषा के रूप में प्रतिष्ठित होगी।

दिनांक -30/09/2025

डॉ. अंजली एस.

सहायक आचार्या
स्नातकोत्तर हिंदी विभाग एवं शोध केंद्र
महाराजा कॉलेज, एर्नाकुलम - केरल.

भारतीय मूर्तिकला-उद्भव एवं विकास (प्रागैतिहासिक से गुप्तकाल पर्यन्त)

डॉ. पंकज पाण्डेय

एसो.प्रो. इतिहास विभाग

श.दु.म.रा.स्ना.महा. डोईवाला, देहरादून।

प्रस्तावना: भारतीय कला और संस्कृति की जड़ें प्राचीन काल में निहित हैं और भारतीय मूर्तिकला इस समृद्ध सांस्कृतिक धारा का अंग रही है। भारतीय मूर्तिकला न केवल धार्मिक और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों का माध्यम रही है बल्कि वह समाज, दर्शन और जीवन के विविध पहलुओं को भी प्रकट करती है। मूर्तिकला के माध्यम से भारतीय समाज ने अपने विचारों, आदर्शों और विश्वासों को शाश्वत रूपों में प्रस्तुत किया है। इस शोध पत्र में हम भारतीय मूर्तिकला के उद्भव, विकास और उसकी प्रमुख विशेषताओं की चर्चा करेंगे।

बीज शब्द: प्रतिमा विज्ञान, भारतीय पूजा परंपरा, गांधार शैली, मथुरा शैली।

भारत की मूर्तिकला भारतीय संस्कृति की एक अनुपम देन है। प्रतीकोपासना, जिसके गर्भ से प्रतिमा-पूजा का जन्म हुआ, अनती ही प्राचीन है जितनी मानव सभ्यता, यह मानवता की सदैव सहचरी रही है, बिना इसके मानवता एक क्षण के लिए भी उच्छ्वास न ले सकी। इसीलिए व्यापक सांस्कृतिक दृष्टि से यह मानना अनुचित न होगा कि उपासना की यह परम्परा सिन्धु सभ्यता से भी प्राचीनतम युग प्रागैतिहासिक काल में भी विद्यमान थी।

वस्तुतः प्रतिमा-विज्ञान वास्तु-विद्या का एक अभिन्न अंग है। मन्दिर-वास्तु की रचना का एक मात्र उद्देश्य ही उसमें प्रतिमा की प्रतिष्ठा है। प्रतिमा-पूजा और प्रतिमा निर्माण भारत में देवपूजा के प्रतिफल हैं। देवपूजा विधि को जाने बिना मूर्ति-शिल्प का रहस्य हृदयगम नहीं हो सकता, देवपूजा की सरलतम विधि 'अन्यवती' उपासना रही है। इसमें मन-स्थैर्य के लिए दृष्टि प्रतिकृति (प्रतीक) पर होती है और बुद्धि प्रतिमेय (उपास्य) पर। प्रतिकृति में प्रतिमेय की यह भावना अन्यवती उपासना है, जो मूर्ति निर्माण का मूल कारण है। ज्ञातव्य है कि प्रतीक या प्रतिमा स्वयं देवता नहीं है। यह साधक के लिए एक माध्यम और योग सिद्धि के लिए एक साधन मात्र है। मूर्तिकार ध्यानशील होकर ऋषियों और साधकों द्वारा परिकल्पित ध्यान-मन्त्रों का ही प्रतिमा में उपस्थापन करता है।

सगुण-साकार वस्तु की पूजा के लिए अन्यवती उपासना है, परन्तु निराकार की प्रतिकृति अशक्य होने से उसकी पूजा हेतु 'निदानवती' उपासना का आश्रय लिया गया है। संकेत का ही नाम 'निदान' है। इसमें गुणक्रियानुसारेण क्रियते रूपकल्पना के अनुसार मूर्ति-कल्पना की गई है। यथा 'पदम' पृथ्वी का और 'गज' लक्ष्मी का निदान है। निगम और आगम में सर्वत्र 'निदानविद्या' का व्यवहार पाते हैं उसे दार्शनिक भाषा में- 'आहार्यारोपविद्या' कहा गया है। इस प्रकार अमूर्त की मूर्ति-कल्पना निदानवती उपासना से हुई है। देवप्रतिमाओं से संबद्ध समस्त संकेत वा प्रतीकवाद, 'मुद्राएँ' भी कहलाती हैं। प्रतिमा-ज्ञान के लिए यह जानना भी समीचीन है कि भारत में प्रतीकवाद, उसकी संस्कृति एवं दर्शन का मूल तत्व है, धर्म कला और प्रतीकवाद तीनों परस्पर सम्बन्धित हैं। भारतीय धर्ममूलक, कला आध्यात्मिक योग का अपरिहार्य फल है। अतएव 'सर्वलक्षणसम्पन्न' प्रतिमा ही पूज्य है। यहां प्रासाद-वास्तु और देवप्रतिमाओं की भूषा और शान्ति के लिए जो प्राकृतिक व काल्पनिक अभिप्राय प्रयुक्त हैं, उन्हें अलंकार कहा गया है, अलंकारों का प्रयोजन सौन्दर्यवर्धन एवं मांगल्य दोनों है, ये कला को 'गहनतर' दार्शनिक अर्थ

प्रदान करते हैं। सिंह, वृषभ, गज, व्यजन, कलश, वैजयंती, भेरी और दीप ये अष्टमंगल माने गये हैं। इनके अतिरिक्त मांगल्यविहग, श्रीवृक्ष, स्वास्तिक, घट, मिथुन पल्लवल्ली और प्रमंश भी अलंकार हैं, जिनके द्वारा द्वारभूषा करने का आदेश है। इसी प्रकार त्रिरत्न शंख चक्र पद्म कीर्तिमुख आदि नाना मांगलिक प्रतीक हैं।

प्रतिमा-पूजा की प्राचीनता के उद्भव एवं विकास की समीक्षा प्रायः साहित्यिक प्रमाण पर ही आधारित है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, वेदांग, सूत्र, साहित्य, रामायण, महाभारत, स्मृति साहित्य, जैन, बौद्ध एवं प्राचीन व्याकरण साहित्य तथा अर्थशास्त्र आदि के परिशीलन से हमें मानव-सभ्यता की इस प्राचीनता के स्पष्ट प्रमाणों की उपलब्धि होने लगती है। यद्यपि विद्वानों में प्रतिमा-पूजा की प्राचीनता पर बड़ा विवाद है, किन्तु सांस्कृतिक मीमांसा से यह समझने में देर लगेगी कि प्रतिमा-पूजा तथा प्रतीकोपासना मानव-सभ्यता में तो क्या आधुनिक दृष्टिकोण के अनुसार मानव की असभ्यता तथा अर्धसभ्यता की दशा में भी विद्यमान रही है। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि प्रागैतिहासिक युग में धर्म-अनुष्ठान और अन्धविश्वासों की भावनाओं का बीजारोपण हो चुका था। इस युग के मनुष्य वृक्षों और चट्टानों में देवी-शक्ति या देवता का निवास समझने लगे थे। इस प्रकार भारतीय मूर्तिकला का उद्भव आदि मानव के विकास के साथ ही हुआ।

भारत की प्राचीनतम सभ्यता के अवशेष सिन्धु-घाटी से प्राप्त हुए हैं। अस्तु प्रामाणिक रूप से भारत में मूर्तिकला का इतिहास सैधव्य सभ्यता से प्रारम्भ होता है। इस सभ्यता के उत्खनन से मूर्तिकला के जो अवशेष प्राप्त हुए हैं, उनमें सुन्दरता, नवीनता और गतिशीलता देखने को मिलती है, जो कालान्तर में मूर्तिकला की एक विशिष्टता बन गई। ऐतिहासिक क्रम में सिन्धु-घाटी की सभ्यता के बाद आर्य सभ्यता का आगमन भारतीय इतिहास में होता है। आर्यों के आदि ग्रन्थ ऋग्वेद में मूर्तिकला के कुछ प्रमाण अवश्य मिलते हैं। तदन्तर मूर्तिकला का विकास किसी न किसी रूप में परिलक्षित होता है। पतन्जलि ने मूर्तियों का स्पष्ट उल्लेख किया है, कौटिल्य-अर्थशास्त्र में भी मूर्तियों का उल्लेख मिलता है। रामायण तथा महाभारत में मूर्तियों का उल्लेख है, सैधव्य सभ्यता की कलात्मक मूर्तियों के पश्चात् हमें जो कलात्मक मूर्तियाँ मिलती हैं, वे मौर्यकालीन हैं।

आर्यों के भारत में प्रवेश करने से पूर्व ही सिन्ध प्रदेश में बहुदेवतावाद प्रचलित था कई देवी-देवताओं की पूजा की जाती थी। सैधव्य सभ्यता के लोग मूर्ति-कला में भी कुशल थे। तत्कालीन मिट्टी की अनेक मूर्तियाँ उपलब्ध हुई हैं उनकी मूर्तिकला की चार शैलियाँ थीं। 1- पाषाण को तरासकर, 2- धातुओं को ढालकर 3- ठप्पा लगाकर 4- हाथ से मिट्टी की मूर्तियाँ बनाकर उन्हें अग्नि में पकाकर। इन सभी शैलियों में अद्भुत कौशल था। मूर्तियाँ दो प्रकार की होती थी- प्रथम धार्मिक महत्व वाली मूर्तियाँ यथा देवी-देवताओं उपासिकाओं, नर्तकियों, बलि-पशुओं आदि की मूर्तियाँ। द्वितीय साधारण महत्व की मूर्तियाँ यथा स्त्री-पुरुष पशु- पक्षी आदि की मूर्तियाँ। मुअन-जो-दड़ों में मिट्टी की बनी हुई अनेक मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं जो नर्तकियों की हैं। किन्तु यहां कांसे की एक नर्तकी की जो मूर्ति प्राप्त हुई है, वह उनकी श्रेष्ठ धातु

कला एवं मूर्ति कला का ज्वलन्त उदाहरण है। तत्कालीन खड़िया पत्थर की बनी हुई योगी की मूर्ति भी कला की दृष्टि से अद्वितीय है। इस मूर्ति में ध्यानावस्थित योगी के आंगिक विन्यास, उसके वस्त्र अलंकरण आदि का यथार्थ प्रदर्शन हुआ है। इसके साथ हड़प्पा से प्राप्त पाषाण मूर्तियां अत्यधिक सजीव और सौन्दर्यमयी हैं। इनमें लाल पाषाण की पुरुष-मूर्ति का धड़-भाग उत्कृष्ट है। इसमें मानव की आकृति का लक्षण अपूर्व कुशलता से किया गया है।

भरे पत्थर की बनी हुई नर्तकी की एक अन्य मूर्ति भी हड़प्पा से प्राप्त हुई है। इसके हाथ, पैर, सिर आदि धातु-खूंटियों से जोड़े गये हैं ये मूर्तियां यह सिद्ध करती हैं कि पाषाण को काटने, तराशने, छीलने उसकी पच्चीकारी करने और उस पर पालिश करने में सैधव्य कलाकारों ने दक्षता प्राप्त कर ली थी। इसके साथ ही सैधव्य सभ्यता के लोग अपने उपास्य देवी-देवताओं की मूर्तियां बनाकर उन्हें पूजते थे। ऐसी बहुसंख्यक लघु मूर्तियां उपलब्ध हुई हैं। यह ईश्वर की साकार उपासना थी। उनकी इस मूर्ति पूजा और साकार उपासना का प्रचलन हिन्दू-धर्म की सभी शाखाओं और उपशाखाओं में आज भी विद्यमान है।

भारतीय पूजा-परम्परा या उपासना-पद्धति के विभिन्न सोपानों पर दृष्टिपात करने से अनायास ही भारतीय धर्म-हिन्दू, जैन, बौद्ध के व्यापक रूप के साथ-साथ हिन्दू-धर्म के भीतर वैदिक, स्मार्त एवं पौराणिक प्रतिरूपों के अतिरिक्त शैव, वैष्णव एवं शाक्त आदि अवान्तर रूपों, सम्प्रदायों, मतों तथा मतान्तरों की चर्चा किसी न किसी प्रकार प्रासंगिक बन जाती है। इन सभी में प्रतिमा-पूजा का मूल अर्थ तो देव-विशेष, व्यक्ति-विशेष अथवा पदार्थ विशेष की प्रतिकृति, बिम्ब मूर्ति अथवा आकृति-सभी का बोधक है। किन्तु यहां पर प्रतिमा का तात्पर्य भक्ति-भावना से भावित देव विशेष की मूर्ति अथवा देवभावना से अनुप्राणित पदार्थ-विशेष की प्रतिकृति ही है। मूर्ति-पूजा में 'प्रतिमा' कलात्मक प्रियता की मानवीय भावना का वह प्रकट मूर्त स्वरूप है जिसके द्वारा इस देश के मानव ने अदृष्ट शक्ति की कल्पना एवम् उसकी उपासना की प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से चेष्टा की है। विभिन्न युगों में यह चेष्टा एक सी नहीं रही है। पुरातन से पुरातन संस्कृतियों एवं जातियों में किसी न किसी प्रकार से इस चेष्टा के दर्शन होते हैं। इस प्रकार उपासना या उपासना-पद्धति के गर्भ से देवपूजा एवं देव-प्रतिमा निर्माण का जन्म हुआ।

पूर्व वैदिक-कालीन आर्यों ने धार्मिक जीवन के केन्द्र-बिन्दु एवं प्रकृति के प्रमुख पदार्थों को देवों और देवियों के प्रतीक रूप में प्रकल्पित कर स्तुति-गायन के द्वारा उनमें देव-भावना का संचार किया। ऋग्वेद की अनेक ऋचाओं को देवों की उपासना में प्रतिमा-विज्ञान के आदि रूप को देखा जा सकता है। ऋग्वेद में 'शिश्र-देवों: और 'मूरदेवा: इन दो शब्दों को भी मूर्ति पूजा का द्योतक माना गया है। लिंग-पूजा की पोषक सामग्री भी ऋग्वेद में प्राप्त होती है। 'वैदिक-इन्डैक्स में शिश्र-देव से लिंगोपासकों का ही संकेत ग्रहण किया गया है। सिंधु-सभ्यता में लिंगोपासकों की प्राचीन परम्परा पहले ही सिद्ध हो चुकी है।

यजुर्वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, वेदांग, सूत्र-साहित्य के परिशीलन से उत्तर वैदिक काल में प्रतिमा-पूजा के मजबूत प्रमाण प्राप्त होते हैं। तैत्तिरीय ब्राह्मण (2. 6. 17) में स्वर्णमयी सुन्दर तीन देवियां - भारती, ईडा तथा सरस्वती की पूजा के लिए होता, पुरोहित के आज्ञार्थ प्रवचन है। वैदिक खिलों में भी प्रतिमा-पूजा पर सूदृढ सामग्री प्राप्त होती है। षड्विंश ब्राह्मण के देवतायतनानि कम्प्यन्ते देवप्रतिमा हसन्ति रुदन्ति नृत्यन्ति स्फुटन्ति खिद्यन्ति उम्मीलयन्ति' से तत्कालीन देवप्रतिमा पर अकाट्य प्रमाण प्राप्त होता है। पंचविंश ब्राह्मण (23.18.1) में 'देवमलीमुच (देवप्रतिमाओं के चुराने वाले) शब्द के प्रयोग से भी यही

सिद्ध होता है। ऐतरेय तथा शतपथ ब्राह्मण में सोने की प्रतिमा का संकेत है। शतपथ में तो इष्टका पर रात्रि-प्रतिमा तथा काल-प्रतिमा की रचना का भी उल्लेख है। शांखायन ब्राह्मण में ऐसे ही विपुल संकेत है। कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय ब्राह्मण में मूर्ति-निर्माता 'त्वष्टा' का भी उल्लेख है। इसी प्रकार आरण्यक तथा सूत्रग्रन्थों में देवता, देवतायन (मंदिर) एवं देवप्रतिमा-पूजा के अकाट्य प्रमाण उपलब्ध होते हैं। इन ग्रन्थों में विष्णु, रुद्र (शिव), दुर्गा, लक्ष्मी, सूर्य, गणेश तथा यम की पूजा के साथ ही साथ प्रतिमा-निकेतन (देवालयों) की भी प्रतिष्ठा प्रमाणित होती है, देवगृह, देवतायन, देवकुल शब्दों से इन देवालयों का प्रमाण सिद्ध होता है। आपस्तम्ब गृह्यसूत्र प्रतिमा पूजा पर पूर्णरूप से विवेचन करता है। इसकी प्रकार उपनिषद् भी आर्य-द्राविड-मिश्रित संस्कृतियों को ही पोषक रही है।

भारतीय मूर्तिकला के विकास में भारतीय पुराण-शास्त्र का भी सम्यक् ज्ञान आवश्यक है। विभिन्न देवों के नाना रूपों की उद्भावन पुराणों ने ही प्रदान की है। पुराणों के अवतारवाद एवं बहुदेवतावाद का स्थापत्य पर बड़ा प्रभाव पड़ा। देव-विशेष के पौराणिक नाना रूप स्थापत्य की नाना मूर्तियों को जन्म देने में सहायक हुए। वैदिक युग में प्रचलित प्रकृति-पूजा अब लुप्तप्राय: हो चुकी थी उनका स्थान ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश, पार्वती, दुर्गा आदि देवी-देवताओं ने ले लिया था। वैदिक काल के देवताओं में अब केवल ब्रह्मा और रुद्र की पूजा होती थी। विष्णु के दशअवतारों की धारणा लोकप्रिय हो गई थी, राम और कृष्ण को विष्णु के अवतार मानकर उनकी पूजा और आराधना की जाने लगी थी। मनुस्मृति आदि स्मृति ग्रंथों तथा प्राचीन व्याकरण साहित्य-पाणिनी की अष्टाध्यायी तथा पतंजलि के महाभाष्य के परिशीलन से भी प्रतिमा-पूजा के विकास पर प्रकाश पड़ता है। पाणिनि की अष्टाध्यायी के सूत्रों (4.3.98 तथा 5.3. 99) से स्पष्ट है कि ईसा से लगभग 800 वर्ष पूर्व इस देश में प्रतिमा पूजा पूर्ण-प्रतिष्ठा को प्राप्त हो चुकी थी। कौटिल्य के अर्थशास्त्र (300 ई0पू0) में देव-प्रतिमा पूजा एवं देवस्थानों के संकेत बिखरे पड़े हैं। इससे सूचित होता है कि देवप्रतिमा-प्रतिष्ठा का वह एक अति सु-प्रतिष्ठित एवं सुविकसित समय था। तत्कालीन देव प्रतिमाओं की प्रकल्पना में अपराजित, अप्रतिहत, जयन्त, वैजयन्त, शिव, वैश्रवण, अश्विनी कुमार आदि देवों तथा श्री और मदिरा इन दो देवियों का उल्लेख पाया जाता है। मदिरा का तात्पर्य भगवती दुर्गा है (दुर्गा-अम्बिका के अनेक नामों में मदिरा भी एक है)।

भारतीय इतिहास में मौर्यकाल का आरम्भ 323 ई0पू0 से और अन्त 184 ई0पू0 में निश्चित है। इस काल के शासकों में चन्द्रगुप्त, बिन्दुसार तथा अशोक उल्लेखनीय हैं। यह युग भारतीय कलाओं के विकास की एक उज्ज्वल दीर्घा है। इस समय कला के लोकाश्रयी तथा राज्याश्रयी दो भाग मिलते हैं। कला की ये दोनों धारायें आगे चलकर एक हो जाती हैं। इसके संगम से भारतीय कला को एक नया आयाम मिला, जो परवर्ती कालों में विकसित होकर गुप्तकाल में अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच गया। मौर्यकाल में वास्तु तथा मूर्तिकला दोनों ही अत्यन्त विकसित थे, चन्द्रगुप्त का पौत्र अशोक इस काल का सबसे बड़ा उन्नायक माना गया है। उसने पर्वतों, शिला-फलकों तथा लाटों पर जो नाना शिलालेख खुदवाये उनसे सभी परिचित हैं। वास्तव में अशोक एक लोकोत्तरचेता महामानव था, उसके महान स्तम्भ ही उस काल की मूर्तिकला के सार हैं और संसार की उच्च कृतियों में उनका स्थान है। मौर्यकाल में मनुष्यों, यक्ष-यक्षणियों गंधर्वों देवी-देवताओं, पशु-पक्षियों की प्रतिमायें बनायी जाती थीं। इन मूर्तियों के अतिरिक्त जैन तीर्थंकरों की उच्चकोटि की संजीव मूर्तियां भी मौर्य युग की विशेषता है ये अशोक के पौत्र के शासनकाल की है।

मौर्यकालीन मूर्तिकला के विशिष्ट अवलम्ब अशोक के प्राचीनतम 13 स्तम्भ उपलब्ध हैं जो दिल्ली, कौशाम्बी, इलाहाबाद, सारनाथ, मुजफ्फरपुर, लौरियानन्दगढ़ रामपुरवा (चम्पारण) रुम्मिनदेई (लुम्बिनी) तथा सांची में विद्यमान हैं। इन सभी स्तम्भों को अशोक की लाटों के नाम से पुकारा जाता है। इन स्तम्भों के लाट गोल और नीचे से ऊपर तक चढ़ाव उतारदार हैं। इन लाटों पर बने 'परगहे' जो पत्थर के हैं, कोरकर बनाई गई मूर्तिकला के सुन्दर नमूने हैं। परगहे के सिर पर जिन पशु-चिन्हों का निर्देश है, उनमें सिंह, हाथी, बैल, अथवा घोड़ा होते थे और पशु मूर्ति अथवा वाहन मूर्ति का इनमें बड़ा सुन्दर निदर्शन प्राप्त होता है। इनकी तुलना अत्यन्त दुर्लभ है। पटना के समीप 'दीदारगंज' से उपलब्ध 'चामरग्रहिणी' की मूर्ति अशोक कालीन मूर्तिकला का अद्वितीय उदाहरण है। वास्तव में लोकधर्मी मूर्तियां तीसरी तथा दूसरी सदी ई०प० की है। लोकाश्रयी कला वह कला थी जिसे जन सामान्य का आश्रय प्राप्त था, इस लोकाश्रयी कला की परम्परा पूर्व युगों से काष्ठ और मिट्टी पर चली आ रही थी और अब उसे पाषाण के माध्यम से व्यक्त किया जाने लगा था कालान्तर में इसी कला में भारतीय मूर्ति कला के नवीन आदर्शों को स्थापित किया। अशोक के स्तम्भों की कारीगरी में 'जन' अभिप्रायों के दर्शन होते हैं। जैसे पंखदार सिंह, पंखदार वृषभ, नर मकर, नर अश्व, मेष, मकर, गज-मकर, वृष मकर, सिंह-नारी गरुड-सिंह तथा मनुष्य के धड़ वाले पक्षी आदि के साथ-साथ घर से निकला 'सनाल कमल' यह अन्तिम अभिप्राय भारतीय मूर्ति-स्थापत्य का एक सनातन अंग है जो गुप्त काल में घट-पल्लव में परिवर्तित होकर तत्कालीन वास्तु एवं मूर्ति की सजीव प्रतिमा बन गया।

मौर्य कालोपरान्त शुंगों का शासन शुरू हुआ, जिन्होंने 184 से 72 ई०प० तक शासन किया। इस युग की मूर्तिकला में सामयिक 'ललितभाव', धर्म के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। इस युग की कला एक ऐसे वृक्ष के समान है जिसकी शाखायें स्वतन्त्र कला शैली के रूप में क्रमिक विकास करते हैं।

शुंग ब्राह्मण थे, ब्राह्मण धर्म का उनके समय में विशेष उत्कर्ष हुआ। शुंगों के समय में मनु-स्मृति, महाभाष्य आदि उच्चकोटि के ग्रंथ लिखे गये। ब्राह्मण सम्प्रदाय में उस समय मूर्ति-पूजा पूर्ण प्रतिष्ठित हो चुकी थी। इस युग का एक पंचमुख शिवलिंग 'भीटा' में पाया गया है। दक्षिण के गुडिमल्लम् नामक स्थान में इस लिंग की बड़ी कीर्ति है। शुंग-काल की असंख्य मृण्मूर्तियां भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक पायी जाती हैं।

शुंग कालोपरान्त, कुषाण वंश (50 से 300 ई०) के शासकों ने भारतीय धरा पर कला को प्रोत्साहन दिया। वे कला मर्मज्ञ और कला प्रेमी भी थे। इनमें कनिष्क (78 ई०) का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। उसकी प्रारम्भिक मुद्राओं पर यूनानी देवताओं सूर्य (हेलियोस) और चन्द्र (मयो) के चित्र अंकित हैं। कुषाण युग में विकसित गान्धार कला भारतीय संस्कृति को कुषाणों की ही महान देन है। इस काल का प्रमुख केन्द्र उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्त में गान्धार प्रदेश और कुषाणों की राजधानी 'पुरुषपुर' थी। अफगानिस्तान में जलालाबाद स्वातघाटी हडेडा, पेशावर जिले में 'दामियात' तथा 'तक्षशिला' में गान्धार शैली के भव्य स्मारक और अवशेष प्राप्त हुए हैं, इनमें बुद्ध और बोधिसत्वों की अनेकानेक मूर्तियां तथा स्तूप हैं। यवन प्रभाव होते हुए भी इन मूर्तियों पर भारतीय आध्यात्मिकता की गहरी छाप है। गान्धार शैली की अनेक मूर्तियां काले सलेटी पत्थर की भी हैं। कुषाण युग में मथुरा भी एक प्रमुख कला केन्द्र था।

185-320 ई० के मध्य मथुरा दोआब और उत्तर-पश्चिमी मध्यभाग में और भारशिव वाकाटकों का शासन था, इनके आश्रय में 'नागकला' तथा 'नागरकला' दोनों का सुन्दर विकास हुआ। इस कला में अण्डाकृति चेहरे की निर्माण पद्धति के साथ-साथ गंगा-यमुना के नदी चित्रों की रचना विशेष उल्लेख्य है। इस काल की मूर्तियों में शिवलिंग तथा शिवायतन विशेष प्रसिद्ध हैं।

तीसरी सदी ई० के अन्त में उत्तरी भारत में गुप्तों का उत्कर्ष शुरू हुआ, जिन्होंने छठी सदी ई० तक शासन किया। यह भारतीय मूर्तिकला का स्वर्णिम काल था। गुप्तकला की विशेषता सौन्दर्याभिव्यक्ति है। इस युग से पूर्व की कला में वह सजीवता न थी, जो गुप्तयुग में मिलती है। इस कला के दो मुख्य अंग उल्लेखनीय हैं- 1- मूर्तिकला 2- उकेरी गई कला इसमें मूर्ति-कला प्रमुख है जिनके तीन प्रभेद इस युग में मिलते हैं- प्रस्तर मूर्तिकला, धातु मूर्तिकला और मृण्मयी मूर्तिकला। ये मूर्तियां प्रायः ब्राह्मण जैन तथा बौद्ध धर्मों से सम्बन्धित मिली हैं। गुप्तकाल में मथुरा, सारनाथ, पाटलिपुत्र मूर्तिकला के प्रमुख केन्द्र थे। बुद्ध-मूर्तियों में सारनाथ की बुद्ध मूर्ति, ब्राह्मण मूर्तियों में उदयगिरी विदिशा, मध्य प्रदेश में वाराह की मूर्ति प्रमुख हैं। अन्य मूर्तियों में गोवर्धनधारी कृष्ण, कार्तिकेय तथा सूर्य की मूर्तियों के अतिरिक्त जो मूर्ति भारतीय कला और पुराण की सर्वप्रमुख अभिव्यंजना करती है वह दैवगढ़ (ललितपुर, जिला झांसी) में गुप्त मन्दिर के एक अवशेष में विराजमान है। शेषशायी नारायण की सुन्दर मूर्ति यहां देखने को मिलेगी। यह चित्रण मन्दिर की बाह्य भित्ति पर है। गुप्त युग में कला के अनेक केन्द्र विकसित हुए, जिनमें मथुरा, सारनाथ, पाटलिपुत्र, विन्ध्य व मालवा शैलियां उल्लेखनीय हैं। सर्वाधिक मूर्तियां सारनाथ शैली में निर्मित हुई हैं। सारनाथ की पदमासनासीन धर्मचक्र-प्रवर्तन मुद्रा में प्राप्त बुद्ध-मूर्ति भाव-भंगिमा के कारण अनुपम है। मूर्ति के दक्षिणावर्त केश तथा उष्णीष व मस्तक के चारों ओर अलंकृत प्रभामण्डल प्रभावशाली हैं। प्रस्तर एवं धातु के साथ ही इस काल में मृण्मयी मूर्तियों का भी बड़ी संख्या में निर्माण हुआ। इन मृण्मयी मूर्तियों में विष्णु, सूर्य, दर्गा उल्लेखनीय हैं। इनमें नारी-मूर्तियां बड़ी लुभावनी हैं। गुप्तों के स्वर्ण-सिक्के भी मूर्तिकला के उत्कृष्ट निदर्शन हैं। इन सिक्कों पर समुद्रगुप्त का वीणा-वादन, चन्द्रगुप्त का आखेट तथा स्वामी कार्तिकेय वाले सिक्कों पर की गई आकृतियां बहुत ही सजीव एवं कलापूर्ण हैं।

वस्तुतः मूर्तिकला के उद्भव एवं विकास विषयक इस अध्ययन की अनुशांसा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारतीय प्रतिमा-विज्ञान की आधार-शिला का निर्माण पूजा-परम्परा अथवा ध्यान-परम्परा रही है। प्रतिमा-विज्ञान स्वयं एक प्रयोजन न होकर प्रयोज्य मात्र है। प्रयोजन तो प्रतिमा पूजा है। भारतवर्ष की धार्मिक एवं सांस्कृतिक प्रगति में मूर्ति-पूजा का एक महत्वपूर्ण स्थान है। प्रतिमा-पूजा ने ही निर्गुण एवं निराकार ब्रह्म के चिन्तक अद्वैतवादियों तथा संगुण और साकार ब्रह्म के उद्भावनक भक्तों, दोनों के दृष्टिकोण में समन्वयात्मक सामंजस्य स्थापित किया है। कला की इस महान परम्परा का प्रागैतिहासिक युग से लेकर गुप्तकाल पर्यन्त तक की विशाल परंपरा है। विभिन्न प्राप्त एवं अर्धप्राप्त प्रतिमा-स्मारक-निदर्शन इस तथ्य के ज्वलन्त उदाहरण हैं।

सन्दर्भ :

- I. Bhattacharya N.N. ,History of Indian Art page 15-16
- II. Aziz K.K. Indian Architecture & Sculpture ,page 56-57
- III. Kramrisch H.A. The Art of India page 67-69
- IV. Basham A.L. , Buddhist Art in India , page 45,96
- V. Nilkanta Shashtri K.A, The Chola Temples page 56
- VI. Aziz K.K. Indian Architecture & Sculpture ,page 151
- VII. Basham A.L. , Buddhist Art in India , page 103.
- VIII. Bhattacharya N.N. ,History of Indian Art page 53
- IX. Nilkanta Shashtri K.A, The Chola Temples page 122
- X. Kramrisch H.A. The Art of India page 99
- XI. तैत्तिरीय ब्राह्मण 2-6-2
- XII. पंचविंश ब्राह्मण 23.18.1.
- XIII. अष्टाध्यायी ,पाणिनी 4-3-98 तथा 5-3-99
- XIV. Basham A.L. , Buddhist Art in India , page 156.

पारंपरिक ज्ञान - विज्ञान का संरक्षण बनाम स्थानीय भाषाओं का संरक्षण

डॉ.संजीव सिंह नेगी

असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी

रा.स्नातकोत्तर महाविद्यालय डोईवाला देहरादून

मो. नं. 9410926724 Email- sanjeebnegi24@gmail.com

पारंपरिक ज्ञान और विज्ञान भारत के विभिन्न समुदायों की हजारों वर्ष पुरानी वह ज्ञान परंपरा है जिसे कोई विशिष्ट समुदाय अपने पर्यावरण के साथ पारस्परिक अंतर क्रियाओं के माध्यम से अर्जित करता है। इसमें जीवन यापन के तरीकों जैसे कृषि, पशुपालन, पारंपरिक स्वास्थ्य और पोषण, पारिस्थितिकीय ज्ञान, जलवायु और मौसम विज्ञान आदि के बारे में परंपरागत ज्ञान और तकनीक शामिल है। ऐसा ज्ञान जो जीवन निर्वाह और मानव अस्तित्व के लिए आवश्यक है।

पारंपरिक ज्ञान विज्ञान की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है कि यह मौखिक परंपरा से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होता है। इस दृष्टि से यह लोक संस्कृति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है क्योंकि यह लोक संस्कृति की विविध विधाओं जैसे लोकगीत, लोक कथा, लोक गाथा और लोक कलाओं के माध्यम से ही अभिव्यक्त भी होता है और अगली पीढ़ियों तक हस्तांतरित भी होता है।

जहां तक परंपरागत ज्ञान और विज्ञान का प्रश्न है लोक संस्कृति उसे व्यक्त करने का माध्यम है। आधुनिक युग में लोक संस्कृति और लोक साहित्य का अध्ययन यूरोप में भी औद्योगिक - महानगरीय व राष्ट्रीय संस्कृति के अस्तित्व में आ जाने के बाद ही प्रारंभ हुआ। सर्वप्रथम लोकवार्ता (Folklore) शब्द का निर्माण और प्रयोग 1846 ईस्वी में विलियम थॉमस द्वारा किया गया था। इससे पहले इस शब्द के लिए लोकप्रिय पुरातत्व सामग्री (Popular Antiquities) या लोकप्रिय साहित्य (Popular Literature) शब्दों का प्रयोग होता था। 1846 ईस्वी में विलियम थॉमस ने 'एथीनियम' नामक पत्रिका में एक पत्र प्रकाशित किया था जिसमें फोकलोर के अंतर्गत रीति, प्रथा, विधि विधान, अंधविश्वास, लोक गाथा तथा लोकोक्ति आदि को सम्मिलित माना था। उन्होंने इस बात पर भी चिंता व्यक्त की थी कि इस सामग्री में जो विशिष्टता है वह प्रायः समाप्त हो रही है और आज भी इस अनंत सामग्री की रक्षा की जा सकती है।¹

इसके पश्चात लोक संस्कृति का अध्ययन ज्ञान के एक विशिष्ट अनुशासन के रूप में हुआ ताकि तथाकथित सभ्य अर्थात् औद्योगिक - महानगरीय सभ्यता की मुख्यधारा से पृथक पड़े दूरस्थ जन समुदायों की व्यापक परंपराओं को जाना जा सके। इसका उद्देश्य था कि इन समुदायों की व्यापक परंपराओं (लोक संस्कृति और लोक साहित्य) को जानकर ही हम उनकी सामाजिक रूढ़ियों, परंपराओं और सामाजिक - आर्थिक जीवन के प्रारूप और उनकी आवश्यकताओं को जान समझ सकते हैं तथा उनकी लोक संस्कृति के व्यापक विश्लेषण के द्वारा उन्हें राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में ला सकते हैं। यह अनायास नहीं कि यूरोप में आधुनिक औद्योगिक महानगरीय सभ्यता और नए-नए राष्ट्रों के उदय के साथ ही 19वीं शताब्दी से लोक संस्कृति के अध्ययन की परंपरा का आरंभ हुआ। यूरोप की भांति भारत में भी लोक संस्कृति और लोक साहित्य के अध्ययन का प्रारंभ आधुनिक काल में अंग्रेजों के भारत आगमन के पश्चात की हुआ। 1784 ई. में सर विलियम जोंस द्वारा रॉयल एशियाटिक सोसायटी की स्थापना और उसके तत्वावधान में भारतीय इतिहास, दर्शन तथा संस्कृति के वैज्ञानिक अनुसंधान का प्रारंभ हुआ। इस क्षेत्र के प्रारंभिक कार्यों में कर्नल जेम्स टॉड का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने राजस्थान की लोक

गाथाओं व अनुश्रुतियों के आधार पर अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'एनल्स एंड एंटीक्विटीज आफ राजस्थान' का प्रकाशन 1829 में किया था जिसमें राजस्थान के लोगों के खानपान, रीति रिवाज, रहन-सहन और परंपराओं के विवेचन के साथ-साथ लोक गाथाओं और अनुश्रुतियों के आधार पर राजस्थान का राजनीतिक इतिहास भी प्रस्तुत किया गया था। कहने का तात्पर्य है कि आधुनिक काल में उपेक्षित पड़े जन समुदायों की लोक संस्कृति के अध्ययन के पीछे एक व्यापक ऐतिहासिक सामाजिक पृष्ठभूमि है। जहां लोक साहित्य और लोक संस्कृति के अध्ययन का प्रारंभ 19वीं शताब्दी से प्रारंभ हुआ, वहीं पारंपरिक ज्ञान के अध्ययन और संरक्षण की आवश्यकता का एहसास बीसवीं सदी के अंत या 21वीं सदी के प्रारंभ में हुआ। इसके पीछे भी प्रभूत सामाजिक - ऐतिहासिक कारण हैं। 15 वीं 16 वीं शताब्दी में यूरोप में प्रारंभ हुए पुनर्जागरण ने जिस प्रबोधन व वैज्ञानिक चेतना की शुरुआत की थी उसी से आधुनिक पश्चिमी विज्ञान का जन्म हुआ जिसने मध्यकालीन सामंतवादी रूढ़ियों, ईश्वर, धर्म और आस्था पर प्रश्नचिन्ह खड़े कर दिए थे और आधुनिक चिंतन को मनुष्य केंद्रित कर दिया। यह तथ्य हुआ कि मध्ययुगीन मन को धार्मिक और तपस्यापरक मूल्यों से प्रस्त मान लिया गया मानो प्रकृति के सौंदर्य तथा ऐहिक क्रियाकलापों के प्रति उसमें संवेदनशीलता ही नहीं।² आधुनिकता को तर्क और विज्ञान से जोड़ा गया। पीटर हैमिल्टन ने स्थापित किया है कि आधुनिकता की सही परिभाषा ज्ञानोदय काल में हुई वैज्ञानिक और वैचारिक क्रांति द्वारा दी जा सकती है। ज्ञान को व्यवस्थित करने का एकमात्र आधार तर्क माना गया और यह तर्क अनुभवजन्य होना चाहिए। ज्ञानोदय और आधुनिकता का मुख्य मुहावरा तर्क है। जब हम यह समझ लेते हैं कि मनुष्य समाज को जानने और समझने का एकमात्र तरीका तर्क है तो विज्ञान कुछ ऐसे सामान्य नियम बना सकता है जो सारी दुनिया और सारे समाजों पर एक समान रूप से लागू हो सकते हैं और इसके द्वारा मानव समाज में उदारता, स्वतंत्रता, समानता और धर्मनिरपेक्षता लाई जा सकती है। आधुनिकता की इस परियोजना ने जिसने आधुनिक विश्व में लगभग एक नए धर्म का स्वरूप ग्रहण कर लिया था। 21वीं सदी आते आते यह आधुनिकता स्वयं ही प्रश्नांकित हो चुकी थी।

उत्तर आधुनिक विचारक जां फ्रैंकोज ल्योतार ने आधुनिकता के ज्ञानोदय सिद्धांत की आलोचना करते हुए कहा कि इसमें कुछ ऐसे गुण तत्व हैं, कुछ ऐसी तार्किकता है जो उच्च वर्गों को निम्न वर्गों के शोषण का अवसर देती है। उन्होंने कहा कि ज्ञानोदय की द्वादात्मकता और तर्क का पतन हो चुका है। तर्क की अति, विज्ञान का बाजार के साथ गठजोड़, सुख और आनंद की अतिभौतिकतावादी व्याख्या, पूरी प्रकृति का मनुष्य के लोभ- लालच के लिए उपभोग आदि आधुनिक तर्काश्रित व्यवस्था के परिणाम हैं। पश्चिमी आधुनिक विज्ञान के एकांगी विकास ने मनुष्य को अपने समय और स्थान से च्युत कर एक उपभोगवादी जानवर में बदल दिया है। जबकि परंपरागत ज्ञान और विज्ञान अपने निश्चित समय और स्थान की उपज है। जहां पश्चिमी आधुनिक विज्ञान परंपरा में मनुष्य प्रकृति का मालिक है, वहीं देशज परंपराओं में मनुष्य प्रकृति का मालिक न होकर प्रकृति का एक अंश मात्र है इसीलिए परंपरागत ज्ञान विज्ञान में पारिस्थितिकी के संरक्षण के साथ सतत विकास की अवधारणा निहित है।

पश्चिमी आधुनिक विज्ञान की एकांगी विचारधारा ने आज मनुष्य के समक्ष जलवायु परिवर्तन, वैश्विक तापमान का बढ़ना, पर्यावरण का विनाश, नई नई वैश्विक बीमारियों का बढ़ता प्रकोप, सामाजिक गैर बराबरी, परमाणु हथियारों की विनाशक होड़, मानव स्वास्थ्य का निरंतर क्षरण और सांस्कृतिक अधःपतन, प्रदूषण जैसी समस्याएं खड़ी कर दी हैं जिन्होंने आज मानव अस्तित्व के साथ साथ पृथ्वी के अस्तित्व पर भी प्रश्नचिह्न खड़ा कर दिया है। आधुनिक पश्चिमी विज्ञान ने इस पृथ्वी की विपुल जैविक और सामाजिक विविधता को एकल समाज, एकल संस्कृति और व्यक्तिवाद को उसकी चरम पराकाष्ठा तक पहुंचा दिया है। इन्हीं समस्याओं से ग्रस्त होकर बीसवीं सदी के उत्तरार्ध और 21 वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही परंपरागत ज्ञान - विज्ञान की विविधतावादी विपुल धरोहर को जानने समझने के प्रयास प्रारंभ हुए हैं। परंपरागत ज्ञान को देशज विज्ञान, स्थानीय ज्ञान आदि नामों की संज्ञा से अभिहित किया जा रहा है।

वर्ल्ड इंटेलिक्चुअल प्रॉपर्टी ऑर्गेनाइजेशन और संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार परंपरागत ज्ञान और परंपरागत सांस्कृतिक अभिव्यक्ति दोनों ही देशज ज्ञान के प्रकार हैं।³ इस प्रकार से कहा जा सकता है कि 19वीं शताब्दी में लोक संस्कृति के अध्ययन का प्रारंभ होना और बीसवीं सदी के उत्तरार्ध और 21वीं सदी के प्रारंभ से परंपरागत ज्ञान विज्ञान का अध्ययन प्रारंभ होने के निश्चित सामाजिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भ हैं जिनके आधार पर ही हम परंपरागत ज्ञान के अध्ययन के उद्देश्यों को परिभाषित कर सकते हैं।

विभिन्न जन समुदायों का परंपरागत ज्ञान वह ज्ञान है जो उनकी लोकभाषा, लोक संस्कृति और लोक वास्तुकला आदि से अभिव्यक्त होता रहा है। इसलिए परंपरागत ज्ञान की अभिव्यक्ति का माध्यम स्थानीय भाषाएं हैं और एक का संरक्षण दूसरे के संरक्षण से अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है। बिना स्थानीय भाषाओं के संरक्षण के परंपरागत ज्ञान के संरक्षण की कल्पना भी नहीं की जा सकती है और आज की दुनिया में स्थानीय भाषाएं बड़ी तेजी के साथ परिदृश्य से विलुप्त होती जा रही हैं।

किसी समय पूरी दुनिया में बोली जाने वाली भाषाओं की संख्या लगभग 15000 के आसपास थी जबकि आज एथनोलाग के 24 वें संस्करण के अनुसार 7139 जीवित भाषाएं रिकॉर्ड की गई हैं जिनमें से 4065 भाषाएं ऐसी हैं जिनमें विकसित लिखित व्यवस्था प्राप्त होती है।⁴ 7000 से अधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से 2900 या 41% आज समाप्त होने के खतरे की सीमा में है। यदि भाषाओं के समाप्त होने की यही दर बनी रही तो आने वाले 100 वर्षों में इनमें से 90% भाषाएं पूरी तरह समाप्त हो जाएंगी। एक शोध के अनुसार केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में ही पिछले 400 वर्षों में लगभग 200 दैसी अमेरिकी भाषाएं समाप्त हुई हैं। आज की स्थिति में 9 भाषाएं प्रतिवर्ष मर रही हैं और इसी दर से 2080 तक 16 भाषाएं प्रति वर्ष समाप्त हो रही होंगी।⁵ यही स्थिति भारतीय उपमहाद्वीप की भाषाओं की भी है।

भारत में पहला भाषा सर्वेक्षण सर जॉर्ज ग्रियर्सन द्वारा 1894 से 1928 तक किया गया था। इसमें 364 भारतीय भाषाओं का विस्तृत सर्वेक्षण हुआ था। इसके 21 खंडों में भारत की 179 भाषाओं और 544 बोलियों का विस्तृत विवरण उपलब्ध है, जबकि भारत में 1961 की जनगणना में 1652 भाषाओं का प्रयोग दर्ज किया गया था और 1971 की जनगणना में 10,000 से कम लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं को सूचीबद्ध न करने का निर्णय लिया गया जिससे भारतीय भाषाओं की संख्या 108 तक सीमित रह गई थी। सर जॉर्ज ग्रियर्सन द्वारा भारत के भाषा सर्वेक्षण के लगभग 100 वर्षों के बाद स्वतंत्र भारत के पहले व्यापक भाषा सर्वेक्षण जो 2010 में पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया के नाम से प्रोफेसर जी.एन. डेवी के नेतृत्व में शुरू हुआ था। इसमें लगभग 3500 स्वयंसेवक,

2000 के आसपास भाषा विशेषज्ञ, सामाजिक इतिहासकार और स्वयंसेवी संस्थाएं शामिल थीं। इस भाषा सर्वेक्षण ने भारत में 780 भाषाओं की पहचान कर 35000 पृष्ठों का सर्वेक्षण 50 खंडों में प्रकाशित किया। भारतीय लोक भाषा सर्वेक्षण ने सभी भारतीय भाषाओं को अपने सर्वेक्षण में शामिल करने की नीति का पालन किया भले ही उपयोगकर्ताओं की संख्या कितनी भी कम क्यों ना हो। उदाहरण के लिए त्रिपुरा में चैमल नामक भाषा केवल 5 लोगों द्वारा बोली जाती है। भारतीय लोक भाषा सर्वेक्षण की इस नीति से भारत में भाषाओं की संख्या लगभग 780 पाई गई है।

भारतवर्ष एक विशाल बहुभाषी, बहु सांस्कृतिक और बहु धार्मिक राष्ट्र है। क्षेत्रफल के विस्तार के साथ साथ इसमें बसे जन समुदायों ने अपनी अपनी भौगोलिक - आर्थिक आवश्यकताओं के अनुरूप अपनी पृथक-पृथक संस्कृतियों का निर्माण किया है। एंथ्रोपॉलजिकल सर्वे ऑफ इंडिया के 1985 से 1995 तक कराए गए पीपल ऑफ इंडिया नाम के विस्तृत सर्वेक्षण में भारतवर्ष में 4635 समुदाय चिन्हित किए गए थे। इस सर्वे की तुलना येल विश्वविद्यालय द्वारा किए गए ह्यूमन रिलेशन एरिया फाइल सर्वे से करें तो हम पाते हैं कि येल वि.वि. के सर्वे में जहां पूरी दुनिया के लगभग 300 समुदायों की संस्कृति का सर्वेक्षण किया गया था, वहीं भारत के पीपल ऑफ इंडिया सर्वेक्षण में येल विश्वविद्यालय के सर्वेक्षण की तुलना में 15 गुना अधिक विविधता पाई गई है।⁶ पीपल ऑफ इंडिया के विशाल दस्तावेज के अनुसार भारत वर्ष में 4635 समुदाय हैं जिनमें 57401 अलग-अलग अस्मिताएं खोजी गई हैं। भाषाओं की दृष्टि से 2549 समुदाय भारोपीय परिवार की, 1032 समुदाय द्रविड़ परिवार की, 175 तिब्बती - बर्मी परिवार की और 44 समुदाय ऑस्ट्रोएशियाटिक परिवार की भाषाएं बोलते हैं। जबकि 5 समुदाय भारतीय-ईरानियन, चार समूह अंडमानी, 15 समुदाय अन्य भाषा परिवारों की भाषा बोलते हैं और 25 समुदाय ऐसी भाषाएं बोलते हैं जो किसी भी भाषा परिवार में वर्गीकृत नहीं हैं। पूरे भारत को 91 पारिस्थितिकीय- सांस्कृतिक क्षेत्रों में बांटा जा सकता है।⁷

इस विपुल परंपरागत ज्ञान व भाषाओं की विविधता पूर्ण धरोहर पर सबसे अधिक संकट 1990- 91 के पश्चात वैश्वीकरण और आर्थिक उदारीकरण की नीतियों से आया है। वैश्वीकरण ने पूरे विश्व को एक वैश्विक गांव में तो जरूर बदल दिया है परंतु उसने ऐसे पर्यावरणीय संकटों को भी जन्म दिया है जो कि मानव जाति के इतिहास में पहली बार एक भयानक आपदा के रूप में सामने आए हैं। भारत में ही दुनिया के सबसे ज्यादा जैव विविधता वाले क्षेत्र हैं। यहां 1,30,000 से ज्यादा वनस्पति और जीव जंतुओं की प्रजातियां हैं। पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के अनुसार इनमें से कम से कम 10% प्रजातियां खतरे की सूची में आ चुकी हैं। अगर ग्लोबल वार्मिंग से 2% भी तापमान बढ़ता है तो भारत की 15% से 40% जंतु व वनस्पति प्रजातियां समाप्त हो जाएंगी। ऐसे ही 2005 में भारत में 1,46,000 टन इलेक्ट्रॉनिक कचरा पैदा हुआ है।⁸ इस प्रकार वैश्वीकरण ने दुनिया को एकरूप बनाया है, क्योंकि उपभोक्तावादी वस्तुएं दुनिया भर में एकरूपता ला रही हैं। लोग एक जैसा उपभोक्तावादी जीवन जी रहे हैं और एक समान उपभोक्तावादी मूल्यों का पालन कर रहे हैं, जिससे भिन्न-भिन्न समुदायों की सांस्कृतिक, जातीय या सामाजिक पहचान खोती जा रही है और दुनिया की विविधता और बहुलता पर एक बड़ा संकट मंडरा रहा है। यही बात भाषाओं के बारे में भी सत्य है। सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ इंडियन लैंग्वेज मैसूर ने माना है कि वैश्वीकरण के दबाव में कई भाषाएं अपने मौखिक साहित्य और संस्कृति से संबंधित शब्दों को खो रही हैं, विशेषतः खाद्य पदार्थ, पोशाक और आभूषण, अनुष्ठान, वनस्पति, जीव जंतु आदि से संबंधित शब्दों को।⁹ 2004 में प्रकाशित एक अनुमान के अनुसार वर्तमान में बोली जाने वाली लगभग 7000 भाषाओं में से 90 फीसदी भाषाएं

2050 तक लुप्त हो चुकी होंगी¹⁰ वास्तव में वैश्वीकरण ग्रीक मिथकों में वर्णित प्रोक्रस्टीज के बिस्तर की तरह है। प्रोक्रस्टीज ग्रीक मिथकों के अनुसार एक दैत्य या राक्षस था, जो वहां से गुजरने वालों को रात गुजारने के लिए अपनी गुफा में आमंत्रित करता था। जहां उसके पास एक लोहे की चारपाई थी, अगर आगंतुक उसकी चारपाई से लंबा होता तो वह उसके पांव काट देता था और यदि आगंतुक छोटा होता तो वह उसके शरीर को खींचकर अपनी चारपाई के साइज का बना देता था। वैश्वीकरण भी अपने मादक - मोहक उपभोक्तावादी जाल में दुनिया को फंसा कर प्रोक्रस्टीज के बेड की तरह पूरी दुनिया को एक ही सांचे और ढांचे में बदल देना चाहता है। वह प्रोक्रस्टीज की तरह दुनिया की सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषाई और जैव विविधता का अंत कर बहुलता और विविधता को पूंजीवाद की एकरूपता में बदलकर विश्व को बाजार में बदलना चाहता है।

वास्तव में भाषा केवल संप्रेषण का ही माध्यम नहीं है बल्कि भाषा जितना हम समझते हैं उससे कहीं अधिक जटिल संरचना है। किसी भाषा का मर जाना या उसके शब्दों का विलुप्त हो जाना उस पूरी ज्ञान परंपरा का समाप्त हो जाना है, जिस ज्ञान परंपरा को उस भाषा के शब्द व्यक्त करते थे। वास्तव में यह विश्व हमारे लिए भाषिक बिंबो के माध्यम से ही प्रकट होता है। सुप्रसिद्ध दार्शनिक और गणितज्ञ लुडविग विंटर्सटीन ने कहा है कि 'हमारी भाषा की सीमा ही हमारे विश्व की सीमा है' क्योंकि विश्व का बोध ही हमारी भाषा पर आधारित है। प्रत्येक भाषा अपनी ज्ञान परंपरा के विशिष्ट विश्वबोध को सामने रखती है। प्रत्येक भाषा और उसके शब्द उसकी सामाजिक, भौगोलिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परंपरा से अर्थ ग्रहण करते हैं। उस भाषा के समाप्त होते ही वह सामाजिक, भौगोलिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परंपरा भी समाप्त हो जाती है। 2004 में हिंद महासागर में आई भयानक सुनामी ने लगभग 2,80,000 लोगों की जान ले ली थी किंतु अंडमान में रहने वाली ओंग, सेन्टलीज, जारवा जैसी ग्रेट अंडमानी जनजातियों ने अपने ज्ञान व बोध से आसन्न खतरे की पूर्व पहचान कर ली थी और वह इस महाविनाश से सुरक्षित रह पाए। जबकि हमारा आधुनिक ज्ञान और विज्ञान तमाम तकनीकी विकास के बावजूद इस खतरे को भांपने में असमर्थ रहा। इस घटना को कई पत्र-पत्रिकाओं ने रिपोर्ट किया था। एक अध्ययन के अनुसार अंडमानी जनजातियों में सुनामी से सबसे अधिक प्रभावित निकोबारी जनजाति हुई जिनकी संख्या लगभग 30,000 है। इनमें से 3,515 निकोबारी सुनामी में मारे गए और यह अन्य अंडमानी जनजातियों की अपेक्षा विकसित दुनिया से अधिक घुले मिले हैं और अन्य शिकारी और खाद्य संग्राहक जनजातियों की अपेक्षा उद्यानिकी और कृषि को अपना चुके हैं तथा अधिकतर अपनी आदिम संस्कृति को छोड़कर ईसाई धर्म अपना चुके हैं।¹¹

क्या इससे यह साबित नहीं होता कि जो प्रकृति के जितने करीब हैं वह प्रकृति के रहस्यों और संकेतों को तथाकथित सभ्य और विकसित समुदायों से बेहतर समझते हैं। इसी प्रकार अंडमान में ही बोली जाने वाली एक भाषा बो की अंतिम वक्ता बोआ की 2010 में मृत्यु होने से बो भाषा की लगभग 65000 वर्ष पुरानी एक ज्ञान परंपरा हमेशा के लिए हमारी पृथ्वी से समाप्त हो गई। अंडमानी भाषाओं पर शोध करने वाली जेएनयू की प्रोफेसर डॉ. अन्विता अब्बी जिन्होंने पचीस सौ शब्दों का अंडमानी भाषाओं - बो, खोरा, सारे और जेरू का शब्दकोश तैयार किया। यह शब्दकोश न केवल भाषा के बारे में बल्कि उन जनजातियों की पारिस्थितिकीय समझ को समझने में भी सहायता करता है। उदाहरण के लिए एक शब्द है- ऐन। बोआ ने उन्हें बताया कि यह छोटी झाड़ियों के लिए जो कि समुद्र के किनारे उगती हैं, उसके लिए बो भाषा का शब्द है। जब ऐन झाड़ियों की पत्तियों को कूट कर पानी में डालते हैं तो वह मछलियों को बेहोश कर देती है और मछलियां पानी की सतह पर ऊपर आ जाती हैं और उन्हें जनजाति के लोग

आसानी से पकड़ लेते थे। बाद के वैज्ञानिक प्रयोगों से यह बात सही साबित हुई कि इस बारे में बोआ की स्मृति बिल्कुल सही थी।¹² कहने का अर्थ यह है कि भाषाओं में ही मनुष्य की स्मृति सुरक्षित है और देशज ज्ञान की विस्तृत और विशाल परंपरा भी। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश और बिहार में पानी के कुओं की तली में जामुन की लकड़ी परंपरागत रूप से डाली जाती है। इस संबंध में परंपरागत ज्ञान यह बताता है कि जामुन की लकड़ी में ऐसे गुण होते हैं कि वह पानी को स्वच्छ और मीठा बनाता है। उत्तराखंड के परंपरागत किसान और पशुपालक जिस लकड़ी के खूंटों से अपने पशुओं को बांधते हैं वह लकड़ी रिखोला के पेड़ की होती है। खूंटों के लिए इसी पेड़ की लकड़ी का प्रयोग क्यों किया जाता है जब यह जानने का प्रयास गांव वालों से किया गया तो बुजुर्गों ने बताया कि रिखोला के पेड़ की लकड़ी जमीन में गाड़ी जाए तो वह वर्षों तक भी सड़ती नहीं है। ऐसे ही पहाड़ों में घराट की भेर्न यानी टरबाइन भी एक ऐसी विशेष पेड़ की लकड़ी से बनाई जाती थी जो निरंतर पानी में रहने के बावजूद सड़ती नहीं है। आज विलुप्त होते जा रहे ऐसे ही परंपरागत ज्ञान और विज्ञान को संरक्षित करने की आवश्यकता है। लेकिन परंपरागत ज्ञान और विज्ञान के संरक्षण और उसके दस्तावेजीकरण के समय हमें परंपरागत ज्ञान - विज्ञान तथा परंपरागत अंधविश्वास और रूढ़ियों के मध्य पहचान के विवेक को बनाए रखना जरूरी है। सार रूप में कहा जा सकता है कि :

1. परंपरागत ज्ञान विज्ञान (Traditional Knowledge System) देशज जन समुदायों की वह ज्ञान परंपरा है जो उनके पारिस्थितिकीय ज्ञान और तकनीक पर आधारित है।
2. आज वैश्वीकरण के कारण यह ज्ञान परंपरा खतरे में है और उसके विलुप्त होने का बड़ा संकट है।
3. यह ज्ञान परंपरा अधिकांशतः स्थानीय भाषाओं में है और मौखिक परंपरा से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती है।
4. पारंपरिक ज्ञान का बचाव इस विश्व की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विविधता का बचाव है।
5. पारंपरिक ज्ञान का दस्तावेजीकरण और संरक्षण बिना स्थानीय भाषाओं के संरक्षण के अधूरा रहेगा। इसलिए इन दोनों को एक साथ देखना और दोनों के एक साथ संरक्षण और दस्तावेजीकरण के प्रयास आवश्यक है।
6. पारंपरिक ज्ञान का मात्र संरक्षण और दस्तावेजीकरण उसे किसी संग्रहालय में रखने के लिए नहीं होना चाहिए बल्कि जब तक उस लोक समाज और संस्कृति को नहीं बचाया जाता, पारंपरिक ज्ञान को बचाना भी संभव नहीं हो सकता क्योंकि
7. परंपरागत ज्ञान अपने निश्चित ऐतिहासिक समय और भूगोल की उपज है इसलिए उस भूगोल को बचाए रखने के लिए ऐसे संवेदनशील पारिस्थितिकीय - सांस्कृतिक क्षेत्रों (Eco sensitive cultural zone) में अनावश्यक हस्तक्षेप ना हो।
8. ऐसे पारिस्थितिकीय - सांस्कृतिक क्षेत्रों में विकास की योजनाएं वहां रहने वाले जन समुदायों की सांस्कृतिक - सामाजिक परंपराओं के साथ समन्वय करके निर्मित और क्रियान्वित की जाएं।

सन्दर्भ सूची -

1. कृष्णदेव उपाध्याय, लोक संस्कृति की रूपरेखा पृष्ठ 2.
2. रॉबर्ट एस. हायट, यूरोप इन द मिडल एज (1957), पृष्ठ 5
3. Janke, TerriSantina Maiko (2018) Indigenous Knowledge: Issues For Protection And Management : Discussion Paper, Page 15
4. <http://www.ethnologue.com>
5. <http://languageconservancy.org>
6. P.C. Joshi, Editor Symposium On People Of India, Page 3.
7. P.C. Joshi, Editor Symposium On People Of India, Page 7.
8. Hindi.indiawaterportal.org
9. The Economic Times 22 July 2014
10. भाषा शोधकर्ता डेविड ग्रेडल का अध्ययन, २२/०३/२०१२ का एन.बी.सी को दिया साक्षात्कार.
11. <http://www.survivalinternational.org>
12. The Hindu, 05 February 2010.

पचपन खंभे लाल दीवारें उपन्यास में अभिव्यक्त स्त्री विमर्श

डॉ. श्रीमाया सी

असिस्टेंट प्रोफेसर

डिपार्टमेंट ऑफ़ हिंदी-पय्यनूर कॉलेज, एडाट, पय्यनूर - 670327

Mob : 9495868174

स्त्री विमर्श का तात्पर्य है स्त्री की चर्चा, स्त्री के प्रति समाज के नज़रिए की चर्चा। यह बहस बहुत दिनों से चल रही थी परंतु आधुनिक युग में आकर स्त्री विमर्श ने कुछ विशेष स्थान ग्रहण कर लिया है। 1975 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने जो "अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष" मनाने का उद्घोष किया, इसको अपने संकल्प के अनुरूप मनाया भी गया। स्त्री जीवन के विविध आयाम सामने आये और विश्व के श्रेष्ठसाहित्यकारों द्वारा इसे अपने लेखन का विषय बनाया गया। परंपरागत साहित्य में 'स्त्री विमर्श' ने अपना नया रूप प्राप्त किया। हिंदी साहित्य जगत में स्त्री पर चर्चा, स्त्री की स्थिति पर चर्चा बहस के रूप में प्रारंभ हुई। अतः स्त्री विमर्श से जुड़ी हर स्त्री मुख्यतः एक ऐक्टिविस्ट ही है।

आधुनिक युग की कथा लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा का नाम अग्रणी है। उषा प्रियंवदा प्रवासी हिंदी साहित्यकार है। हिंदी कथा लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा का अपना अलग महत्व है। उषा प्रियंवदा का जन्म 24 दिसंबर 1930 में कानपुर में हुआ। इनकी आरंभिक शिक्षा भी यही हुई। बचपन से ही साहित्य के प्रति उनका झुकाव था। उषा प्रियंवदा ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए तथा पी.एच.डी की पढ़ाई पूरी करने के बाद दिल्ली के लेडी श्रीराम कॉलेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन किया।

उषा जी के कथा साहित्य में शहरी परिवारों के बड़े ही मार्मिक चित्र हैं और आधुनिक जीवन की उदासी, अकेलेपन, ऊब आदि का अंकन करने में उन्होंने अत्यंत गहरे यथार्थबोध का परिचय दिया है।

प्रमुख कृतियाँ हैं-

कहानी संग्रह- ज़िंदगी और गुलाब के फूल', 'एक कोई दूसरा', 'मेरी प्रिय कहानियाँ'

उपन्यास- 'पचपन खंभे लाल दीवारें', 'रुकोगी नहीं राधिका', 'शेष यात्रा', 'अंतर्वशी', 'भया कबीर उदास', 'नदी'।

उषा प्रियंवदा की गणना हिंदी के उन कथाकारों में होती है, जिन्होंने आधुनिक जीवन की ऊब, छटपटाहट, संत्रास और अकेलेपन की स्थिति को अनुभूति के स्तर पर पहचाना और व्यक्त किया है।

'पचपन खंभे लाल दीवारें' उषा प्रियंवदा का पहला उपन्यास है, जिसमें एक भारतीय नारी की सामाजिक-आर्थिक विवशताओं से जन्मी मानसिक यंत्रणा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण हुआ है। नारी का शोषण हर युग में हर समाज में प्रकारान्तर से होता रहा है, चाहे वह धर्म के द्वारा, समाज और अपने परिवार के द्वारा। आर्थिक विवशताएं इस हद तक नारी को शोषित करती हैं कि आर्थिक स्वावलंबन ही स्वयं के लिए घातक हो जाता है।

उपन्यास की नायिका सुषमा अपने परिवार की सबसे बड़ी और कमाऊ पुत्री है। पिता अशक्त है। अतः पूरे परिवार के पालन-पोषण का भार उसी पर है। वह एक कॉलेज अध्यापिका है। उसमें उत्साह है, जिजीविषा है, उत्कंठा है परंतु परिवार की सुख-सुविधा उसकी प्राथमिकता है। पर सुषमा दायित्वों की दीवारों से घिरी हुई है और इन सबके चलते वह अपने व्यक्तिगत सुख को तिलांजलि दे देती है। छोटे भाई-बहिनों का पालन, शिक्षा और अपने पद की गरिमा उसके जीवन में सुनापन भर देती है। परिणामस्वरूप वह स्वयं को नितांत एकाकी अनुभव करती है। सुषमा दिल्ली विश्वविद्यालय के एक गर्ल्स कॉलेज में लक्चर

सुषमा एक ज़िम्मेदार पद पर है और इस पद से वह स्वयं गौरवान्वित है। "सुषमा ने मेज़ पर रखी पीतल की तख्ती पर फिर एक बार उँगली फेरी। नई चमकती तख्ती पर उसके नाम के अक्षर उभरे हुए सुषमा को अपना नाम अनायास ही बहुत मीठा और संगीतमय लग आया। "नेम प्लेट जड़ दी गई थी मिस ए.ए. शर्मा एम.ए. वार्डन गर्ल्स हॉस्टल। अपने नाम के आगे इतनी बड़ी पूँछ देखकर उसे बड़ा विचित्र सा लगा"।

पद की आनन्दानुभूति का एक कटु पक्ष यह भी है कि वह दायित्वों के चक्रव्यूह से निकल नहीं पाती और अपना विवाह भी नहीं करती। सुषमा का पूरा परिवार आर्थिक रूप से पूरी तरह उस पर आश्रित है और वह हर संभव तरह से उससे लाभ ही लेना चाहते हैं। हर कोई उससे बस अपने ही फायदे की बात करता है। यहाँ तक कि उसकी माँ भी। वह सुषमा के माथे पर सारा कर्ज मढ़कर छोटी बेटी नीरू की शादी करवाती है। लेकिन कभी भी उसकी शादी की बात नहीं करती है। वह भी अपना संसार बसाना चाहती है। पति और बच्चे चाहती है। लेकिन पैसे की लालच में घरवाले उसकी शादी नहीं करना चाहते हैं।

इन्हीं दिनों उसके एकांत और अकेलेपन में कुछ हलचल होती है। उसकी ज़िंदगी में 'नील' का प्रवेश होता है। सुषमा का मन मयूर नाच उठता है, उसके मन एवं शरीर में एक नवीन चेतना का संचार होता है। सुषमा की मौसी ने उसके लिए कढ़ी हुई साड़ियाँ भेजी थी। नील ही उन्हें लेकर आया था।

कौशल्या जी के साथ (सुषमा की मौसी) नील को देखकर उसे मन में हल्का सा विस्मय हुआ। सुषमा की कौशल्या मौसी का परिचित व्यक्ति है - नीला। जब नील दिल्ली पहुँचा, तब सुषमा का पता लगाकर उसके कॉलेज जाकर साड़ियाँ उन्हें देता है। उन दोनों के बीच मुलाकात होती है। नील फिलिप्स में काम करता है।

सुषमा से मुलाकात हो जाने के बाद वह दोनों अक्सर मिलते रहे। धीरे-धीरे नील के मन में सुषमा के लिए अजीब सा एहसास होने लगा। वह सुषमा के साथ बहुत सारा समय बिताने लगा। यह दोनों बहुत सारी बातें आपस में करने लगे। सुषमा की हर बातें, हर व्यवहार नील को पसंद था। धीरे-धीरे नील के मन में सुषमा के साथ सदा वक्त बिताने का मोह पैदा होने लगा। नील उसे अपनी ज़िंदगी का हिस्सा बनाना चाहने लगा। सुषमा का व्यक्तित्व, समझदारी, उत्तरदायित्व, सबके प्रति नील का आदर था।

नील एक ऐसा व्यक्ति था, जो सदा सुषमा को समझने का उसे हर तरीके से जानने का प्रयास करता था। जब भी सुषमा उससे बात करने लगती है तब से नील सुषमा की हर बात से उसको समझने की कोशिश करता रहता है। सुषमा को पूरी तरह समझना चाहता है।

सुषमा का चरित्र एक ऐसी नारी का चरित्र है जो पारिवारिक ज़िम्मेदारियों से इतना घिर गई है कि उस चक्रव्यूह से निकलने के सभी रास्ते बंद हो गए हैं। सुषमा ने भाई-बहिनों के कारण अपने को मिटा दिया। उषा प्रियंवदा जी ने उसको एक ऐसी नारी के रूप में चित्रित किया है जो सक्षम होते हुए भी ओढ़ी हुई ज़िम्मेदारियों के आगे विवश है। उसमें भी जीने की चाह है, वह भी अन्य नारियों की

भाँति अपना घर - संसार चाहती है। परंतु ऐसी विवश है कि वह अपने को किंकर्तव्यविमूढ़ सा पाती है।

नील के जीवन में प्रवेश से सुषमा को प्रसन्नता तो मिली परंतु परंपराओं, आदर्शों में वह इतना विश्वास करती थी कि उससे विवाह नहीं कर सकती थी क्योंकि वह नील से 5 वर्ष बड़ी थी और उसका मानना था कि उम्र का यह अंतराल उसके वैवाहिक जीवन के बिखराव का कारण बन सकता है जबकि नील उससे विवाह करना चाहता था। कॉलेज में दशहरे की छुट्टी के संदर्भ में सुषमा को किसी विशेष कारणवश रुकना पड़ा। वह हॉस्टल में बिल्कुल अकेली थी चौकीदार भी छुट्टी पर गया हुआ था। सांयकाल वह कॉलेज के लॉन में अकेली बैठी थी। अचानक नील वहाँ आता है। बातचीत के बीच चुप बैठी सुषमा को देखकर नील ने कहा- "आप तो चुप बैठी हैं। अपने बारे में कुछ बताइए। मैं आपके बारे में कुछ नहीं जानता सिवा इसके कि आप मुझे बहुत अच्छी लगती हैं"।

अपने को पीड़ा देने की भावना से प्रेरित हो, अपने स्वप्नों को रौंदते हुए सुषमा ने कहा- "उम्र तैंतीस बरस, घर की गरीब, हिंदी की टीचर और कुछ जानना चाहते हैं?" नील की ओर मुँह मोड़ कर सुषमा ने कहा- "प्लीज लीव मी एलोन"

उषा प्रियंवदा जी ने इस उपन्यास के माध्यम से ऐसी नारी का चित्रण किया है, जो कर्म दूसरों के लिए कर रही है और परिवार सुषमा की मनोभावनाओं को बिना समझे उसके पैसे से, उसके त्याग से लाभ उठा रहा है और यहाँ तक कि उसकी माँ भी उसके भविष्य के लिए तनिक भी चिंतित नहीं है।

सुषमा की बहन नीरू को देखने वाले आ रहे हैं। माँ बेटी को लेकर सुषमा के पास अचानक आ जाती है और अपना मतव्य व्यक्त करती है। सबह से तैयारी हो रही है। क्या बाज़ार से आयेगा, क्या घर में बनेगा। नीरू को कौन सी साड़ी पहनाई जाय और माँ ने वह साड़ी नीरू को पहना दी जो नील लाया था। सुषमा इससे आहत गई। माँ से बातचीत होने के बाद सुषमा ने जिद में साड़ी पहनी - अम्मा के बहुत आग्रह पर भी वह न मानी।

"सुषमा ने हाथ बढ़ाकर नीरू को चाय का प्याला पकड़ाया काँपते हुए हाथों से नीरू ने उसे पकड़ना चाहा पर सारी चाय उसकी साड़ी पर जा गिरी और प्याला फर्श पर गिरकर छोटे- छोटे टुकड़ों में बिखर गया। अम्मा सन्न रह गई। नीरू को देखने के लिए आए लोगों को ये सब अच्छा नहीं लगा। अम्मा को निराशा के गहरे गर्त में डालकर वे लोग चले गए। उनका घुटता हुआ क्रोध सुषमा पर निकला।

"तुम्हीं ने साड़ी की बात पर कुहराम मचा कर नीरू का मूड खराब कर दिया। उन्होंने तुम्हें देखकर क्या समझा होगा? हाथ कान खोली, रद्दी सी साड़ी पहन कर बैठ गई। अपना स्टैन्डर्ड भी तो दिखाना था ऐसे मौकों पर लोग माँगकर पहनते हैं, पर तुम कुठन में जो था वह भी नहीं पहना"। सुषमा भी खूब नाराज़ हो गई तुमने मुझे बहुत सारा गहना गढ़ा दिया है न, जो पहन लेती तुमने पहन तो ली थी न भारी - सी जंजीर, बस देख लिया होगा उन लोगों ने। कहते-कहते उसका गला भर आया और उसकी आंखें बड़े-बड़े आँसुओं से भर उठी"।

यहाँ लेखिका ने यह दिखाया है कि पूर्णरूपेण परिवार पर समर्पिता सुषमा से परिवार वाले भी असंतुष्ट है। सुषमा की ईमानदारी को भी अपनी इच्छा पूर्ति के लिए बेच देना चाहती है, उसी की माँ। सुषमा की सुविधा, उसके सम्मान की उसे कोई परवाह नहीं है।

सुषमा एक ऐसे दलदल में फंस चुकी है जहाँ से वह निकल ही नहीं सकती। परिस्थितियों से प्रताड़ित, विवाह सुख में वंचित कुमारी की अंतर्वेदना इस उपन्यास का मुख्य विषय रहा है। सुषमा जीना चाहती है।

नील के सान्निध्य से वह प्रसन्न है। प्रारंभ में तो उसे केवल कुछ क्षण अच्छे बीते, यही लगता था परंतु वह नील से कब जुड़ गई स्वयं नहीं जान पाई। नील उसे प्रिय था। नील को सुषमा तहेदिल से प्रेम करती है परंतु वह अपनी विवशताओं के आगे अपना प्रेम, अपनी खुशियाँ, अपना जीवन सभी को दूसरा स्थान देती है। वह अपने पारिवारिक दायित्वों के वहन में अपने वैयक्तिक भावनाओं और प्रेम की बलि चढ़ा देती है। सुषमा के मानसिक अंतर्द्वन्द्व, कर्तव्य और भावना के संघर्ष, अतृप्ति, अशांति आदि मनोभावों का मनोवैज्ञानिक चित्रण उषा प्रियंवदा जी ने सफलतापूर्वक किया है। इसके साथ हमारे समाज की ओर भी अपना विचार व्यक्त करती है जहाँ कमाऊ पुत्री एक माध्यम बन जाती है जो परिवार का पालन करे।

जिम्मेदार माता- पिता सारा बोझ बेटी या बेटे के कंधों पर डाल दें। इस प्रकार संतान का जीवन स्वयं के लिए अभिशाप बना देते हैं। सुषमा की सहेली मीनाक्षी हर परिस्थिति में उसको सहारा देने में तैयार है। वह मीनाक्षी से कहती है कि वह नील को स्वीकार करने का साहस नहीं रखती। "अपने को कमजोर पाती हूँ.... आज सोलह साल के बाद शायद तुम अपनी बेटी को लेकर इस कॉलेज में आओ, तब भी मुझे यहीं पाओगी कॉलेज के पचपन खंभों की तरह स्थिर अचल"

इस उपन्यास में आधुनिक जीवन की विडंबना के मार्मिक पक्ष का प्रस्तुतीकरण है जो हम नहीं चाहते वही भोगने और करने को विवश हो जाते हैं।

सुषमा रूढ़िवादी नारी है, वह त्यागमयी नारी के रूप में चित्रित है। यहाँ उपन्यास की नायिका सुषमा प्रेम की त्रासदी भी झेल रही है। इसमें परिवार की जिम्मेदारियों का वहन करना उसकी त्रासदी है, विवशता है। उसकी बाध्यता उसे अपनी कामना प्राप्त नहीं करने देती।

संक्षेप में मेरा विचार यह है कि 'पचपन खंभे लाल दीवारों' श्रीमती उषा प्रियंवदा द्वारा लिखा गया एक महिला केंद्रित उपन्यास है। यह उपन्यास एक लड़की के अपने परिवार के लिए किए गए बलिदानों को बेहद मार्मिक रूप में चित्रित करता है। यही नहीं, यह उपन्यास भारतीय महिलाओं के जीवन के अलग-अलग मूढ़ों पर प्रकाश डालता है। छात्रावास के 'पचपन खंभे और लाल दीवारों' उन परिस्थितियों के प्रतीक हैं जिनमें रहकर सुषमा को ऊब तथा घुटन का तीखा एहसास होता है, लेकिन फिर भी वह उससे मुक्त नहीं हो पाती। शायद होना चाहती... सुषमा एक स्वावलंबी और आत्मविश्वासी महिला है। इसके अलावा वह अपने घर की आय का एकमात्र साधन है। पूरे परिवार की जिम्मेदारिया उससे ऊपर है। नए ज़माने की एक स्वावलंबी स्त्री किस तरह समाज से त्रस्त रहती है, पूरी तरह से अत्मनिर्भर होने के बाद भी समाज में वह अपने फैसले खुद नहीं ले सकती। समय बदला, औरतों के रहने का तरीका बदला मगर समाज की सोच नहीं बदली। उपन्यास के अंत में सुषमा परिस्थितियों में ऐसी उलझती है कि पचपन खंभे और लाल दीवारों से बने लड़कियों के हॉस्टल में बंदिनी का जीवन व्यतीत करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. पचपन खंभे लाल दीवारों- उषा प्रियंवदा
2. स्त्री विमर्श का लोकपक्ष - अनामिका
3. समकालीन लेखिकाओं के उपन्यासों में स्त्रीविमर्श - डॉ. महेन्द्र रघुवंशी

आन्तरिक लय की कवयित्री : महादेवी वर्मा

डॉ. सत्य प्रकाश पाल

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी—221005 मो. 8707547595

ईमेल : satya10bhu@gmail.com

महादेवी वर्मा हिन्दी की सर्वाधिक प्रतिभावान कवयित्रियों में से हैं। आधुनिक हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवयित्रियों में से एक होने के कारण इन्हें आधुनिक युग की मीरा भी कहा जाता है। महादेवी जी ने स्वतंत्रता से पहले और बाद का भारत दोनों देखा था। उन्होंने व्यापक समाज के भीतर विद्यमान हाहाकार, रूदन को देखा, परखा और करूणा से भरकर अंधकार को दूर करने वाली दृष्टि देने की कोशिश की। उन्होंने मन की पीड़ा को इतने स्नेह और श्रृंगार से सजाया कि दीपशिखा में भी जन-जन की पीड़ा के रूप में स्थापित हुई और उन्होंने केवल पाठकों को ही नहीं, समीक्षकों को भी गहराई तक प्रभावित किया। जैसे कि मीरा का विद्रोह बहुत दूर तक उनका निजी विद्रोह, अपने ऊपर लगाई गई पाबंदियों से बाहर आने के हेतु किया गया विद्रोह मनोवांछित जीवन जीने की इच्छापूर्ति के लिए किया गया विद्रोह, जिसके तार नारी-पराधीनता तथा उसकी मुक्ति की आकांक्षा से जुड़े हैं। मीरा का विद्रोह बड़ा है उसके वृहत्तर संदर्भ हैं। मीरा ने अपने समय में चली आ रही सामाजिक संरचना पर सवाल उठाए, वे मनचाहा समाज न रच सकीं हो। पराधीनता से नारी को मुक्ति की आकांक्षा को उन्होंने उजागर किया, मुक्ति के सपने को नारी मन में जीवित रखा, उनका इस बिन्दु पर महत्त्व निर्विवाद है।

महादेवी की प्रतिक्रिया भी मीरा की तरह उनके काव्य में मिलती है। महादेवी की प्रतिक्रिया एक नारी की तरह घर की सीमा में ही हुई। परंतु उनकी भी आरंभिक रचनाओं में जो भावुक असंतोष और तीव्र पीड़ा मिलती है, वह अंत तक जाते-जाते बौद्धिक परितोष में शामिल होने लगी। महादेवी को भीतर-भीतर परिक्षीणता का अनुभव होता रहा। ऊपर-ऊपर आनंद और संतोष की फीकी हँसी थी तथा नीचे अपने मन से चुपचाप यही कहती थीं कि

"मधुर-मधुर मेरे दीपक जला।"

उन्हें अपने जलने में ही संतोष का अनुभव होने लगा। उन्होंने समझ लिया कि इसके अतिरिक्त जीवन की अब और कोई गति नहीं है। इसलिए पीछे वे इस जलने की क्रिया में और किसी भी तरह के बाहरी हस्तक्षेप का वरण करने लगीं। जिधर वह जा रही हैं, उधर जाएँ। कोई रोके क्यों? कोई दया क्यों दिखाए? जो होना है वह हो ले—

"यह मंदिर का दीप, इसे नीरव जलने दो।"

महादेवी वर्मा जी की रचनाओं का गहन अध्ययन करने पर देखने को मिलता है कि उनकी कविताओं में, गीतों में, निबंधों में, लेखों में, संस्मरणों एवं कहानियों में भारतीय नारी की व्यथा, मानसिक प्रताड़ना से उपजी मर्यान्तक पीड़ा पग-पग पर देखने को मिलती है। माँ, बहन, बेटी, जीवन-संगिनी के विभिन्न नारी रूपों की कुशल संवाहिका होते हुए भी पुरुष-प्रधान समाज द्वारा उसका आत्म-सम्मान बार-बार आहत होने के ज्वलंत साक्ष्य प्रवल बिंबात्मक चित्रात्मकता से सम्पुक्त, पाषाण हृदयों को भी ब्रवित करने की काव्यात्मक क्षमता से परिपूर्ण संवेदनात्मक शब्दचित्र सहज ही मिल जाते हैं—

**"मैं नीर भरी दुःख की बदली,
स्पंदन में चिर निस्पंद बसा।
क्रंदन में आहत विश्व हंसा,
नयनों में दीपक से जलते ॥"**

महादेवी वर्मा के लिए वेदना केवल नफ़रत का विषय ही नहीं है अपितु वह प्रेम का विषय भी है। अर्थात् जीवन में वेदना का भी उतना ही महत्त्व है जितना आनंद का। इसके बिना वे विस्तृत जग के आंगन को सूना मानती हैं। कई स्थानों पर तो वे प्रेम की पीर में करूणा और वेदना की निस्सीमता का पुल भरकर मिलन का तिरस्कार करती भी दिखाई पड़ती हैं तथा विरह को ही प्रेम-साधनों का एकमात्र सहाय और एकमात्र साधन मानते हुए कहती हैं—

**"क्या अमरों का लोक मिलेगी,
तेरी करूणा का उपहार।
रहने दो हे देव अरे यह,
मेरा मिटने का अधिकार ॥"**

दुःख मार्ग से आने वाले प्रियतम के पथ शूल भी उनको बहुत रुचिकर एवं परमप्रिय हैं—

**"दूर तुमसे हूँ अखंड सुहागिनी भी हूँ,
बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ।"**

—यह कहकर वे विरह में मिलन और मिलन में ही विरह का साक्षात्कार करने लगती हैं। उनका प्रियतम तो 'प्राणों को अंतिम पाहुन' है। उसकी प्रतीक्षा में यह प्रेयसी सुख प्राप्त करती है जो उन्हीं के शब्दों में चिर काम्य है। वे वेदनापरित बिल्कुल भी नहीं होती हैं। उन्हें तनिक सा भी कष्ट नहीं होता है। वे तो प्रतीक्षा के इस अंधकार में विरह-दीपक जलाकर परिष्कार करती हैं—

**"अपने इस सूनपन की,
मैं हूँ रानी मतवाली।
प्राणों का दीप जलाकर,
करती रहती दीवाली ॥"**

महादेवी वर्मा जी अपने अंतमन की टीस, पीड़ा की मार्मिक अथवा विवशता उनकी रचनाओं में देखने को मिलती है—

**"विस्तृत नभ का कोई कोना,
मेरा न कभी अपना होना।
परिचय इतना इतिहास यही,
उमड़ी कल थी मिट आज चली॥"**

महादेवी जी ने छायावादी और रहस्यवादी कवितायें अवश्य लिखीं पर वह मीरा की तरह यथार्थ से कभी नहीं कटी। मीरा तो श्रीकृष्ण की ऐसी प्रेम दीवानी हुई कि उन्होंने अपनी गृहस्थी ही त्याग दी, साधु-संतों के बीच एकतारा लेकर कृष्ण से वियोग और आसक्ति के भजन गाती रहीं, कृष्णमय ही हो गईं परन्तु महादेवी जी अपने सांसारिक उत्तरदायित्वों से कभी विमुख नहीं हुईं। उन्होंने लड़कियों की

शिक्षा पर बहुत ध्यान दिया। महिलाओं को समाज में सही स्थान दिलाने के लिए वे सदैव प्रयत्नशील रहीं। वे स्वतन्त्रता सेनानी भी थी और शिक्षिका भी थी। छायावादी काव्य उनकी विद्या भी, यथार्थ से पलायन नहीं। महादेवी वर्मा जी दृढ़ निश्चयी योद्धा की भांति जीवन संघर्ष करती रहना चाहती हैं। जीवन की इस अनोखी कारा के कोहरे से भरे वातावरण में ही तो परम सत्य की चिदानन्द ज्योति के दर्शन होते हैं, और एक समय तो ऐसा भी आता है जब वे सभी विषमताओं से ऊपर उठकर उस परम सत्य के दिव्य संदेश को जन-जन तक पहुँचा देती है -

**"विरह का युग आज दीखा मिलनी के लघु पल सरीखा,
दुःख-सुख में कौन तीखा, मैं न जानी औ न सीखा।
मधुर मुझकों हो गये सब मधुर प्रिय की भावना लें।"**

महादेवी वर्मा जी की जीवन पथ-यात्रा में पंथ ही इनका साथी है और वेदना की साधनात्मकता, सजगता तथा जीवन के संकल्पों का समन्वय ही उत्साह, साहस और कर्म-प्रेरणा का आवेगमय उन्मेष बनता है। विरह रूपी कमल पुष्प के इस जीवन मूल में जल ही है और नयन पात्र भी इसी से आपूरित है और महादेवी वर्मा जी कहती हैं कि आध्यात्मिक और भावात्मक प्रतीकों का बाहुल्य महादेवी वर्मा की सूक्ष्म और गहन कल्पना शक्ति का तो परिचायक है ही उनकी मनोवैज्ञानिक पकड़ को भी वह स्पष्ट करता है। लौकिक प्रतीकों से वे अलौकिक को व्यक्त कर देती हैं। अपने काव्य संग्रहों के शीर्षक भी महादेवी वर्मा ने प्रतीकात्मक ही रखे हैं। जैसे कि 'नीहार'-नैराश्यपूर्ण वातावरण का प्रतीक है। 'रश्मि' आशा, उल्लास का प्रतीक है। 'नीरजो' सूर्य अर्थात् परमतत्त्व की ओर उन्मुख रहने वाली आत्मा का प्रतीक है। 'सांध्यगीत' साधन के विकास और आस्था का प्रतीक है। तथा 'दीपशिखा' विरह रूपी रात्रि को झेलती एवं साधना प्रारम्भ करती आत्मा का प्रतीक है। उनके 'दीपक' प्रतीक से जलन, पीड़ा, वेदना का अर्थ मात्र ही स्पष्ट नहीं होता अपितु स्वयं जलकर संसार को प्रकाशवान बना देने का अर्थ भी प्रसारित होता है और उन्होंने करुणा एवं वेदना को दूसरे ढंग से परिभाषित किया—

**"मधुर-मधुर मेरे दीपक जल
युग-युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल
प्रियतम का पथ आलोकित कर
विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात।
वेदना में कर जन्म करुणा में मिला आवास
अश्रु चुनता दिवस इसका अश्रु गिनती रात।।"**

महादेवी के गीतों में जीवन रूपी नदी के सुख, दुःख रूपी दो किनारों के बीच निरंतर बहते हुए परम आनंद के महासागर में मिल जाने का आभास होता है। संयोग और वियोग में दुख और आनंद का जो अनूठा सत्य है वह इस संवेदनशील मानव हृदय को इस संसार के अविच्छिन्न को न छोड़ने का हठ 'शाश्वत पिपासा' बनाए रखता है। महादेवी वर्मा ने जीवन के इसी गढ़ तथा गहन रहस्य से वेदना के आनंद में साक्षात्कार किया तथा उसे काव्य संसार के पावन बंधनों में जकड़ दिया और कहती हैं कि—

**"चिर मिलन-विरह-पुलिनों की सरिता हो मेरा जीवन
।
प्रतिफल होता रहता हो युग फूलों का आलिंगन ॥"**

अंततः कह जा सकता है कि महादेवी वर्मा जी की वेदना में निराशा के तो कहीं दर्शन होते ही नहीं, आशावादिता ही सर्वत्र दिखायी पड़ती है। यही आशावादिता ही प्रिय से मिलने की आतुरता को और अधिक बढ़ाती है तथा उस आतुरता से आनंद की अनुभूति कराती है। महादेवी जी अपनी वेदना और दुःख के अंतस में भी सर्वजन के सुख का अनुभव करती हैं। महादेवी वर्मा जी वेदना की प्रतिमूर्ति हैं और आधुनिक 'मोरा' भी।

डॉ. शिवप्रसाद सिंह के उपन्यास 'औरत' में ग्राम-चित्रण

डॉ. पी. एम. आर. जयंती,

व्याख्याता - हिन्दी

एस.के.आर. गवर्नमेंट डिग्री कॉलेज फॉर वुमेन (ए), नागराजुपेट, (कडप्पा)

सारांश- डा. शिवप्रसाद सिंह आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं, जिनका कथा-सृजन मुख्यतः ग्रामीण जीवन और उसके यथार्थ पर केंद्रित है। उनके उपन्यासों में सामाजिक विषमता, शोषण, बेरोजगारी, स्त्री की विवशता और संघर्ष का मार्मिक चित्रण मिलता है। 'औरत' उपन्यास (1992) विशेष रूप से ग्रामीण नारी-जीवन की पीड़ा का दस्तावेज है। इसमें नायिका सोनवां सहित कई महिला पात्रों के माध्यम से स्त्री पर होने वाले शोषण, अत्याचार और सामाजिक रूढ़ियों का उद्घाटन किया गया है। सोनवां का जीवन जर्मींदारी अत्याचार का शिकार होकर त्रासद अंत पाता है, वहीं प्रतिभा बंसल, चंद्रा, रूपवां और सुखिया जैसे पात्र स्त्री की अलग-अलग स्थितियों और संघर्षों को सामने लाते हैं। 'औरत' का नामकरण अत्यंत सार्थक है क्योंकि इसमें स्त्री के विविध रूपों—शोषिता, संघर्षशील और आत्मनिर्भर—का यथार्थ अंकन किया गया है। इस प्रकार यह उपन्यास न केवल ग्रामीण महिला जीवन का चित्र प्रस्तुत करता है बल्कि समाज सुधार और नारी-जागरण का सशक्त संदेश भी देता है।

बीज वाक्य- डा. शिवप्रसाद सिंह का उपन्यास 'औरत' ग्रामीण नारी-जीवन की विवशता, संघर्ष और यथार्थ का जीवंत दस्तावेज है।

डा. शिवप्रसाद सिंह आधुनिक हिन्दी साहित्य के एक प्रतिष्ठित और सशक्त साहित्यकार हैं। उनके कथा-सृजन का मूल क्षेत्र ग्रामीण जीवन है। गौरव-प्राप्त साहित्यकार डॉ. शिवप्रसाद सिंह का जन्म 19 अगस्त 1928 ई. को उत्तर प्रदेश के काशीनगर स्थित जलालपुर गाँव में एक मध्यमवर्गीय कृषक परिवार में हुआ। इनके पिताजी का नाम श्री चंद्रिका प्रसाद सिंह तथा माताजी का नाम श्रीमती कुमारी देवी था। आप परिवार के ज्येष्ठ पुत्र थे।

शैक्षणिक उपलब्धियों में भी डॉ. सिंह ने उल्लेखनीय सफलता अर्जित की। उन्होंने सन 1947 में हाई स्कूल प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया। तत्पश्चात् 1951 में काशी हिन्द विश्वविद्यालय से बी.ए. द्वितीय श्रेणी में तथा 1953 में एम.ए. प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया। आगे चलकर 1957 में उन्होंने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

आपको काशी हिन्द विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक पद पर नियुक्त किया गया और वर्ष 1967 में आप रीडर के पद पर आसीन हुए।

डॉ. शिवप्रसाद सिंह के कृतित्व में ग्रामीण चित्रण- डॉ. शिवप्रसाद सिंह पचासोत्तर हिन्दी साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर हैं। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार हैं। 'कर्मनाशा की हार' सन् 1958 में प्रकाशित हुआ। इसमें गाँव के दीनहीन और निम्न वर्गों का जर्मींदारी वर्ग द्वारा किया गया शोषण का सजीव चित्रण मिलता है।

'इन्हें भी इंतजार है' 1961 में प्रकाशित हुआ। इसमें भारतीय अभिशास नारी का मार्मिक चित्रण है। 'मुरदासराय' 1966 में प्रकाशित हुआ। इसमें समाज और व्यक्ति के बीच का संघर्ष, प्रेम-संबंधों की टूटन, हिन्द-मुसलमान सम्प्रदायों की एकता, समाज की निम्नवर्गीय नारियों का शोषण, बेरोजगारी, आर्थिक और पारिवारिक संबंधों का सहज एवं सजीव चित्रण मिलता है। 'अंधेरा हँसता है' 1975 में प्रकाशित हुआ। इसमें आम आदमी की जिन्दगी का चित्रण बहुत ही सफलतापूर्वक किया गया है।

सन् 1977 में प्रकाशित 'भेड़िए' में नग्न जमींदारी वर्ग के शोषण तथा नारी-शोषण का मर्मस्पर्शी चित्रण मिलता है। डॉ. शिवप्रसाद सिंह का पहला उपन्यास सन् 1967 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास विभिन्न ग्रामीण समस्याओं का दस्तावेज होने के कारण ग्रामात्मा की खोज भी कहा गया। 'अलग-अलग वैतरणी' अपने नाम के अनुरूप समाज के विभिन्न वर्गों की चेतना तथा गाँव की त्रासदी का व्यापक चित्रण प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास चिर-आदिम और स्वतंत्रकारी नगर की संस्कृति को केंद्र में रखकर लिखा गया है। 'औरत' उपन्यास 'औरत' उपन्यास सन् 1992 में प्रकाशित हुआ। यह मूलतः नारी-प्रधान उपन्यास है। इसमें ग्रामीण नारियों पर होने वाले विभिन्न अत्याचारों का सजीव चित्रण किया गया है। सचमुच यह उपन्यास ग्रामीण नारियों के जीवन का दस्तावेज है।

हिन्दी उपन्यासों में ग्रामीण महिला की परंपरा-नागार्जुन का उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' सन् 1948 में प्रकाशित हुआ था। इसमें विधवा नारी की विवशता, मन की व्यथा तथा अनमेल विवाह के विपरीत परिणामों का सजीव चित्रण मिलता है।

'नई पौध' का प्रकाशन सन् 1953 में हुआ था। इसमें समाज की कृप्राओं का विनाश तथा प्राचीन और नवीन मूल्यों का संघर्ष चित्रित है।

फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास 'मैला आँचल' में धर्म की आड़ में साधु-सन्यासियों द्वारा किए जाने वाले अनैतिक कार्यों का भंडाफोड़ किया गया है तथा ग्रामीण समस्याओं का यथार्थ अंकन मिलता है। रेणु का ही उपन्यास 'परती परिकथा' ग्रामीण समाज के वर्ग-संघर्ष और जीवन बाबू व ताजमनी की प्रेमकहानी का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करता है।

भैरवप्रसाद गुप्त के उपन्यास 'सत्ती मैया चौरा' में धन की शोषण-शक्ति, स्त्रियों की असहायता और सामंती व्यवस्था का चित्रण किया गया है।

रांगेय राघव के उपन्यास 'कब तक पुकारूँ' में युगों से पीड़ित, उपेक्षित एवं शोषित निम्न वर्गीय मानव-मन की करुण पुकार अभिव्यक्त हुई है।

'जल टूटता हुआ' उपन्यास में मिश्र जी ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्रण किया है।

ग्रामीण महिला और उसका परिवेश-भारत गाँवों का देश है। गाँव भारतीय समाज की केंद्रीय इकाई है। आज भी देश की लगभग **80.9% जनसंख्या गाँवों में निवास करती है।** ग्रामीण समुदाय और नारी एक-दूसरे के आश्रित एवं पूरक रहे हैं। नारी ग्रामीण समाज की महत्वपूर्ण इकाई है। नारी-जीवन में परिवार का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। गाँवों में महिलाएँ श्रम करती हैं, परंतु उनके श्रम के बदले उन्हें उचित मजदूरी नहीं मिलती, जिससे उनके भीतर असंतोष की भावना व्याप्त रहती है।

कृषि-आधारित जीवन ग्रामीण महिला की प्रमुख विशेषता है। शिक्षा नारी-जीवन का आवश्यक अंग है, क्योंकि यह नारी को पूर्णता प्रदान कर उसके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करती है। नारी शिक्षा गाँवों में विद्यमान बुराइयों, बीमारियों, बेरोजगारी और गंदगी से मुक्ति दिलाकर सामाजिक सुरक्षा प्रदान करती है। महिलाओं की **सुदृढ़ता एवं स्वावलंबन** पर ही देश का भविष्य निर्भर है। लेकिन गाँवों में विद्यमान निराशा एवं पलायन की प्रवृत्ति यह सोचने के लिए बाध्य करती है कि ग्रामीण महिला का भविष्य क्या होगा? क्या ग्रामीण महिला इसी प्रकार निराशा और मायूसी से ग्रसित होकर टूटती रहेगी? **डा. शिवप्रसाद सिंह के उपन्यास 'औरत' की कथा वस्तु :** उपन्यास का प्रारंभ शिवेंद्र और प्रेमस्वरूप के बार्तालाप से होता है। उपन्यास की नायिका सोनवां शिवेंद्र की बचपन की साथी थी और दोनों एक दूसरे से प्यार करते थे। शिवेंद्र पढ़ने के लिए शहर चला जाता है।

सोनवां रोपनी वाली मजूरियों को मों के बराबर मजदूरी दिलाने के लिए जो भूख- हडताल करती है उससे डरकर गाँव के मुखिया, जमींदार सुवर्णराय ने सोनवां को गोद लेने की बात कहता है। उसे अपने घर ले जाता है और उसके साथ बलात्कार करता है। फलतः वह गर्भवती हो जाती है। पूरे गाँव के लोग यही मानते हैं कि उसके पेट में जो -बच्चा है वह शिवेंद्र का है। सोनवां का भाई शोभुनाथ उस बच्चे को सुवर्णराय का जानकर उससे घृणा करने लगता है। सोनवां दखी होकर जहर खाकर सारा मामला शिवेंद्र से कहती है और उसी के गोद में मर भी जाती है। सानवा के अतिरिक्त उपन्यास में अनेक महिला पात्र हैं जिनमें पुलिस अफसर प्रतिभा बंसल उल्लेखनीय है। उसने एक युवक से प्रेम किया, परंतु युवक का मानना था कि घर से बाहर काम करने वाली हर लड़की चरित्रहीन होती है। इसी कारण उसने प्रतिभा से विवाह नहीं किया। जबकि आज के परिवेश में स्त्री और पुरुष दोनों के नौकरी करने से ही परिवार सुखपूर्वक जीवन बिता सकते हैं।

उपन्यास में सुखिया चमारिन पर सुदर्शन तिवारी अत्याचार करता है। इस पर पुलिस अफसर प्रतिभा बंसल कहती है कि गरीब की गाय को सब दूहना चाहते हैं और कमजोर को सभी सताते हैं। ग्रामीण नारी अशिक्षित और भोली होती है, इसलिए जितने भी अन्याय और अत्याचार होते हैं, वे प्रायः उन्हीं के साथ घटित होते हैं। अतः उन्हें भी पढ़-लिखकर सभ्य होना आवश्यक है और अपनी रक्षा करना सीख लेना चाहिए।

एक अन्य पात्र चंद्रा, बी.ए. पास करने के पश्चात नौकरी करना चाहती है, परंतु नौकरी नहीं कर पाती। उस समय के समाज में उच्चवर्गों की बहुओं का घर से बाहर जाना परंपरा के विरुद्ध माना जाता था। साथ ही वह विधवा भी है, और विधवा का नौकरी करना, बाहर जाना, लोगों से मिलना निषिद्ध समझा जाता था। इस प्रकार उपन्यास के बहुत कम पात्र ही शिक्षित हैं और नौकरी में लगे हैं। इनके अलावा अन्य पात्र जैसे—रोशन, सुखिया चमारिन, रुपवां तेतरी, जिरवा आदि अशिक्षित हैं और उनकी अज्ञानता के कारण उनका शोषण किया जाता है। **'औरत' नामकरण की सार्थकता-संसार** की हर एक वस्तु किसी न किसी नाम विशेष से विभूषित होती है, होनी भी चाहिए। नाम से आकर्षित होकर ही पाठक उपन्यास को पढ़ने के लिए उत्सुक होते हैं। समीक्ष्य उपन्यास 'औरत' अपने आप में एक सार्थक नामकरण का वाहक है। उपन्यास 'औरत' में नारी जीवन के अनेक उतार-चढ़ावों का मार्मिक चित्रण मिलता है और एक स्पष्ट चित्र हमारे सामने उभरकर आता है। उपन्यास के प्रारंभ में सोनवां आर्थिक विषमता के कारण सुवर्ण राय को अपना धर्मपिता मान लेती है, किंतु वह उससे बलात्कार करके उसे अपनी रखैल बना लेता है। फलस्वरूप वह गर्भवती हो जाती है और अंततः जहर खाकर मर जाती है।

रूपवां समाजहित के कार्यों में निरंतर संलग्न रहती है और उसी में अपने प्राणों का बलिदान कर देती है। रोशन उस समय की प्रतीक बनकर सामने आती है और चंद्रा आधुनिक महिला का प्रतिरूप मानी जा सकती है। इस प्रकार, शिवप्रसाद सिंह ने अपने उपन्यास में नारी को विविध रूपों और भूमिकाओं में चित्रित कर उसके जीवन को उभारने का प्रयास किया है। कथा-संगठन, संदेश और शिल्प की दृष्टियों से विवेच्य उपन्यास एक सशक्त कृति सिद्ध होती है।

संदर्भ

1. सिंह, शिवप्रसाद. औरत. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण।
2. मिश्र, नामवर. हिंदी उपन्यास और समाज. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन, 1980।
3. सिंह, रामविलास. हिंदी साहित्य का इतिहास. दिल्ली: ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1992।
4. तिवारी, मृदुला. हिंदी उपन्यासों में नारी-चित्रण. वाराणसी: साहित्य भवन, 2001।

स्त्री मन की व्यथा : 'लगता नहीं है दिल मेरा'

डॉ. खुशबू

सहायक प्राध्यापक

हिंदी विभाग गंगा देवी महिला महाविद्यालय

पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना। Khushi28914@gmail.com Mob-9968746826

शोध सार- कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा 'लगता नहीं है दिल मेरा' पितृसत्तात्मक समाज में जीती ऐसी नारी का दस्तावेज है, जिसमें लेखिका ने व्यक्तिगत प्रसंगों को साहस के साथ वर्णन करने का प्रयास किया है। आत्मकथा के प्रारंभ में वह लिखती हैं मेरा बयान नंगा रहे, एकदम प्राकृतिक... साफ! अहसासों की परतें कुछ इस तरह उधरती जाएं कि उनकी बारीक रेखाएं भी पढ़त से बाहर न रहें। जीवन भर लू-लपेटों के थपेड़े झेलने के बावजूद आत्मा निश्चित ही इन सबसे प्रभावित नहीं होती... मैं मुक्त मन से उसके सामने अपनी बात को विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत कर सकती हूँ। जीवन भर के थपेड़ों को झेलते हुए लेखिका ने परत दर परत कई ऐसे पहलुओं को सामने रखने का प्रयास किया है जिसे पाठक सोच भी नहीं सकता है। कुछ व्यक्तियों के लिए यह एक स्त्री के संघर्ष की गाथा लगेगी तो कुछ के लिए अवैध संबंधों का आख्यान। अपने लेखन के माध्यम से लेखिका ने स्वानुभूति की पीड़ा को व्यक्त करने के लिए आत्मकथा का सहारा लिया है। स्व-विश्लेषण के अंतर्गत उन्होंने पितृसत्तात्मक समाज की विपरीत परिस्थितियों का सामना कर अनेक अप्रकट तत्वों को प्रकाश में लाने का कार्य किया है। इस आलेख में उनकी आत्मकथा में अभिव्यक्त स्त्री-पुरुष संबंधों पर विचार किया गया है।

बीज शब्द- आत्मकथा, संघर्ष, स्त्री, पीड़ा, पुरुष, कृष्णा अग्निहोत्री, स्त्री-पुरुष सम्बन्ध, मनोविज्ञान, पितृसत्ता, मन, चरित्र।

महिलाओं के लिए आत्मकथा की रचना किसी बड़ी चुनौती से कम नहीं है। उन्हें हमेशा समाज में दायम दर्जे की स्थिति से गुजरना पड़ा है। स्त्री आत्मकथाओं में सिर्फ लेखिकाओं के निजी जीवन का ब्यौरा मात्र नहीं है, बल्कि ये नारी के मनोविज्ञान को समझने में भी सहायक होते हैं। अपनी आत्मकथाओं के माध्यम से नारियों ने सदियों से चली आ रही मौन को तोड़ा है तथा अपनी खामोशी को गहरे मानवीय अर्थ प्रदान किए हैं।

कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा अभी तक दो भागों में प्रकाशित हो चुकी है। उनकी आत्मकथा का प्रथम भाग 'लगता नहीं है दिल मेरा' का प्रकाशन सन् 1997 में हुआ। उसके बाद उनकी आत्मकथा के दूसरे भाग का प्रकाशन सन् 2010 में हुआ। कृष्णा अग्निहोत्री को लेखन के क्षेत्र में अपनी आत्मकथा के कारण विशेष ख्याति प्राप्त हुई है। अपने जीवन के अच्छे-बुरे अनुभवों को उन्होंने अपनी आत्मकथा में बड़े साहस के साथ व्यक्त किया है। कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा 'लगता नहीं है दिल मेरा' शीर्षक से ज्ञात होता है कि वह इस भव रूपी संसार से पार उतरना चाहती हैं। लेखिका ने सदैव दूसरों पर विश्वास किया और दूसरों ने इनके सीधे पन की धज्जियां उड़ा दीं। अपने जीवन में लेखिका पग-पग पर धोखा खायी हैं और पूर्णतः टूट चुकी हैं। डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र जी का मानना है कि, "लगता नहीं है दिल मेरा वही कह सकता है कि जिसकी जिन्दगी और परिवेश उजड़े दयार सी हो गयी हो।" अपनी आत्मकथा के प्रथम भाग में लेखिका ने अपने जीवन के आत्म संघर्ष को दिखाया है। वे अपनी आत्मकथा में लिखती हैं- "मेरा बयान नंगा रहे... एकदम प्राकृतिक... साफ! अहसासों की परतें कुछ इस तरह उधरती जायें कि उनकी बारीक रेखाएं भी पढ़त से बाहर न रहें। जीवन- भर लू-लपेटों के थपेड़े झेलने के बावजूद आत्मा निश्चित ही इन सबसे प्रभावित नहीं होती... मैं मुक्त मन से उसके सामने अपनी बात को विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत कर सकती हूँ।" एक स्त्री होने के नाते उन्हें किस प्रकार के दुःख झेलने पड़ते हैं,

इस बात की जानकारी उनकी आत्मकथा के प्रथम भाग से मिलती है। कृष्णा जी का विवाह 16 वर्ष की आयु में हुआ। मैट्रिक पास कृष्णा के पति सत्यदेव अग्निहोत्री आई.पी.एस थे, उनके पति को शराब, जुआ और परस्त्री गमिता की बुरी आदत थी। पति के निरर्थक आरोप लेखिका को विचलित कर देते हैं और पति द्वारा शक किये जाने पर वह उन्हें छोड़ना चाहती हैं। अपने विवाह-पूर्व प्रेम को स्वीकार करने के कारण लेखिका को हमेशा सत्यदेव अग्निहोत्री की नफरत का शिकार होना पड़ता था। शादी के पूर्व के रिश्ते को स्वीकार करने के बाद उनके पति की जो प्रतिक्रिया थी, उसके लिए लेखिका ने लिखा है कि "तुम सब ने मेरे गले कुलटा बाँध दी, ये किसी और से प्यार करती है।" लेखिका के इस कथन से भारतीय समाज में स्त्रियों की उस स्थिति का पता चलता है जहाँ विवाह-पूर्व प्रेम करने की कोई स्वतंत्रता नहीं होती है। लेखिका इस स्थान पर जैनेन्द्र के उपन्यास 'त्यागपत्र' की 'मृणाल' के समान लगती हैं। शादी से पूर्व के अपने संबंधों को स्वीकार करने के कारण जिस प्रकार मृणाल का जीवन नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार कृष्णा अग्निहोत्री का जीवन भी विषम परिस्थितियों में चला जाता है। कृष्णा अग्निहोत्री का पति उन पर अत्याचार करता रहा। लेखिका का पति के साथ कभी अच्छा सम्बन्ध नहीं रहा। वह खुद तो महिलाओं से अनैतिक व अवैध संबंध स्थापित करता है, पर पत्नी को हमेशा लांछित, अपमानित और प्रताड़ित करते हुए उसे भोगने में विश्वास करता है। इस तरह कृष्णा जी का वैवाहिक जीवन कभी सुखी नहीं रहा। उनके पति उनको मारते- पीटते थे और जानवरों जैसा व्यवहार करते थे। इससे हम समझ सकते हैं कि सत्यदेव जैसे पढ़े-लिखे उच्च पद पर आसीन पुरुष भी स्त्री के प्रति दुराग्रह पूर्ण भावना रखता है और अपनी पत्नी को प्रताड़ित करने से भी गुरेज नहीं बरतता।

कृष्णा अग्निहोत्री ने तीन शादियाँ कीं। फिर भी उनको एक खुशहाल परिवार प्राप्त नहीं हो सका। सत्यदेव अग्निहोत्री के बाद लेखिका के जीवन में श्रीकांत जोग का आगमन हुआ जो जज थे। अपने पहले पति से निराशा होने के पश्चात्, दूसरे पति से उनकी जो आशाएं थीं वह भी पूरी नहीं हुयी, वहां भी उन्हें निरौशा ही हाथ लगी। वे लिखती हैं कि पदोन्नति होते ही उनके तेवर बदल गये और घमंड में चूर होकर लेखिका को अपमानित और लांछित करने लगे। लेखिका ने अपनी साहित्यिक प्रतिभा से समझौता करके अपनी कहानियों को दूसरे पति श्रीकांत के नाम से छपने दिया। फिर भी उनके परिवार का साथ उनको प्राप्त नहीं हुआ। वे लिखती हैं कि "मैं समाज व अपने दूसरे विवाह को लेकर इतनी सजग थी कि जहाँ तक हो सके मैं निर्वाह आँगे होकर कर रही थी... अब वे भूल ही गए थे कि पत्नी कितने संघर्ष से लिखती है और स्वयं ही लेखक बनने के गलत तरीके अपनाने लगे।" लेखन कार्य के लिए लेखिका को हर स्तर पर संघर्ष करना पड़ा। इस बात का पता उनकी आत्मकथा से चलता है। पहले तो उनके दूसरे पति श्रीकांत ही उनके लिखे को अपने नाम से छपवाते थे। उसके बाद लेखिका को प्रकाशकों से भी अपनी रचनाओं को छपवाने के लिए एक प्रकार का संघर्ष करना पड़ा। प्रकाशकों की गलत दृष्टि हमेशा उनके लेखन कार्य को मुश्किल बनाती रही। लेखिका एक स्थान पर अपनी आत्मकथा में लिखती हैं कि "लेखिका होना इतना दुर्भाग्यपूर्ण कार्य नहीं है कि कोई छपने के लिए आपसे गलत रिश्तों की मांग करे।"

उनकी निज की पीड़ा न होकर समुची स्त्री जाति की पीड़ा है। लेखक, प्रकाशक और संपादक छपने जैसे एक सामान्य से कार्य के लिए प्रकाशक का लेखिका को गलत दृष्टि से देखना एक उदाहरण भर है कि स्त्री लेखक को उसके लेखन से नहीं बल्कि उसके देह से देखा जाता रहा है। लेखिका का यह कथन की दुनिया को उन्होंने बड़े नजदीक से देखा। एक अकेली स्त्री किस तरह विभिन्न पुरुषों द्वारा असुरक्षित महसूस करायी जाती हैं इसका उजागर आत्मकथा में उन्होंने किया है। ऐसी विषम परिस्थितियों के बीच भी लेखिका को सुखद अंत की आशा है। जो लेखन के प्रति उनके समर्पण को दिखाता है। वे लिखती हैं कि “मंजुल की रुखाई...नीहार की अपनी व्यस्तता, वैदेही की नई जिन्दगी के कारण मैं इस उम्र में बहुत अकेली पड़ आई। मैंने तो जिन्दगी भर मित्रों, रिश्तों से जब तक बना समझौता ही किया है। एक सीमा के बाद यह समझौता पीड़ा, अभाव बनकर अंतर में दावागिनि पैदा करता आ रहा है...मैं फिर भी आशाओं के जाल बुनती रहूंगी, लेखन के नए मोड़ों पर उड़ती धोखे व विश्वासघात से बहते रक्त को नई अभिव्यक्ति दे दूंगी, शायद मेरे कथानकों का अंत कभी सुखद हो जाए।”⁶

कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा ‘लगता नहीं है दिल मेरा’ एक स्त्री के संघर्षों की कहानी है, जहाँ वह बार-बार छली जाती है। यह पितृसत्तात्मक समाज में जीती ऐसी नारी का दस्तावेज है, जिसमें लेखिका ने व्यक्तिगत प्रसंगों को साहस के साथ वर्णन करने का प्रयास किया है। आत्मकथा के प्रारंभ में वह लिखती हैं कि जीवन भर के थपेड़ों को झेलते हुए परत दर परत कई ऐसे पहलुओं को सामने रखने का प्रयास किया है जिसे पाठक सोच भी नहीं सकता है। कुछ व्यक्तियों के लिए यह एक स्त्री के संघर्ष की गाथा लगेगी तो कुछ के लिए अवैध संबंधों का आख्यान।

अपने लेखन के माध्यम से लेखिका ने स्वानुभूति की पीड़ा को व्यक्त करने के लिए आत्मकथा का सहारा लिया है। स्व-विश्लेषण के अंतर्गत उन्होंने पितृसत्तात्मक समाज की विपरीत परिस्थितियों का सामना कर अनेक अप्रकट तत्वों को प्रकाश में लाने का कार्य किया है। बचपन से ही उन्होंने पुरुषवादी मानसिकता को समझने का प्रयास किया। उनकी इस आत्मकथा कथा में घटनाओं का क्रमबद्ध रूप विखंडित कर नजर आता है। क्योंकि कुछ प्रसंग जिन्हें पहले आना था, उनका वर्णन बाद में आता है। इस अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने बहुत ही खतरे उठाए हैं। जो भी हो आत्म कथाकार के साहस की दाद देनी होगी कि उसने अपनी जिंदगी के स्याह उजले पन्नों को उलटने की हिम्मत जुटाई। यह कोई मामूली बात नहीं। इसमें अनेक खतरे निहित हैं, लेकिन कृष्णा जी ने ये खतरे उठाए। इस जोखिम की कड़ी में उन्होंने प्रथम पति, द्वितीय पति, पिता, भाई एवं अनेक साहित्यकारों की प्रतिक्रियाओं का वर्णन किया है। पुरुष की वासना दृष्टि के कारण नारी योनि सदैव खतरे में ही रही। कृष्णा अग्निहोत्री इसकी ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कहती है – “लड़की का कोमल बचपन भी क्या पुरुषों से सहन नहीं होता, वो उसे भी अपने गंदे सुख हेतु चीर देने को आतुर रहता है।”⁷ लाल कुंवर नाम के पुलिस कांस्टेबल पर कृष्णा के घरवाले भरोसा करते हैं। बच्चे भी उसे लालू मामा कहकर उससे कहानियाँ सुनाने का अनुरोध करते हैं, वह छोटी लड़कियों के साथ गंदी हरकतें करता है। कृष्णा जी बचपन की यादें सुनाते हुए कहती हैं- “लाल कुंवर की नीयत ठीक नहीं थी। वह दूध पिलाकर हमें सुला देते हैं और हमारे हाथों में अपने गुप्तांग को पकड़ा देता। एक बार अर्धनद्रा में मैंने उसे झटक दिया जब उसने शकुंतला को दूसरे कमरे में ले जाकर कुछ करना चाहा...वो चिल्लाई, मैंने लाल कुंवर को उस पर झुका देखा तो लालकुंवर के बाल पकड़कर खींचना शुरू कर दिया और चिल्लाई।”⁸ ‘भ’ नामक उनका एक रिश्तेदार कृष्णा को तंग कर उसके साथ नाजायज रिश्ता बनाने की कोशिश करता है। वह एकांत पाते ही, कृष्णा को आलिंगन बद्ध करता है। कृष्णा जी ने अपनी आत्मकथा में रिश्तेदारों, परिचितों, नौकरों द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों को चित्रित करते हुए

स्पष्ट किया है कि नारी की इज्जत हमेशा खतरे में होती है। यहाँ तक कि पिता के मित्र भी जो पिता तुल्य होते हैं वे भी लेखिका पर बुरी नजर डालते हैं, इस सम्बन्ध में लेखिका लिखती है कि “पिता के मित्र, बेटे समान लड़की को खसोटने की मुद्रा में रहते थे कितने विश्वास से मेरे पिता मुझे उन्हें सौंप आए थे।”⁹ कृष्णा ने बचपन से ही पुरुष से असुरक्षा का अनुभव किया। घर में काम करने वाले नौकर तक ने धिनौनी हरकत करने से गुरेज नहीं किया। लेखिका बताती हैं कि “छोटी बुआ का जवान नौकर ऊपर ही रहता था। जो भी लड़की खेल-खेल में पिछले कमरे में छुपती, वह उसे पकड़ कर देर तक गाल रगड़ कर चूम लेता। सबसे पहले जनको... उसके बाद जनको ही वहाँ हमें छुपने को प्रेरित करती। सबसे बुरी बात मुझे यह लगी कि वह हम छह- सात वर्ष की मासूम बच्चियों को नंगा करके अपने ऊपर सुला लेता.. जब मेरी बारी आई तो मैंने विरोध किया और डाटा कि तुम गन्दा काम करते हो, मैं मां से कह दूंगी। वैसे सच कहूँ तो जिज्ञासा वंश दो- चार दिन तो मैं खामोशी से उसे यह सब करते देख सहम ही गई। कभी किसी बड़े ने ये नहीं समझाया था कि तुम अपना शरीर किसी को छूने मत देना...और वह तो घर का विश्वस्त नौकर था।”¹⁰ इससे स्पष्ट होता है कि पुरुष की मानसिक विकृति लड़कियों के बालपन को ही पूरी तरह खराब कर देती है और उनके मानस पटल पर एक गहरा अवसाद, भय और असुरक्षा का भाव पैदा कर देती है जिसको वह आजीवन झेलती रहती है। यह कहानी सिर्फ कृष्णा जी की नहीं बल्कि हर उस लड़की की है जो बचपन से ही किसी न किसी तरह शोषण का शिकार होती है। लेखिका ने बहुत साहस के साथ जीवन के कटु एवं वीभत्स अनुभवों को लिखने की हिम्मत दिखाई है, जबकि ज्यादातर महिलाएं इज्जत के डर से ऐसी बातों को छुपा देती हैं। यहाँ यह देखा जा सकता है कि एक स्त्री के लिए उसका शरीर इतना बड़ा अभिशाप बन जाता है कि पारिवारिक एवं आत्मीय संबंधों को कलंकित करने से भी पुरुष लेश मात्र भी संकोच नहीं करता। उनके लिए न रिश्तों की कोई मर्यादा महत्त्व रखती है न उम्र की कोई सीमा। स्त्री तो स्त्री बच्चियाँ भी उनके लिए देह हैं जिन्हें वे भोगना चाहते हैं।

तमाम कटु अनुभवों के बावजूद लेखिका के जीवन में सहयोग करने वाले साहित्यकारों और मित्रों के व्यवहारों का वर्णन उनके द्वारा किया गया है। अपने पहले पति से अलग होने के बाद लेखिका खंडवा अपने मायके वापस आ गयी थी। लेकिन उनके भाई ने उन्हें घर से बाहर निकाल दिया। ऐसे समय में हंस चाचा ने उनकी मदद की जिसका दृष्टान्त देखा जा सकता है-“मैं हंसकुमार चाचा के प्रति बहुत आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे भयानक झंझावती वातावरण में अपने घर आश्रय दिया। उस समय हंस कुमार जी का संयुक्त परिवार था, सारा खर्च चाचा ही चला रहे थे। भाई ने जब मुझे बरसाती रात में आश्रयहीन किया तो चाचा जी ने ही मुझे अपने गृह में स्नेह से रखा। मेरे व मेरी बच्ची के लगभग दो माह पूर्ण शांति व सुख से वहाँ बीते। मैं विमला भाभी के बगल वाले उस कमरे में ठहराई गई, जहाँ पहले कक्कू रहती थी, रात्रि में जब मैं वहाँ आयी तो रात दो बार विमला भाभी ने झाँककर देखा था कि मैं कमरे में ही हूँ। आत्महत्या का तो प्रयास मैं नहीं कर रही।”¹¹ यह कड़वा सच है कि यदि चाचा जी उस समय ना होते तो मुझे आश्रय की समस्या भोगनी पड़ती। हर बेटे के लिए उसके पिता बहुत अजीब होते हैं। अपनी बेटे के लिए सर्वस्व देकर उसकी खुशियाँ खरीदना चाहते हैं। अपने पिता के बारे में वे लिखती हैं-“कितना प्यार पाया मैंने पिता का, जिन्हें मैं उनके जीते जी कुछ भी संतोष न दे सकी। मैं एक ऐसी गुड़िया थी, जिसे प्यार से संवारा गया हो, जो जीवन के खतरों व भयानक तूफान से अपरिचित थी।”¹² पिता के जाने बाद लेखिका ने असंख्य दुःख झेले। लेखिका के जीवन में जो अच्छे पुरुष आये उसमें वे अपने दोनों देवों का जिक्र करती हैं धर्मदेव और नामदेव जिन्होंने उन्हें

जीवनपर्यंत भरपूर स्नेह और समर्थन दिया। जब लेखिका बनारस में रह रही थी तब रुद्रजी उन्हें 'शाशिव्रता विवाह' पढ़ाने आते थे वे बहुत अच्छा पढ़ाते थे। लेखिका लिखती हैं कि कई वर्ष बाद जब उनकी कहानी 'धर्मयुग' में रुद्र जी ने पढ़ी तो लिखा था- "मुझे गर्व है तुम पर।"¹³ गुरु को अपने शिष्यों की उपलब्धि पर हमेशा ही गर्व होता है।

कृष्णा जी के जीवन में उन्हें कुछ अच्छे मित्र मिले जिन्होंने उनकी साहित्यिक तौर पर और अन्य मदद करने में कभी कोई कोताही नहीं की। अपने मित्र आलोक के लिए वे लिखती हैं कि आलोक मेरे लिए बहुत ही ईमानदार मित्र के रूप में उभरे। मैं सोचने लगी थी कि यदि कभी मुझे जीवन के किसी मोड़ पर आत्मनिर्भर बनने की आवश्यकता अनुभव हुई तो वे मुझे प्रत्येक प्रकार का सहयोग देंगे। यह स्वीकृत सत्य है कि मेरे मन में आलोक के प्रति गहरा विश्वास था। इसी प्रकार वे अपने दूसरे मित्र डॉक्टर वीरेंद्र सक्सेना को एक सहृदय मित्र के रूप में याद करते हुए अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है। डॉक्टर वीरेंद्र सक्सेना मेरे ऐसे मित्र रहे हैं जिन्होंने अपनी सीमाओं के साथ हमेशा मेरा साथ दिया है। मेरी पुस्तकों की समीक्षा लिखी। मुझे संपादकों और प्रकाशकों के पास ले गए। मानव संसाधन विभाग से हैदराबाद व कई जगह दो बार विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में भिजवाया। लेखन व जीवन में जो समस्याएं रहीं वो सुनते हुए सुझाव भी देते रहे। उन्होंने जो भी सहयोग दिया वह निस्वार्थ रहा। उनके सहयोग का पलड़ा भारी है। मैं तो केवल छोटा मोटा स्नेह व्यवहार ही उन्हें दे सकी। इस आत्मकथा में लेखिका ने एक पुरुष आईएएस ऑफिसर के बारे में लिखा है जिसका नाम है सुशील वर्मा। वे लिखती हैं- "दूसरे दिन ही मैं सुशील वर्मा जी से मिली। एक आईएएस ऑफिसर इतना सरल, सहज एवं सहयोगी हो सकता है क्या? मैं उनके नम्र व्यवहार से पानी-पानी हो गई। उन्होंने बताया कि वे अग्निहोत्री जी के बैच के ही हैं और खंडवा के अपने कार्यकाल के दौरान वे पिताजी के अच्छे मित्र थे। मेरे बिना कुछ बोले उन्होंने कहा, 'तुम कृषि विभाग मत छोड़ो, जो भी समस्या है वे हल हो जाएंगी। मैं स्वयं गुप्ता जी से बात कर लूंगा।' लेकिन मैंने शिक्षा विभाग ही में वापस जाने की इच्छा प्रकट की। तब उन्होंने कृष्णन से फोन पर कहा कि इनकी ये सर्विस काउंट होना चाहिए और देखें की ये लेडी किसी प्रॉब्लम न फंसे। सुशील वर्मा ने मुझ पर अपनी सहायता की गहरी छाप छोड़ दी। इसके पश्चात उनका विभाग बदल गया और वे मुझे एमपी बनने के पश्चात भोपाल में मिले और उस समय भी उन्होंने मेरी मदद की।"¹⁴ इस प्रकार सुशील जी एक सुलझे हुए श्रेष्ठ मानसिकता वाले पुरुष के रूप में एक अच्छा उदाहरण पेश करते हैं। ऐसे पुरुषों की वजह से स्त्रियों का पुरुष पर विश्वास बना रहता है और मन में सम्मान की भावना जाग्रत होती है, लेकिन ऐसे पुरुषों की संख्या बहुत कम है। पंडित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र जी के बारे में वे कहती हैं - "पंडित विश्वनाथ प्रसाद जैसे सहृदय नम्र विद्वान अब कहाँ हैं? मिश्र जी ने मुझसे कहा, 'तुम डी. लिट्. कर डालो, क्यों विषय में खमीर डाल रही हो।' उनका स्नेह- आशीर्वाद उनके जीते जी मुझे मिलता रहा।"¹⁵ अपने शोध-निर्देशक डॉ. शिव मंगल सुमन के बारे में वे कहती हैं कि उन्होंने शोध कार्य में उनकी पूर्ण रूप से मदद की जब भी उन्हें किसी सुझाव की आवश्यकता होती वे अवश्य करते। वे लिखती हैं- "निर्मल स्नेह से सुमन जी ने मुझे अभिभूत रखा। वे कहते थे 'तुम पहली स्त्री हो जो मेरी मित्र हो'। सुमन जी मेरे किसी भी पत्र पर तुरंत प्रतिक्रिया देते। मीटिंग में भी जा रहे सुमन जी रुक कर मेरी बात सुनते, दस्तखत करते और मेरी सहायता कर देते।"¹⁶ नई कहानी में अमृत राय जी ने लेखिका की मदद की उन्होंने उनकी अच्छी कहानियां प्रकाशित की जैसा कि आत्मकथा में लिखा गया है- "नयी कहानी में अमृत राय जी ने निःसंदेह मेरी अच्छी कहानियां प्रकाशित की, उन पर बढ़िया टिप्पणी भेजी। जब मिले तो बेहद स्नेह व आत्मीयता से बात की और सम्मान व्यक्त किया।"¹⁷

इस प्रकार देखा जा सकता है कि व्यक्तिगत जीवन में उन्हें जीवनसाथी का सहयोग भले ही न मिला हो, तमाम चरित्रहीन और लफंगे पुरुषों के साथ उनका अनुभव बहुत बुरा रहा। लेकिन पिता के अलावा उन्हें बहुत से ऐसे लोग मिले जिन्होंने उनके पारिवारिक और साहित्यिक जीवन का आसान बनाया।

आज हमारे देश ने प्रत्येक क्षेत्र में विकास किया है, लेकिन स्त्री के प्रति सोच नहीं बदली। समाज अकेली रहने वाली स्त्रियों पर तरह-तरह के लांछन लगाता है। उसके चरित्र पर उंगली उठाने पर वह रंचमात्र भी नहीं झिझकता है। कृष्णा जी लिखती हैं कि, "मैंने तपस्या जैसा जीवन जिया परन्तु मेरे अपनों व नगर के कुछ सभ्रांत लोगों ने मेरा यहाँ जीना असम्माननीय बनाने का ही कुचक्र रचा... मेरी ओर सहयोगी हाथ शायद एक या दो हों, पर मुझे तोड़ने वालों की यहाँ भीड़ है, पर यह मेरी कर्मभूमि है।"¹⁸ इस सम्बन्ध में अरविन्द जैन जी का कथन समीचीन है कि, "वह अपने आपको विश्लेषित करने के बाद इन गहरे अहसासों को दफन नहीं कर सकी और अपनी मीठी- खट्टी स्मृतियों व अनुभवों को यथावत रख दिया। कहने की जरूरत नहीं कि वे राष्ट्रीय स्तर की लेखिका हैं।"¹⁹ अपनी आत्मकथा की भूमिका में वे स्वयं लिखती हैं, "मैंने तो जिन्दगी में यह अहसास किया था कि मुझे अहसास कराया गया कि अकेली रहने वाली महिला पर प्रत्येक पुरुष अपना अधिकार जमाना चाहता है। किसी की दृष्टि उसके रूप, जायदाद तो किसी की नजर शरीर पर रहती है। प्रगति के नगाड़े बजाकर इक्कीसवीं सदी तक पहुँचाने वाला भारतीय पुरुष समाज अब भी बुद्धिजीवी, कलाकार, प्रतिभाशील महिला और साहित्यकार को वास्तविक सम्माननीय दृष्टि से नहीं देखता। उसके लिए वह इस्तेमाल की वस्तु है, नाटक, प्रेम, बहकावा और जोर जबरदस्ती से वह अपने अधीन करना चाहता है। समाज की संरचना में अभी तक यह सम्भावना नहीं है कि वह मेरी जैसी तिल-तिल गलकर साहित्य सृजन करने वाली स्त्री को भी क्षणिक सुखों का माध्यम न माने। इस समाज की दृष्टि में हमें चरित्रहीन करार देने का हर अंदेशा छुपा रहता है।"²⁰ इस प्रकार हम देख सकते हैं कि एक अच्छी लेखिका और विदुषी होने के बावजूद कृष्णा जी को एक अच्छा जीवनसाथी नहीं मिल पाया, हालांकि उन्होंने संबंधों को निभाने की यथासंभव कोशिश की लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली। जीवन में ज्यादातर पुरुषों ने उनको छला जिससे उनके अन्दर घोर निराशा और अकेलापन घर कर गया। इनकी आत्मकथा स्त्री पुरुष संबंधों की पड़ताल करते हुए एक जीता जागता दस्तावेज नजर आती है।

सन्दर्भ सूची-

1. डॉ. संरजू प्रसाद मिश्र, हिंदी लेखिकाओं की आत्मकथाएं, पृष्ठ 69
2. कृष्णा अग्निहोत्री, लगता नहीं है दिल मेरा, पृष्ठ 09
3. वही, पृष्ठ 229
4. वही, पृष्ठ 275
5. वही, पृष्ठ 327
6. वही, पृष्ठ 325
7. वही, पृष्ठ 39
8. वही, पृष्ठ 32
9. वही, पृष्ठ 30
10. वही, पृष्ठ 21
11. वही, पृष्ठ 74
12. वही, पृष्ठ 94
13. वही, पृष्ठ 132
14. वही, पृष्ठ 218
15. वही, पृष्ठ 237
16. वही, पृष्ठ 242
17. वही, पृष्ठ 315
18. वही, भूमिका, पृष्ठ 08
19. अरविन्द जैन, औरत : अस्तित्व और अस्मिता पृष्ठ 143
20. कृष्णा अग्निहोत्री, लगता नहीं है दिल मेरा, पृष्ठ 08

छायावादी काव्य में नवजागरण की चेतना और स्वतंत्रता की आकांक्षा

रवि कुमार झा

शोधार्थी

हिन्दी विभाग, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली

शोध सारांश :

छायावादी काव्य में नवजागरण की चेतना और स्वतंत्रता की आकांक्षा निहित है। छायावाद केवल आत्माभिव्यक्ति, सौंदर्यबोध या रहस्यात्मकता का युग नहीं था, बल्कि यह युग राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक जागरूकता और औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध मानसिक प्रतिरोध की साहित्यिक अभिव्यक्ति भी था। जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा जैसे कवियों की रचनाओं में जहाँ एक ओर व्यक्ति की मुक्ति और आत्मान्वेषण की आकांक्षा है, वहीं दूसरी ओर स्वतंत्रता संग्राम के वैचारिक और सांस्कृतिक पक्ष भी उभरते हैं।

प्रसाद की कामायनी और आँसू निराला की राम की शक्ति पूजा और शिवाजी का पत्र, महादेवी की जागरण कविताएँ तथा पंत की प्रकृति और मानव के समन्वय की कल्पना – इन सबमें स्वतंत्रता, चेतना, संघर्ष और परिवर्तन के स्वर स्पष्ट हैं। छायावादी काव्यधारा, नवजागरण की सामाजिक-सांस्कृतिक प्रवृत्तियों से जुड़कर साहित्य को केवल सौंदर्यलोक तक सीमित नहीं रखती, बल्कि वह जनचेतना, सामाजिक मुक्ति और राष्ट्रीय अस्मिता की सशक्त उद्घोषणा बन जाती है। अतः छायावाद एक साहित्यिक क्रांति है जो आत्मा से राष्ट्र तक की यात्रा को अभिव्यक्त करती है।

बीज शब्द - छायावाद, नवजागरण, स्वतंत्रता चेतना, राष्ट्रीय अस्मिता, मानव मुक्ति

प्रस्तावना: छायावाद हिंदी काव्य का वह महत्वपूर्ण युग है जिसमें व्यक्ति के आत्मबोध, सौंदर्यबोध और आध्यात्मिक चेतना के साथ-साथ राष्ट्रीय नवजागरण और स्वतंत्रता की आकांक्षा भी मुखर हुई। यह काल खंड मात्र भावुकता और प्रकृति-प्रेम का नहीं, बल्कि गहरे सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक आंदोलनों का साहित्यिक प्रतिबिंब भी है। प्रसाद, निराला, महादेवी और पंत जैसे रचनाकारों ने जहाँ आत्मचिंतन और सौंदर्य की अनुभूति दी, वहीं वे राष्ट्रीय अस्मिता, स्वतंत्रता की चेतना और सामाजिक मुक्ति के पक्षधर भी बने। है।

मूल शोध पत्र- छायावाद का समय मुख्यतः 1918 से 1936 तक माना जाता है। विश्वनाथ त्रिपाठी इसका परिचय देते हुए कहते हैं "छायावाद का उल्लेख 1920 के आसपास मिलने लगता है। शुक्ल जी इसे रवींद्रनाथ ठाकुर की कविताओं के प्रभाव से आया हुआ मानकर इसका संबंध ईसाई संतों के फैंटैसमटा (छायाभास) शब्द से जोड़ते थे। उन्होंने छायावाद को चित्रभाषा-शैली भी कहा। पं. नंददुलारे वाजपेयी ने इसका संबंध युग-बोध से जोड़ते हुए भी इसे व्यक्त 'सौंदर्य में 'आध्यात्मिक छाया का भान' कहा। डॉ. नगेंद्र ने छायावाद को 'स्थूल के विरुद्ध सूक्ष्म का विद्रोह' माना। डॉ. नामवर सिंह ने अपनी पुस्तक छायावाद में विश्वसनीय तौर पर दिखाया कि छायावाद वस्तुतः कई काव्य-प्रवृत्तियों का सामूहिक नाम है और वह 'उस राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी रूढ़ियों से मुक्ति पाना चाहता था और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से।' छायावाद की रचनाओं में एक शक्ति है नवजागरण की चेतना और स्वतंत्रता की आकांक्षा है। विश्वनाथ त्रिपाठी छायावाद को राष्ट्रीय स्वाधीनता एवं शक्ति का काव्य मानते हुए

कहते हैं। "छायावाद साम्राज्यवाद विरोधी मानवतावादी काव्य-धारा है। वह व्यक्ति के सुख-दुःख का उदात्तीकरण करके उसे राष्ट्रीयता, अंतर्राष्ट्रीयता एवं सर्वात्मवाद तक पहुँचा देता है। प्रसाद ने आँसू के उत्तरार्ध में 'आँसू की घनीभूत पीड़ा' को 'दुःख दावा से दग्ध' विश्व की पीड़ा से जोड़कर इस जग के वृंदावन बन जाने की कामना की है। उनकी कामायनी शक्तिशाली और विजयी बनने का आह्वान करती है- शक्तिशाली हो विजयी बनो विश्व में गुँज रहा जयगान। 'निराला' ने शिवाजी का पत्र में मुगल शासन को साम्राज्यवादी कहा। राम की शक्ति पूजा में 'न्याय जिधर है उधर शक्ति' लिखकर अन्यायी और शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्यवाद से निपटने के लिए केवल धर्म, न्याय और विवेक को अपर्याप्त बताते हुए 'शक्ति की आराधना' का प्रस्ताव किया।"²

छायावादी काव्यों के भाव विचार राष्ट्रीय परिधि में बने। रीतिकाल के शारीरिक मोह से आगे बढ़ कवित इतिवृत्तात्मकता के चोले को भी फेंक चुकी थी। छायावादी कवियों के सन्दर्भ में मुक्तिबोध लिखते हैं "छायावादी व्यक्तित्व एक विशेष प्रकार की भाव सघनता लेकर हमारे सामने उपस्थित हुआ। उसका साधारण मनोलोक असाधारण रूप से अन्तर्मुखी तथा सर्वसाधारण से बहुत दूर जा पड़ा। जिस पारिवारिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन की परिधि में उसके भाव विचार बने, वे अपने विषय के लिए उस ओर नहीं गए, वरन् उससे बहुत दूर और अत्यन्त मानसिक हो गए। वस्तु भी मानसिक हुई और उस पर प्रतिक्रिया भी मानसिक हुई। इस मानसिक वस्तु को बाह्य सन्दर्भों से जहाँ तक बन सका, दूर रखा गया। इस प्रकार उसे वायवीय स्थिति प्रदान की गई।"³ उस दौर में देश और समाज में बहु स्तरीय काम हो रहे थे, नवजागरण मजबूत हो रहा था।

"इसमें कोई शक नहीं कि स्वतंत्रता संग्राम की उफनती हिलोरें लेती इस महानदी में बहुत सी अन्य धाराएँ भी आकर मिलती थीं और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस इसकी मुख्यधारा तो थी लेकिन वह अकेली धारा नहीं थी।"⁴ इस समय कर तरह के सामाजिक आंदोलन हुए। मुक्ति की आकांक्षा प्रबल हो गई थी। "इसका नतीजा यह हुआ कि इसने अन्य आधुनिक मुक्ति आन्दोलनों के लिए जगह बनाई और उनके साथ अपने को जोड़ा। ये आन्दोलन थे, महिलाओं के आन्दोलन, नवजवानों, किसानों, मजदूरों, हरिजनों और अन्य निचली जातियों के आन्दोलन। उदाहरण के लिए 19वीं शताब्दी के दौरान भारतीय संस्कृति के उपनिवेशीकरण के खिलाफ रक्षात्मक रूप में जो सामाजिक और सांस्कृतिक आन्दोलन विकसित हुए, वे सबके सब आकर राष्ट्रीय आन्दोलन में एकाकार हो गए।"⁵

छायावादी समय में समाज के स्तर पर समाज की जागृति भी हो रही थी और स्वाधीनता की मांग भी प्रबल हो रही थी। "दो शब्द यहाँ नवजागरण और स्वाधीनता आन्दोलन के सम्बन्धों पर कहना आवश्यक है। किसी देश या उसके प्रदेश के सामाजिक सांस्कृतिक आन्दोलन को हम नवजागरण कहते हैं। इसमें सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के प्रयत्न शामिल हैं। शूद्रों और स्त्रियों की स्थिति को बदलने के प्रयत्न नवजागरण के अंग हैं। धार्मिक सुधार, अंधविश्वासों के विरुद्ध प्रचार नवजागरण के अन्तर्गत हैं। शिक्षा-प्रसार, साहित्य-रचना जैसे

कार्य तो उसके अन्तर्गत है ही। स्वाधीनता आन्दोलन विदेशी प्रभुत्व के विरुद्ध चलाया हुआ राजनीतिक आन्दोलन है। वह नवजागरण का एक भाग है, उसका पर्याय नहीं। वह नवजागरण को प्रेरित कर सकता है, उसमें घुल-मिल सकता है पर उसका स्थान नहीं ले सकता। स्वाधीनता आन्दोलन के बिना भी नवजागरण सम्भव है, पर यह उच्च वर्गों तक सीमित रहेगा, वह समाज को बड़े पैमाने पर प्रभावित न कर सकेगा। इसके विपरीत उच्च वर्गों के नेतृत्व में चलने वाला स्वाधीनता आन्दोलन भी, नवजागरण के स्पष्ट उद्देश्य सामने न रखने पर भी बड़े पैमाने पर उन उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होगा। इस प्रकार सन् 1920-21 का असहयोग आन्दोलन हिन्दी प्रदेश में पर्दा प्रथा को दूर करने में सहायक हुआ। मध्यवर्ग के पढ़े-लिखे लोग जितना ही स्वाधीनता आन्दोलन में भाग लेंगे, उतना ही वे नवजागरण को व्यापक बनाएँगे। नवजागरण यदि समाज में मौलिक परिवर्तन का उद्देश्य लेकर चलेगा तो वह स्वाधीनता आन्दोलन की प्रेरक शक्ति बनेगा।⁶

रामविलास शर्मा भारतीय नवजागरण पर वृहद बात करते हैं, भारतीय समाज के संदर्भ में इसके जातीय स्वरूप की पड़ताल वो करते हैं। वो कहते हैं "कोई भी नवजागरण हो उसका जातीय स्वरूप अवश्य होगा। सामन्ती सम्बन्धों से बाहर निकलते हुए जन-समाज जातियों के रूप में गठित होते हैं। जातीय जागरण को ही अक्सर नवजागरण कहा जाता है। इस प्रकार हर नवजागरण जातीय गठन और विकास में सहायक होता है। सम्प्रदाय तक नवजागरण को सीमित किया जाए तो वह जातीय गठन और विकास में बाधक होगा। राजा राममोहन राय और सर सैयद अहमद खाँ के नवजागरण हिन्दुओं और मुसलमानों तक सीमित थे, इस हद तक वे बंगाली और हिन्दी जातियों के गठन के विकास में बाधक थे। आर्य समाज के आन्दोलन को भी साम्प्रदायिक रूप देकर उसके क्रान्तिकारी तेज को नष्ट किया जा सकता है। पर स्वामी दयानन्द ने सभी धर्मों की रूढ़ियों पर प्रहार किया था, उनका यह कार्य कबीर की परम्परा के अनुरूप था। कबीर पंथ की आलोचना के बावजूद उनके और कबीर के तर्कों और उनकी तर्कशैली में भी बहुत बड़ी समानता है। यह तर्क शैली मनुष्य को स्वतंत्र चिन्तन की ओर ले जाने वाली थी।"⁷

नवजागरण के साथ स्वदेशी की भी भावना जागृत हुई। लोग हर स्वदेशी विचार से लेकर स्वदेशी वस्तु तक अपनाने की चेष्टा बढ़ने लगी। "बौद्धिकों में पश्चिमी सभ्यता की नकल की जो प्रवृत्ति बढ़ी उसकी चिन्ता और आलोचना भारतीय नवजागरण के निर्माताओं ने की है। सप्रे जी भी अनुकरण की प्रवृत्ति के बारे में चिन्तित हैं। वे कहते हैं कि-पश्चिम की विद्या और सभ्यता की कुंजी मिल जाने पर भी, सोचिए तो सही, हम लोग पश्चिमी देशों के तत्त्ववेत्ताओं के सिद्धान्तों का आकलन करने में कितने सफल हुए हैं? हम विदेशियों की सभ्यता का बाहरी अनुकरण करने से ही सन्तुष्ट हैं। ऐसी चिन्ता बंगाल में थी और महाराष्ट्र में भी। माधवराव सप्रे पश्चिमी सभ्यता के उतने विरोधी नहीं हैं जितने अंधानुकरण के।"⁸

इस समय परम्परा और आधुनिकता का द्वंद चल रहा था। "परम्पराओं के बंधन टूटने से जो भावनात्मक संकट समाज में उत्पन्न हुआ, उसने पुरुषों और महिलाओं को कुछ समय तक अजीब से असमंजस में डाले रखा। इन सुधारों को लेकर लोगों में तरह-तरह की प्रतिक्रियाएँ हुईं। बंगाल में जब पहला विधवा-विवाह हुआ, तो उत्सुकतावश हजारों लोग इसे देखने के लिए जुटे। इसी तरह महाराष्ट्र में हुए पहले विधवा-विवाह में जुटी भीड़ ने उग्र रूप धारण कर लिया, तो पुलिस को आत्मरक्षार्थ लाठी चार्ज करना पड़ा। रूक्माबाई ने अपने अशिक्षित और अकर्मण्य पति को स्वीकारने से इनकार कर दिया। इस मुद्दे को लेकर तूफान खड़ा हो गया। अपनी इच्छा के विरुद्ध जब राना डे

को एक युवा लड़की से शादी करने पर मजबूर होना पड़ा, तो कई रातें उन्होंने अन्तर्द्वन्द्व में जागते हुए गुजारी। लोकहितवादी गोपालहरि देशमुख, तैलंग और दूसरे कई लोगों का भी यही हाल था, जो एक दौराह पर खड़े थे एक तरफ परम्पराएँ थी, तो दूसरी तरफ प्रतिबद्धता। यह अन्तर्द्वन्द्व हरेक के मन में उथल-पुथल मचा रहा था। बहुत से लोग अन्ततः परम्पराओं की ओर वापस लौट भी गए लेकिन फिर भी इस संघर्ष से भारत में नया आदमी और नया समाज जरूर उभरा।"⁹ 'स्वाधीन' शब्द छायावादी कवि के शब्दकोश में सबसे महत्वपूर्ण है। इस शब्द के बराबर कोई और शब्द नहीं है। वो कहते हैं-

"माया नहीं जानता मैं-

जानता हूँ एक बस स्वाधीन शब्द।

बहती है समीर

पुष्प के शून्य उर में लेती स्वाधीन साँस

पार्ती है सुरभि, स्वाधीन गति

आवर्तन-परिवर्तन-नर्तन

सुख कीर्तन में विपुल उल्लास मय विश्व के कण-कण में

एक स्वाधीनता का गूँजता है विपुल हर्ष"¹⁰

राष्ट्रीय चेतना प्रसाद जी की कविता में सबसे प्रबल रूप में है। "प्रसाद जी को समाज और जाति ने, अर्थात् आधुनिक जीवन जगत ने, जो दृष्टि प्रदान की वह थी राष्ट्रवादी सांस्कृतिक अभ्युत्थान से प्रेरित। प्रसाद जी ने अतीत के गौरवमय चित्र उपस्थित कर इस राष्ट्रीय सांस्कृतिक अभ्युत्थान में योग दिया। ... प्रसाद जी ने अतीत की भावुक गौरव-छायाओं से ग्रस्त, वेदोपनिषदिक आर्ष वातावरण से अनुप्राणित, समाजदर्श से प्रेरित होकर अपनी विश्वदृष्टि तैयार की। यह विश्वदृष्टि कामायनी में प्रकट हुई।"¹¹ उनकी कविताएं राष्ट्रीय स्वाधीनता संघर्ष के नारा प्रतीत होता है। एक उदघोष जैसा है।

"अरुण यह मधुमय देश हमारा।

जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।।

सरल तामरस गर्भ विभा पर, नाच रही तरुशिखा मनोहर।

छिटका जीवन हरियाली पर, मंगल कुंकुम सारा।।"¹²

पंत की समस्त रचना भारतीय संस्कृति और समाज से साक्षात्कार करती हुई प्रतीत होती है। भारत माता की परिकल्पना को पुष्ट करती इनकी कविता जिसके आधार पर आजादी बाद लिखा रेणु जी का मशहूर आंचलिक उपन्यास 'मैला आंचल' का शीर्षक दिया है, में दृष्टिगोचर है कि भारत छोटा नाम नहीं है, विराट है भारत दूर सुदूर हर गांव में निवास करता है।

"भारत माता ग्रामवासिनी

खेतों में फैला है श्यामल

धूल भरा मैला सा आंचल

गंगा यमुना में आँसू जल

मिट्टी कि प्रतिमा/उदासिनी/दैन्य जड़ित

अपलक नत चितवन

अधरों में चिर नीरव रोदन

युग-युग के तम से विषण्ण मन

यह अपने घर में/प्रवासिनी।"¹³

अतीत यदि गौरवशाली हो तो उसका भान इंसान को आत्मविश्वास देता है कि वो व्यक्ति को अपनी स्थिति बेहतर करने के लिए प्रेरणा प्रदान करता है।

"बुद्धि, मनीषा, मति, आशा, चिन्ता तेरे है कितने नाम।

अरी पाप है तू जा चल जा यहाँ नहीं कुछ तेरा काम।

विस्मृति आ, अवसाद घेर ले नीरवते बस चुप कर दे

चेतनता चल जा, जड़ता से आज शून्य मेरा भर दे।"¹⁴

छायावादी कवि मनुष्य की स्वतंत्रता की मांग करते हैं, मुक्ति की चाह रखते हैं, यह मुक्ति की चाह मात्रा मनुष्य तक सीमित नहीं है। ये कला और साहित्य में भी मुक्ति चाहते हैं। "मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है... मनुष्यों की मुक्ति का अर्थ है कर्मों के बन्धन से छुटकारा पाना और कविता की मुक्ति का अर्थ है छन्दों के शासन से अलग हो जाना। ... छन्दों के शासन से मुक्त काव्य के द्वारा साहित्य में एक प्रकार की स्वाधीन चेतना फैलती है।"¹⁵

छायावादी कवि सबको जगाना चाहते हैं। भारतीय समाज की चेतना को जागृत करना चाहते हैं, इनकी कविताओं में 'जाग' जैसे शब्द बार बार आते हैं। महादेवी वर्मा की कविता 'जाग तुझको दर जाना' और 'जाग बेसुध जाग' में जगाने की चेष्टा है। महादेवी कठिन संघर्ष के समय श्रीकृष्ण को याद करती हैं, जो शंख लेकर सबको जगाएंगे।

**"शंख में ले नाश मुरली में छिपा वरदान,
दृष्टि में जीवन अधर में सृष्टि ले छविमान,
आ रचा जिसने स्वरो में प्यार का संसार
गूँजती प्रतिध्वनि उसी की फिर क्षितिज के पार,
वृन्दा बिपिन वाले जागा।"¹⁶**

गुलाम भारत के छायावादी कवि स्वयं देश की स्थिति से विचलित हैं, वो देशवासियों को देश की जिम्मेदारी लेने के लिए प्रेरित करते हैं।

**"कौन लेगा भार यह ?/कौन विचलेगा नहीं ?
दुर्बलता इस अस्थिमांस की -
ठोंक कर लोहे से, परख कर वज्र से,
प्रलयोल्का खंड के निकष पर कस कर
चूर्ण अस्थि पुंज सा हूँसेगा अट्टहास कौन?
साधना पिशाचों की बिखर चूर-चूर होके
धूलि सी उड़ेगी किस दृप्त फूटकार से?"¹⁷**

1936 की कालजयी रचना 'राम की शक्तिपूजा' के राम स्वयं निराला है, एक गुलाम देश के युवक जो अपनी विषम परिस्थिति को बदलने के लिए तत्पर है।

**"रावण अशुद्ध होकर भी यदि कर सका त्रस्त
तो निश्चय तम हो सिद्ध करोगे उसे ध्वस्त
शक्ति कौ करो मौलिक कल्पना**

करो पूजन छोड़ दो समर जब तक न सिद्धि हो रघुनंदन!"¹⁸

छायावादी कवि को अपने जीवन की असफलताएँ, कटु अनुभव, विद्वेष, प्रताड़ना और कुचक्र का सामना करना पड़ा है। उसके कारण कवि के मन में निराशा और विषाद सघन हो गया है। कवि इससे ऊब गया है। वो ऐसी परिस्थिति चाहता है, जहाँ सब अच्छा हो।

"ले चल मुझे भुलावा देकर मेरे नाविक धीरे-धीरे

जिस निर्जन में सागर-लहरी अम्बर के कानों में गहरी

निश्चल प्रेम कथा कहती हो तज कोलाहल की अवनी रे।"¹⁹

वो कल्पना कर रहे हैं कि सब अच्छा हो। देश गुलामी के जाल से बाहर निकले। देश - समाज जागृत हो। छायावादी काव्यधारा केवल भावुकता, सौंदर्यबोध और आत्मचिंतन तक सीमित नहीं थी, बल्कि यह युग भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक नवजागरण की गहन चेतना से भी अनुप्राणित था। छायावादी कवियों ने अपने अंतर्मन की पीड़ा, स्वतंत्रता की उत्कंठा और सामाजिक बंधनों से मुक्ति की आकांक्षा को कविता के माध्यम से प्रकट किया। जयशंकर प्रसाद की कामायनी, निराला की राम की शक्ति पूजा, पंत की मानवतावादी दृष्टि और महादेवी वर्मा की चेतना-जागरण की पुकार इन कवियों की राष्ट्रीय और सांस्कृतिक प्रतिबद्धता का सशक्त प्रमाण हैं। ये रचनाएँ न केवल उपनिवेशी मानसिकता के विरोध में थीं, बल्कि एक आत्मनिर्भर,

संवेदनशील और स्वतंत्र भारत के स्वप्न को भी अभिव्यक्त करती थीं।

आज जब भारत वैश्वीकरण, तकनीकी विकास और सामाजिक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है, तब छायावाद की चेतना हमें याद दिलाती है कि सच्चा नवजागरण आत्मचेतना, सांस्कृतिक स्वाभिमान और समावेशी स्वतंत्रता में निहित होता है। वर्तमान समय में जब सामाजिक बिखराव, सांस्कृतिक विस्मृति और मूल्य संकट सामने हैं, तब छायावाद का यह आंतरिक आलोक पुनः प्रेरणा का स्रोत बन सकता है—एक जाग्रत, संवेदनशील और स्वतंत्र समाज के निर्माण हेतु। आज भी इसकी प्रासंगिकता दृष्टिगोचर है।

संदर्भ सूची -

1. विश्वनाथ त्रिपाठी : हिंदी साहित्य का सरल इतिहास ; पृष्ठ 127-128, संख्या-01, ओरिएंट ब्लैकस्वान, हैदराबाद; संस्करण : 2018
2. विश्वनाथ त्रिपाठी : हिंदी साहित्य का सरल इतिहास ; पृष्ठ 130, संख्या-02, ओरिएंट ब्लैकस्वान, हैदराबाद; संस्करण : 2018
3. कथादेश (अक्तूबर अंक) ; पृष्ठ 62, संख्या-03, कथादेश प्रकाशन, नई दिल्ली; अंक : 2004
4. बिपिनचन्द्र : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष ; पृष्ठ 31, संख्या-04, भारत;
5. बिपिनचन्द्र : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष (भूमिका) ; पृष्ठ 32, संख्या-05, भारत;
6. रामविलास शर्मा : स्वाधीनता संग्राम बदलते परिप्रेक्ष्य ; पृष्ठ 121, संख्या-06, भारत;
7. रामविलास शर्मा : स्वाधीनता संग्राम बदलते परिप्रेक्ष्य ; पृष्ठ 121-122, संख्या-07, भारत;
8. विजयदत्त श्रीधर (संस्थापक संयोजक) : माधवराव सप्रै का महत्व (पुस्तिका) ; पृष्ठ 15, संख्या-08, भारत;
9. बिपिनचन्द्र : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष ; पृष्ठ 59, संख्या-09, भारत;
10. नंद किशोर नवल (सं.) : निराला रचनावली, भाग-1 ; पृष्ठ 132, संख्या-10, भारत;
11. नेमिचन्द्र जैन (सं.) : मुक्तिबोध रचनावली, भाग-4 ; पृष्ठ 201, संख्या-11, भारत;
12. जयशंकर प्रसाद : चंद्रगुप्त ; पृष्ठ 92, संख्या-12, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद; संस्करण : 1958
13. प्रसाद, निराला, पंत महादेवी की सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ प्रस्तुतकर्ता - वाचस्पति पाठक, लोकभारती प्रकाशन, अठारहवाँ संस्करण-2002, पृ. 172
14. सत्यप्रकाश मिश्र (सं.) : प्रसाद का सम्पूर्ण काव्य ; पृष्ठ 416, संख्या-14, भारत;
15. नंद किशोर नवल (सं.) : निराला रचनावली, भाग-1 ; पृष्ठ 425, संख्या-15, भारत;
16. महादेवी वर्मा : संधिनी ; पृष्ठ 98, संख्या-16, भारत;
17. जयशंकर प्रसाद : पेशोला की प्रतिध्वनि ; <http://kavitakosh.org> ऑनलाइन स्रोत;
18. रमेश चंद्र शाह (सं.) : निराला संचिता ; पृष्ठ 97, संख्या-18, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण : 2010
19. जयशंकर प्रसाद : लहर ; पृष्ठ 14, संख्या-19, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी; संस्करण : 1992

NEP 2020 : Transforming Higher Education in India**Dr Mousumi Borah**

Associate Professor & Head

Dept. of Economics Arya Vidyapeeth College (Autonomous) Guwahati 781 016

Dr. Saurabh Pran Sharma

Associate Professor

Dept. of Economics Arya Vidyapeeth College (Autonomous) Guwahati 781 016

Abstract-*The aim of NEP 2020 is to help the Indian higher education system occupy a high place in the world teaching and learning milieu. It lays emphasis on a significant change in the curriculum and educational structure in the multi-disciplinary framework. As per NEP-2020 the higher education system should move towards the 'blended' mode of teaching-learning with a combination of self-learning, face-to-face interaction, and online collaborative learning. NEP 2020 has aimed at the holistic development of learners and has also laid emphasis on internationalization of education at the higher education level. The policy aims at gathering knowledge from the Current Best Practices (CBPs) internationally and attain global quality and standards. The NEP 2020 desires for an education system which is rooted in Indian ethos and contributes towards transforming India and thus helping it become a global super power. According to NEP 2020 the quality of academic research needs to be enhanced and brought at par with the international levels. For the successful implementation of NEP 2020 teachers have an important role to play. It is their duty to understand the expectation of the policy and perform the tasks to fulfill these expectations*

Key Words: Higher Educational Institutions, National Education Policy, Access, Equity, Inclusion, Holistic Education, Indian Knowledge System (IKS)

National Education Policy 2020

The National Education Policy (NEP) 2020 aims to overhaul and strengthen the Indian higher education system and help it occupy a high place in the world teaching and learning milieu. The policy aims at universalizing quality higher education, reorganizing and integrating Higher Education Institutions (HEIs) in order to help them become multidisciplinary. It also seeks to provide and equip the educated with 21st century knowledge and skills and tries to instill in them a versatile personality which will enable them to deal with the fast changing global scenario.

NEP 2020 presses for a significant change in the curriculum and educational structure in the multi-disciplinary framework. It desires to provide an effective learning environment and assist the learners assuring equity and

inclusion. Further, granting freedom and autonomy to the teaching fraternity and institutions, ensuring outstanding quality, facilitating academic research and re-vamping the regulatory and governance structure of the HEIs in the country are other objectives of the policy. Managing quality and equity in a market driven system is a major challenge in the development of higher education in the country (Varghese, 2021).

Teachers play an important role in the success of NEP 2020. Hence it is the duty of the teachers to understand the expectations of the policy from them and the task they need to perform to fulfill these expectations. The major expectations of NEP 2020 from teachers teaching across the country includes teaching in a learner-centric way, practicing formative assessments, supporting learners for learning and for their other problems that come in the way of learning, engaging in research and promoting research, using technology for teaching and assessment and engaging continuously in professional development activities.

Access, Equity, Quality and Inclusion in Higher Education-The meaning and application of the concepts such as equality, equity and inclusion are different. Conceptual clarity helps to identify the real problem and challenges and develop strategies and interventions. The sources of inequality in higher education can be social, economic, gender, regional, language, family background, parental employment and schooling background. Intersection of various forms of inequality makes the nature of vulnerability faced by the student body complex. While some of the challenges can be commonly shared by all, specific challenges need specific interventions. The initial step is to bring students to colleges and universities. For the growth of higher education it is required that a larger share of school students successfully complete the secondary levels of education. It is important to strengthen the task of schooling as it is very much essential for the expansion of higher education. As observed by Salmi (2018), equity interventions can be monetary and nonmonetary. Monetary interventions mainly address financial challenges faced by students. Non-monetary interventions

aim to create enabling conditions in the campus and promote social inclusion and learning. The questions of access, participation and student success are to be addressed to by equity interventions. For the attainment of equitable expansion of higher education there is the requirement of heavy public investment and support. However, it may be noted that certain changes essential for creating enabling conditions for students from various backgrounds may not require additional resources. Compassionate attitude and behavior of institutional leaders, teachers, and staff towards the students from deprived backgrounds in the educational institutions can go a long way in favour of equity and inclusion.

For the purpose of equity and inclusion in higher education the Government needs to earmark Government funds for the purpose of education for the Socio-Economically Disadvantaged Groups (SEDGs), set specific targets for higher Gross Enrolment Ratio (GER) of SEDGs, provide equal opportunities to both female and male students. Higher Education Institutions increase access to education through the establishment of more high-quality HEIs in aspirational districts and Special Education Zones, establish and provide support to high-quality HEIs that has the provision of teaching in local/Indian languages or bilingually, make arrangements for financial assistance and scholarships to SEDGs in both public and private HEIs, take up outreach programs on higher education opportunities and scholarships among SEDGs and create as well as support technology tools for better participation and learning outcomes. The HEIs need to take steps to mitigate opportunity costs and fees for pursuing higher education, make provision for more financial assistance and scholarships, try to make the admission process and curriculum more inclusive, enhance career opportunities of higher education programmes, provide more degree courses taught in Indian languages and bilingually, ensure disabled-friendly infrastructure, make provision for bridge courses for students from disadvantaged educational backgrounds, provide academic and personal mentoring and counseling, sensitize faculty members and students on gender-identity issue and its inclusion in all aspects of the HEI, including curricula, enforce non-discrimination and anti-harassment and develop the Institutional Development Plans.

Curriculum and Pedagogy-NEP-2020 suggests that the higher education system move towards the 'blended' mode of teaching-learning combining self-learning, face-to-face interaction, and online collaborative learning. There also needs to be a system which combines traditional classroom education, distance learning, and online learning. As per NEP 2020, today a student pursuing higher education can take up a maximum of 40% courses/

course credits from the national SWAYAM platform online and transfer the credits that one has earned toward her/his own programme of study and degree. There will be provision of 'course-based' registration which will allow students to take up courses (even outside one's core discipline area) from other disciplines and interdisciplinary areas, and also not only from one's own institution but also from other institutions and deposit in her/his account in the ABC, and transfer to obtain a diploma or degree. That institution will award the degree which had offered the highest amount of course credits. Thus it has become very essential to formulate curriculum with emphasis on 'multidisciplinary', 'holistic', and 'multiple entry-exit' aspects. As the entire higher education system shall be practicing the blended mode of learning, instead of the educational resources confining to textbooks students shall be allowed to access open educational resources (OERs), social networks, YouTube resources, and the digital resources available through various national and regional networks in the country including SWAYAM, other MOOC platforms, etc. For the purpose of enhancing employability, multidisciplinary courses and skill-based courses are to be offered by the HEIs. The different courses on values, environment, community engagement, social and life skills etc will not only play an important role in increasing employability skills but will also bring about a well round development of the learners. There needs to be compatibility among the 'learning outcomes', 'learning activities', and 'assessment strategies'. Today the pedagogic methods should emphasize more on student-centred and problem-centred/ based and project-based learning and activities. NEP 2020 has aimed at the holistic development of learners. Focus has to be given on student learning rather than rote learning and passing the public examination. Thus the policy lays emphasis on continuous and comprehensive assessment including not only formative and summative assessment, but also assessment of scholastic and co-scholastic abilities on a continuous basis. It is important to design assessment to achieve the learning outcomes through Learning Outcomes Based Education (LOBE) approach as given by UGC (2019). Today technology has entered all walks of our life. All business activities make use of artificial intelligence, machine learning, computer vision, block chain, augmented and virtual reality, 3D printing, Internet of Things and other smart technologies. In June 2018 NITI Aayog of the Government of India had released India's National Strategy for Artificial Intelligence (NSAI) in order to create a vibrant AI ecosystem in India. Today the teachers with the power of AI, have the tools to offer personalized instructions, can create

quality content and offer it to the students. Self-learning has become possible for the students. To achieve the objective of NEP 2020 on making students “Learning how to learn”, technology plays an important role.

Holistic and Multidisciplinary Education -Holistic education refers to education which shall provide higher opportunities to students to live a life that she/he chooses to live. The main intension of liberal education is to help develop the reasoning capability of the mind. Multidisciplinary education refers to the conjointment of disciplines and interdisciplinary allows a blending of knowledge emerging from the conjointment of disciplines. In order to bring about the culture of interdisciplinarity the teachers of HEIs should be encouraged to carry out joint research, teaching and publication.

A systematic way of knowledge production and management is very essential. Studies have shown that the students trust empathetic teachers, and these emotional supports can go a long way in strengthening a collegial learning environment (Mandal, 2018). It is a well known fact that the teachers, students and the departmental and institutional administration help build the real teaching-learning processes and thereby create the learning environment. Several factors like resource allocation, funding, infrastructural support, training and counseling etc. influences the entire process. Experience shows that through critical discussions, experimentations and follow up measures the right strategy for a particular HEI can be arrived at.

Vocational Education, Skilling and Employability-India has laid stress on inclusive education. Government of India has taken a number of initiatives for revolutionizing the higher education ecosystem in the country including vocationalisation of higher education. Vocational Education and Training (VET) can help to enhance skill development for the economy. Academic institutions, industry, governments, and other stakeholders need to collaborate for curriculum development, training delivery and proper assessment in order to enhance the employability of the graduates. For the success of vocational learning in the true sense mentorship programme integrated with the internships, on-the-job training and apprenticeship training becomes very essential. It is required on the part of the HEIs to develop strategic action plan in consultation with the VET stakeholders in order to bring about necessary changes in the implementation of skill development programmes and VET. In India, the skill attainment of population and the labour force is very low; there exists wide disparities between female and male and rural and urban (Saxena & Kumar, 2017).

Indian Knowledge System (IKS) -The NEP 2020

emphasizes on an education system which is rooted in Indian ethos and contributes directly to transforming India and help it become a global super power. People are made aware of their fundamental duties, constitutional values, bonding with one’s own country, and a conscious awareness of one’s own roles and responsibilities in the changing world. The policy aims at instilling among the learners a deep rooted pride in being Indian. The Indian Knowledge System (IKS) has been recognized as an integral foundation of NEP 2020. IKS stresses holistic, value-based, and contextually rooted education which not only transmits knowledge but also cultivates wisdom, ethics, sustainability, and interconnectedness. Elements such as Yoga, Ayurveda, Sanskrit, logic, mathematics, astronomy, and ecology have historically nurtured India's intellectual tradition. NEP 2020 envisions the revival of these systems in modern curricula by promoting experiential learning, multidisciplinary research, indigenous languages, and value-based education. Thus, IKS helps higher education institutions to integrate traditional knowledge with contemporary science, leading to holistic development and reinforcing India’s role as a global knowledge leader (IKS Division, 2021; Ghose, 2021; Subrahmanyam, 2020).

Internationalization of Education-NEP-2020 has laid emphasis on internationalization of education at the higher education level. The policy aims at gathering knowledge from the Current Best Practices (CBPs) internationally and attain global quality and standards. In order to attain the goal of ‘internationalization at home’ the policy aims at attracting greater numbers of international students and faculty to the country. This would give international exposure and visibility to our universities. There has to be the provision of cross border flow of students, staff and faculty through exchange Memorandum of Agreements (MoAs). For the purpose of hosting foreign students an International Students Office at each HEI needs to be set up. This office would coordinate all matters relating to welcoming and supporting students arriving from abroad. It is very much essential to encourage collaborative research activities like joint supervision, international projects and also student exchanges between Indian institutions and global institutions. Courses related to Indology, Indian languages, Ayurveda, Yoga and Naturopathy, Unani, Siddha and Homeopathy (AYUSH) systems of medicine, art, music, history, culture, philosophy and modern India are to be popularized and made attractive to foreign students desiring to study in India. Again for our students who desire to go for

international exchange, courses in the STEM areas may be explored for exchange leading to joint degrees/certifications. Under this initiative, more internationally relevant curricula in the sciences, and social sciences should be popularized. The international students need to be provided with meaningful opportunities for social engagement, quality residential facilities and on-campus support. Thus, India should be projected as a global study destination providing premium education at affordable costs thereby helping to restore its role as a *viśvaguru*.

Quality Academic Research-NEP 2020 aims at enhancing the quality of academic research and bringing it at par with the international levels. According to Earley & Bubb (2004), professional development of teachers should be an ongoing process taking place in either external or work based settings, or aim at promoting learning and development of professional knowledge, skills and values. The policies envisioned in the NEP 2020 have the potential to bring about a change in the theory-data relationship existing until now where the theoretical formulations were very often borrowed from the non-Indian sources and the data supplied for study were mostly from the resources in the vicinity of the research undertaking institutions. Emphasis is being laid on the use of the Indian languages at various levels of education, including research.

Conclusion-NEP 2020 plays a very significant role in Higher Education. It focuses on holistic development, multidisciplinary learning, flexibility, technology integration, teacher empowerment and assessment reforms. It focuses on a student centered and inclusive education system. However, its implementation in the Higher Education Institutions presents both challenges and opportunities. Thus the very success of this policy will depend on the collective efforts of all the stakeholders.

References:

1. Earley, P. & Bubb, S. (2004). Leading and managing continuing professional development: Developing people, developing schools. London: SAGE Publications.
2. Ghose, D. (2021). Indian Knowledge Systems: Relevance and Applications. New Delhi: Concept Publishing.
3. IKS Division, Ministry of Education. (2021). Introduction to Indian Knowledge Systems. New Delhi: Government of India.
4. Mandal, S. (2018). Teaching in Indian Higher Education: Six Principles for Improvement. International Higher Education. Boston College. No. 95, Fall Issue.
5. Salmi, J. (2018). All around the world—Higher education equity policies across the globe. Lumina Foundation.
6. Saxena, Pradeep K and Abhay Kumar (2017). Skill Development in India: Status and Policy Concerns, Lokashraya Foundation Working Paper Series 4, New Delhi.
7. Subrahmanyam, S. (2020). Indian Knowledge Traditions and Contemporary Challenges. Oxford University Press.
8. Varghese, N. V. (2021). Directions of Change in Higher Education: From Massification to Universalization. In Chattopadhyay, Saumen, Simon Marginson and N. V. Varghese (Eds.) Changing Higher Education in India. London, Bloomsbury Academic, 23-46.

राजस्थानी लोक गीतों में नारी जीवन

प्रीति पारीक

शोधार्थी

डॉ. पिकी पारीक

शोध निर्देशक एवं सहायक आचार्य
हिन्दी विभाग - वनस्थली विद्यापीठ

सारांश -सम्पूर्ण संसार में व्याप्त लोक-मानस की सुख-दुख की अनुभूतियों की भाव-भीनी गेय अभिव्यक्ति ही लोकगीत है। मानव के जन्म से लेकर मृत्यु तक के सम्पूर्ण संस्कार, तीज त्योहार, व्रत-उत्सव सभी लोक गीतों के माध्यम से सम्पूर्ण होते हैं। लोक साहित्य में लोक गीतों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि लोक गीतों के अभाव में लोक साहित्य की कल्पना अधूरी है। साहित्य की अन्य विधाएँ जहाँ नीति या मनोरंजन की बात करती हैं, वहीं यह लोक गीत गृहिणी के मधुर कंठ से निकलकर मांगलिकता को प्रकट करते हैं। साथ ही इन गीतों के द्वारा प्रत्येक प्रदेश की प्रादेशिक संस्कृति, रहन-सहन, रीति-रिवाज, व्रत-त्योहार, सामाजिक परम्पराएँ मान्यताएँ और आंचलिकता का ज्ञान होता है। इन लोक गीतों ने सांस्कृतिक गौरव और अस्मिता को संरक्षित करने का कार्य किया है। लोक गीतों का सृजन नारी के बिना अधूरा है। राजस्थानी लोकगीतों में नारी जीवन के विविध पक्षों का बड़ा ही सुन्दर चित्रण प्राप्त होता है। भारतीय नारी परिवार के नित्य कार्यों में अत्यन्त व्यस्त रहती है अतः वह गृहस्थी के कार्यों को गीत बनाकर मंगलमय बना देती है। लोक गीतों में नारी जीवन की प्रत्येक अवस्था तथा परिस्थिति का अनुपम उल्लेख मिलता है।

बीज शब्द - आंचलिकता, अस्मिता, मांगलिकता, सृजन, अनुपम, मान्यताएँ, भावप्रवण, मुदुल, संगीतात्मकता, मार्मिक, पारिवारिक, समृद्ध, प्रताड़ना, परम्पराएँ, कामणगारी

मूल आलेख -सांस्कृतिक विरासत के सर्वांगीण विकास को अपने अंचल में समेटे हुए किसी भी प्रदेश का लोक साहित्य वहाँ की अमूल्य धाती होता है। राजस्थानी लोक साहित्य में लोकगीतों का अपना एक विशिष्ट स्थान है। राजस्थानी संस्कृति और जन-जीवन पर इन लोकगीतों का अत्यधिक प्रभाव है। इन लोक गीतों में यहाँ के जनजीवन की मनोरम झाकियाँ देखने को मिलती हैं।

“राजस्थान इस दृष्टि से बहुत धनी है। यहाँ के लोक-गीतों में विचारों की जो सम्पन्नता, भावना का जो सौन्दर्य है वह भारत के अन्य प्रान्तों के लोक-गीतों में प्रायः नहीं है। जीवन के प्रत्येक महत्वपूर्ण कार्य में गीतों का प्रमुख स्थान होता है। बालक जब माँ के गर्भ में होता है तभी से गीत गाये जाते हैं। जन्म की खुशी भी गीतों के माध्यम से व्यक्त होती है। अनेक संस्कार इन गीतों के माध्यम से ही सम्पन्न होते हैं। “सांस्कृति गौरव और अस्मिता को संरक्षित और पल्लवित करने का कार्य जितना लोक गीतों के माध्यम से हुआ है उतना अन्य किसी विधा के द्वारा नहीं।” लोक गीत लोक मानस के लिए अपार ज्ञान के स्रोत होते हैं क्योंकि यह लोक के मनोभावों को प्रकट करने के लिए सरलतम साधन है। “जिस प्रकार वेद आर्य संस्कृति के ज्ञानागार हैं, वैसे ही लोकगीत भी हमारी संस्कृति के भव्य भंडार हैं।” नर तथा नारी को समाज का मूल आधार स्तम्भ माना गया है जिन पर देश, समाज तथा पारिवारिक उन्नति निर्भर है। लोकगीतों में स्त्री-पुरुष संबंधों के अतरंगी सुंदर चित्र मिलते हैं। लोकगीतों के सृजन में जितना योगदान महिलाओं ने दिया है उतना पुरुषों ने नहीं। नारी ने अपनी गहरी मनोवेदनाओं को गीतों के माध्यम से समाज के सामने रखा है।

राजस्थानी लोक गीत यहाँ की नारियों के हृदय की पुकार है। वह पुकार जो उनकी वास्तविक भावनाओं का प्रतीक है। परिवार की बलिवेदी पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाली स्त्री ने क्या भोगा, क्या सहा, क्या किया और क्या चाहा इनके संकेत हमें इन लोक गीतों के माध्यम से प्राप्त होते हैं। “नारी जाति सीधी सरल एवं भावप्रवण होती हैं। उसके मृदुल कंठो ने अपने अभावो और भावनाओं की अभिव्यक्ति सुख तथा दुःख दोनों मौको पर गाकर ही प्रकट की है।” राजस्थान लोक गीतों की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध रहा है यहाँ लोक गीतों में नारी के दो रूप दिखाये गये हैं- एक और जहाँ वह गृह-लक्ष्मी, पतिव्रता, प्रियतमा, सती-साध्वी तथा श्रेष्ठतम माता है। वही दूसरी तरफ उसे कर्कशा, फूहड़, कामणगारी तथा छिनाल बताया गया है। लोकगीत नारी जीवन के प्रिय साथी है जिन्हें वे बचपन से ही तल्लीन होकर गाती आई है। इन लोक गीतों के माध्यम से हमें नारी जीवन के विविध पहलु देखने को मिलते हैं। नारी की मनोव्यथा की गेय अनुभूति ही ये लोकगीत है।

इन गीतों के माध्यम से छोटी-छोटी बालिकाएँ अपने जीवन की पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेती है। बालिकाओं के गीतों में गृहस्थी के कर्तव्य संभालने की सहज स्वाभाविक कामना व्यक्त होती है। एक लोकगीत में एक बालिका अपने भाई को जिमाने के लिए काचरियां लाने की इच्छुक है वह अपनी माँ से इजाजत लेकर ऊँचे मगरे पर जाकर काचरियां लाना चाहती है तथा अपने भाई को छीलकर छोंककर जिमायेगी।

“ऊँचे मगरे जाऊं अ माय, उलिया काचर लाऊं अ माय
छौलने छमकाऊं अ माय, वीरा नै जिमाऊं अ माय
वीरौ म्हारौ भाई अ माय, हूँ वीरा री बाई अ माय”

बालिकाओं के भावुक हृदय का परिचय उनके बालपन में ही हो जाता है वे अपने छोटे भाईयों से बहुत प्रेम करती है अपने छोटे भाईयों को सुलाने व खिलाने के लिए इस प्रकार लोरियां गाती है -

“सोई रे भाई सोई, थारी मां करै रसोई
रसोई में खाजा, थारौ बाप दिल्ली रौ राजा
लोरी अ बाई लोरी, तनै दध भरी कटोरी
ऊपर सक्कर भौरी।”

नारी जीवन की विवशता यह रही है कि बालपन में पीहर के आंगन की धूल में खेलती बेटा को विवाह के पश्चात परायी होकर विदा कर दिया जाता है। पिता का घर उसके लिए पराया हो जाता है फिर तो वह कभी किसी विशेष अवसर पर ही अपने घर आ सकती है। लड़को के लिए जहाँ विवाह के पश्चात कुछ नहीं बदलता वह बड़े होकर अपने बचपन के साथियों से मिल सकते हैं किन्तु नारी जीवन की स्थिति बड़ी मार्मिक है उनका तो अपनी बालपन की सहेलियों से मिलना भी बड़ा मुश्किल हो जाता है। उसी मनोव्यथा का चित्रांकन इस गीत में हुआ है -

“वीरा रै विवाह में बहिन सँ मिलस्यां
बाबुल सँ मिलस्यां मायड़ सँ मिलस्यां
साथण सँ कद मिलस्यां अ
साथण मैलौ दौरौ अ कडी होस्यां नगरां फिरस्यां
साथण मैलौ दौरौ अ।”

राजस्थान में कन्या को कोयल की उपमा दी जाती है। कन्या की विदाई का दृश्य बड़ा ही कारुणिक होता है। बचपन से पाली पोसी अपनी कन्या को अपने से अलग करना किसी भी पिता के लिए बड़ा ही कठिन होता है। उसी प्रकार अपनों को छोड़कर किसी पराये पुरुष के साथ पराई जगह पर जाकर रहना किसी भी स्त्री के लिए अत्यधिक पीड़ादायी होता है। प्रस्तुत गीत के माध्यम से माता-पिता द्वारा अपनी पुत्री को विदा करने दुःख दिखाया गया है -

“बन खंड री ए कोयल, बन खंड छोड कठै चाली?
थारै आले अ दीवालै गुड़िया धरी, बन खंड री अ कोयल

थारी सात सहेलियां उणमणी, बन खंड री अ कोयल।”

राजस्थानी समाज एक ऐसा समाज रहा है जिसमें पुरुषों को अवसर अधिक प्राप्त है। महिलाओं को अवसर कम प्राप्त हुए है जिसके माध्यम से की वह अपने आप को व्यक्त कर सके किन्तु विवाह या किसी अवसर पर नारी ने इन गीतों के माध्यम से अपनी भावनाओं को बखूबी व्यक्त किया है। जैसे की विवाह के अवसर पर स्त्रियों द्वारा गाई जाने वाली गालियां। इन गालियों के माध्यम से ब्याई के साथ परिहास करती है इसी से सम्बन्धित एक गाली की कुछ पंक्तियाँ हैं -

“सगाजी ने काली कुत्ती पराणावौ जी नारायण जी परमेश्वर जी
हथलेवों कीकर जोडा नारायण जी परमेश्वर जी
सगोजी रो हाथ कुत्ती रौ पंजो यं हथलेवो जोडो जी
अ फेरा किण विध खासी जी नारायण परमेश्वर जी
आगै सगाजी नै लारै कुत्ती जी लप लप फेरा खासी।।”

राजस्थानी लोक गीतों में विवाह के पश्चात जब एक कन्या अपनी नयी दुनियां के सपने संजोती है। अपने माता-पिता का घर छोड़कर आती है तथा संसुराल को ही अपना सब कुछ मानने लगती है। जहाँ वह ससुर और देवर में अपने पिता तथा भाई का रूप देखती है तथा सास और ननद में अपनी माँ और बहिन को खोजती है किन्तु जब उसका सत्य से सामना होता है तो वह पाती है कि जिस सास में वह अपनी माँ को खोज रही है उसी सास के द्वारा उसे ताने तथा गाली दी जाती है। सास के ताने तथा कटाक्ष सहना बहु की विवशता होती है। प्रस्तुत गीत के माध्यम से बहु सास के द्वारा किये गये अत्याचार और कष्टों का वर्णन अपनी माँ से करते हुए कहती है -

“बाअी नै दीनो सासु धानड़ सोवणों,
फटक्यो फटक्यो, माँ, डाल दो डाल

अध मण फटक्यो बाजरो। बाअी नै दीनो सासु पीसणो
पीस्यो पीस्यो, अ मा, डाल दो डाल, अध मण पीस्यो बाजरो।”

नारी जीवन की सार्थकता मातृ-शक्ति प्राप्त करने में है। सन्तानहीन नारी को समाज में अनेक तानो तथा व्यंग्य वाक्यों को सहना पड़ता है। निस्सन्तान नारी के लिए बाँझ शब्द का प्रयोग किया जाता है जो उसके लिए एक गाली की तरह होता है। नारी जीवन की सफलता सन्तान होने पर ही मानी जाती है क्योंकि एक सन्तानहीन नारी अपूर्ण मानी जाती है। जिस स्त्री को सन्तान नहीं होती उसे अनेक मानसिक कष्टों को सहना पड़ता है। प्रातः काल उस स्त्री का मुख देखना भी अच्छा नहीं माना जाता है उसे समाज के साथ-साथ अपनों के द्वारा भी प्रताड़ित किया जाता है। उसकी सास, देवरानी-जेठानी उस पर व्यंग्य करती है उसे ताने मारती है। साथ ही उसके प्राणों से प्रिय पति के द्वारा भी उसे प्रताड़ित किया जाता है। सन्तान प्राप्ति के लिए नारी अनेक देवी-देवताओं की मनौतियाँ करती है अपनी कोख के फलीभूत होने के लिए टोने-टोटकों का भी प्रयोग करती है। राजस्थानी लोक गीत के माध्यम से सन्तानहीन नारी का करुण भाव मौन रूदन करता हुआ प्रस्तुत हुआ है -

“सासू तो कैवे म्हारी बहवड़ बाँझडी, परणियाँ लावे ल्यौडी सौक
कासी रा बासी अमर बधाँदौ नीं जुग में पालणौ
देरांणी जेठांणी बोलै अवंला बोल, ज्यारँ हीँडै है पजत पालणौ
कासी रा बासी पुतर बिन बाजं म्हे कुल में बाझंडी।”

हमारे समाज की यह विडंबना है कि यहाँ पुत्र के समक्ष पुत्री को उपेक्षित किया गया है। राजस्थान में पुत्र जन्म को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। प्रत्येक परिवार पुत्र जन्म के लिए लालायित रहता है। पुत्रहीन स्त्री का मुख देखना भी अशुभ माना जाता है। नारी का सौन्दर्य तथा यौवन तभी सार्थक माना जाता है जब वह एक अच्छे पुत्र को जन्म दे। इसी भावना की अभिव्यक्ति को प्रस्तुत पंक्तियों में देखा जा सकता है -

“मिरंग न बाज्यो बायरो, अदरा न बठयो मेहा
जोबन जायो न बेटडो, तीनं हारी देहा।।”

राजस्थानी लोकगीतों में यह भी वर्णित है कि जब तक बहु के पुत्र नहीं होता तब तक वह सास के सामने घुंघट नहीं हटा सकती। पुत्र जन्म से पूर्व वह अपनी पसंद के कपड़े नहीं पहन सकती। वह चूनड़ी और पोंमचा तो

ओढ सकती है किन्तु पीला ओढने का अधिकार केवल एक पुत्र की माँ को ही होता है। यदि पुत्र सुख से वंचित कोई स्त्री पीला ओढने की बात करती है तो वह हँसी की पात्र होती है इसी भावना को प्रस्तुत लोक गीत के माध्यम से व्यक्त किया गया है -

“गैली ये मरख बावली तं धण असल गिवांर
बिन जायां क्या ओढस्यो, हैसै ये म्हाजन लोग।”

समाज में पुत्र के जन्म पर हर्षोल्लास तथा खुशी मनाई जाती है वही पुत्री के जन्म पर परिवार में एक मातम सा छा जाता है। जिस स्त्री के पुत्र नहीं होता उसे समाज में किसी प्रकार का सम्मान नहीं दिया जाता। परिवार में पुत्र जन्म को ही लोग अपनी शान मानते हैं। कन्या को जन्म देने वाली माँ को तिरस्कार तथा अपमान का सामना करना पड़ता है। सगे-संबंधियों के साथ उस स्त्री का पति भी उसे सम्मान नहीं देता और कहता है कि यदि तुमने पुत्री को जन्म दिया तो मैं तुम्हें छोड़कर चला जाऊँगा तथा तुम्हारा पलग घर के पीछे लगवाऊँगा और खाने के लिए नमक का लड्डू तथा ओढने के लिए गंदे तथा काले वस्त्र दंगा इस प्रकार पुत्रविहीन स्त्री का समाज में कोई साथ नहीं देता उसे तो अपने पति द्वारा ही मानसिक प्रताड़ना झेलनी पड़ती है। इसी भावना की अभिव्यक्ति निम्न पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त होती है -

“गोरी जे थारे जनमैला धीव,
तो खाट पिछोकडे घलावसां जी।
लाडू खारे लणं रा जी,
तौ पडदो ताणा काली कमली रौ जी।
कदेई नी मखडे बोलसां जी,
(तौ) म्हे तो सिधांवाला चाकरी जी।”

राजस्थानी लोक गीतों में पारिवारिक सम्बन्धों से सम्बन्धित अनेक गीत मिलते हैं जिनमें नव वधु का स्वागत बड़े लाड-चाव से सास के द्वारा किया जाता है। जब वह अपने ससुराल में श्रृंगार करके आती है तब सास के द्वारा अपनी बह से पूछा जाता है कि बह अपने गहनों का अर्थ बताओं तब बह के द्वारा कहा जाता है की गहने तो मेरे देवर-जेठ है गहने तो मेरी ननद के बीर है। इस प्रकार बह अपने परिवारजनों को अपने गहनों की उपमा देती है। जिससे प्रसन्न होकर सास अपनी बह से कहती है की बह मैं तुम्हारी जीभ कर बलिहारी जाती हूँ तुमने इस प्रकार मेरे सारे परिवार को लाड किया है। प्रस्तुत लोकगीत के माध्यम से नववधु द्वारा अपने ससुराल पक्ष के प्रति प्रेम तथा आदर की अभिव्यक्ति हुई है -

“म्हारा सासुजी बूझै ये बह:
थारे गहणां को अरथ बताये।
सासु गहणां जी गहणां के करो,
गहणां म्हारा देवर जेठ
गहणां भोली बाईजी रा वीर,
म्हारा ससुरा गढां का राजवी
सासुजी म्हारा अरथ भण्डार।”

राजस्थानी लोक गीतों में अत्यन्त विविधता देखने को मिलती है। इन लोक गीतों में जहाँ एक और नारी को गृहलक्ष्मी तथा पतिप्रिया तथा सती साध्वी बताया गया है तो वही दूसरी और उसके लिए बाँझ, कामणगारी, कर्कशा जैसे शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। “राजस्थान का लोक जीवन और लोक साहित्य कामण या जाद टोने से काफी प्रभावित रहा है। संभवतः कामिनियों यहाँ कामण से सम्बन्धित अनेक गीत गाये जाते रहे जिनमें स्त्रियों को जाद-टोना जानने वाली तथा कामणगारी कहा गया है। उदाहरण स्वरूप कामण गीत की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं -

“दिल्ली के दरवाजै कामण मोल बिकै छै राज,
बाई का बाबोजी कामण मोल लिया छै राज
धाल तराज कामण तोल लिया छै राज
सेर दुसेरी राड केराधू, अध सैर न अधर नचांछू
तो मेरा कामण साचां।”

परिवार सामाजिक जीवन का महत्वपूर्ण अंग है। पति-पत्नी के मधुर एवं कोमल सम्बन्ध परिवार में ही पल्लविते होते हैं। पति-पत्नी के अर्थात्

तथा एकनिष्ठ प्रेम का सुन्दर वर्णन लोकगीतों के माध्यम से व्यक्त होता है। एक लोक गीत में प्रियतमा अपने प्रिय से उपवन में आकर मिलने की प्रार्थना करती है। पपीहे की पुकार उसके मिलने की उत्कण्ठा को बढा रही है लेकिन उसका प्रेमी विवाहित है। उसमें अपनी पत्नी के प्रति निष्ठा है वह अपनी पत्नी के प्रति वफादार है इसी प्रेम का वर्णन प्रस्तुत पंक्तियों के माध्यम से हुआ है -

“भंवर म्हारै बागां आजौ जी,
म्है बागां फिरू अकेली, पपैयो बोल्यो जी,
सुन्दर गोरी किस विध आवां जी म्हाकी परणी करै लड़ाई,
पपैयो बोल्यो जी!
भंवर थाकी परणी मरज्यो जी,
म्है बागां फिरू अकेली, पपैयो बोल्यो जी।
सुन्दर गोरी के थेंडै मरज्यौ जी
म्हाकी परणी वंस वधावै, पपैयो बोल्यो जी
म्हाकी परणी पूत खिलावै, पपैयो बोल्यो जी।”

इस प्रकार हम पाते हैं कि राजस्थानी लोक गीतों में नारी जीवन के विविध रूप देखने को मिलते हैं। नारी ने अपने अन्तः मन की पीड़ा को इन गीतों के माध्यम से ही प्रस्तुत किया है। नारी ने अपनी मनोवेदनाओं को गीतों के माध्यम से गाकर समाज के समक्ष रखा है। वह अपने सुख-दुःख, उत्सव त्योहार, रीति-रिवाज, पर्व प्रथा को मानने के लिए गार्ती है। राजस्थानी लोक गीतों में नारी को जहाँ एक और अपने पिता की कोयलड़ी तथा बाबोसा री लाडली दिखाया गया है। वहीं दूसरी और उसके जन्म पर मातम भी मनाया गया है। सन्तानहीनता को नारी के लिए अभिशाप माना गया है सन्तानहीन नारी को समाज तथा परिवारजनों द्वारा प्रताड़ित किया गया है। पुत्र जन्म पर जहाँ हर्ष व उल्लास मनाया जाता है वहीं आज भी पुत्री के जन्म पर दुःख मनाया जाता है। यह हमारे समाज की विडंबना ही है कि नारी को आज भी पुरुष अपने अनुकूल चलाना चाहता है उसे अपने नियंत्रण में रखना चाहता है हालाँकि समर्थ के साथ-साथ नारी की स्थिति में सुधार देखने को मिल रहा है किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी नारी जीवन में सुधार की आवश्यकता है।

सन्दर्भ सूची -

1. सद्दीक मोहम्मद: राजस्थानी लोक साहित्य एवं भारत गाथाएँ एक अध्ययन, मूल प्रकाशन, कमला नेहरू नगर, जोधपुर, संस्करण 2007, पृ.सं.-31
2. महीपाल सिंह राठौड़, गणगौर के लोक गीत, सुधन प्रकाशन, गोपालबाड़ी, जोधपुर, संस्करण-2018, पृ.सं.-5
3. नानुराम संस्कृती, राजस्थानी लोक साहित्य, राजस्थानी ग्रन्थागार सोजती गेट, जोधपुर, संस्करण-2020, पृ.सं.-48
4. नानुराम संस्कृती, राजस्थानी लोक साहित्य, राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर, संस्करण-2020, पृ.सं.-50
5. नानुराम संस्कृती, राजस्थानी लोक साहित्य, राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर, संस्करण-2020, पृ.सं.-51
6. नानुराम संस्कृती, राजस्थानी लोक साहित्य, राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर, संस्करण-2020, पृ.सं.-51
7. नानुराम संस्कृती, राजस्थानी लोक साहित्य, राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर, संस्करण-2020, पृ.सं.-52
8. नानुराम संस्कृती, राजस्थानी लोक साहित्य, राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर, संस्करण-2020, पृ.सं.-53
9. नन्दलाल कल्ला, हिन्दी का प्रादेशिक लोक साहित्य शास्त्र, राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर, प्रथम संस्करण-2014, पृ.सं.-111
10. रामसिंह, सूर्यकरण पारीक, नरत्तमदास स्वामी: राजस्थान के लोक गीत, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, संस्करण-2019, पृ.सं.-80
11. सोहनदास चरण: राजस्थानी लोक साहित्य का सैद्धांतिक विवेचन, राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर, संस्करण-2016, पृ.सं.-32
12. गोविन्द अग्रवाल, राजस्थानी लोकगीत, लोक संस्कृति शोध संस्थान नगरश्री चूरूस्ट, चूरू, प्रथम संस्करण-20136, पृ.सं.-36
13. गोविन्द अग्रवाल, राजस्थानी लोकगीत, लोक संस्कृति शोध संस्थान नगरश्री चूरूस्ट, चूरू, प्रथम संस्करण-20136, पृ.सं.-37
14. सोहनदास चरण, राजस्थानी लोकसाहित्य का सैद्धांतिक विवेचन, पृ.सं.-32
15. गोविन्द अग्रवाल, राजस्थानी लोकगीत, लोक संस्कृति शोध संस्थान नगरश्री चूरूस्ट, चूरू, प्रथम संस्करण-20136, पृ.सं.-28
16. गोविन्द अग्रवाल, राजस्थानी लोकगीत, लोक संस्कृति शोध संस्थान नगरश्री चूरूस्ट, चूरू, प्रथम संस्करण-20136, पृ.सं.-79
17. सद्दीक मोहम्मद, राजस्थानी लोक साहित्य एवं भारत गाथाएँ एक अध्ययन, पृ.सं.-52

Refined Sugar: Impact on Health

Dr. Sanjay Kumar Yadav*¹, Prof. C.K. Dixit¹, Dr. Dinesh Kumar Singh¹

¹Asst. Prof. Dr Shakuntala Misra National Rehabilitation University, Lucknow

²Prof. Dr Shakuntala Misra National Rehabilitation University, Lucknow

1. SUMMARY

Refined sugar a sugar that has been extracted from natural sources such as sugar cane, sugar beets, corn etc. it is primarily composed of sucrose and found in various forms such as granulated sugar, corn syrup. It may originate from natural sources but during refining process remove nutrients and leave only sugar. It is often use in food to enhance flavour. The recent years it is found that the over consumptions cause various health problems such as obesity, diabetes, blood pressure, aging etc. if you trying to eat healthy you do not go to day without sugar. Avoiding sugar is most difficult because it is found in most food. You may minimise the use of refined sugar. Any sugar that is naturally occurring in food are safe to eat. The natural sugar food material is enriched with nutrients along with sugar. Any sugar contains in naturally occurring food gets green light. Foods with added sugar gets yellow light and get red light food contain a lot of processed sugar. The consumption of natural sugar is a positive impact on health.

Keywords: Refined sugar, Natural sugar, Sucrose, Health

2. INTRODUCTION

Sugar is one of the simplest groups of carbohydrates known as monosaccharides general formula $C_6H_{12}O_6$, consisting of several sweet, colourless, water-soluble molecules found in seed plant sap and mammalian milk. The most prevalent sugar is sucrose; a crystalline tabletop and industrial sweetener found in meals and beverages. Sucrose also known as table sugar, is a disaccharide in nature represent by the general formula $C_n(H_2O)n-1$. It is also known as double sugar represent by $C_{12}H_{22}O_{11}$, that is include one molecule of glucose linked with one molecule of fructose via one molecule of H_2O molecule which is lost during condensation.



Refined sugar or white sugar is almost pure sucrose, that is when take in body hydrolysed in to simple sugar, glucose and fructose. Sucrose is mainly obtained from sugar cane (*Saccharum officinarum*) and sugar beet (*Beta vulgaris*). It is naturally produced from plant and play important role in cooking, backing, adding sweetness and texture to dishes.



Sugar Cane



Sugar beet

Refined sugar has no nutritional value and poses health risks. Only energy is contained in it; 387 calories are found in 100g of refined sugar. Consuming sugar can lead to a number of illnesses, including cancer and diabetes¹.

3. SUBJECT MATTER

Regularly consuming high amount of refined sugar can impact serious effect on your health. It can cause rapid spike and drop blood glucose level. Lead to weight gain, increase triglyceride level. It can affect mental health and energy level.

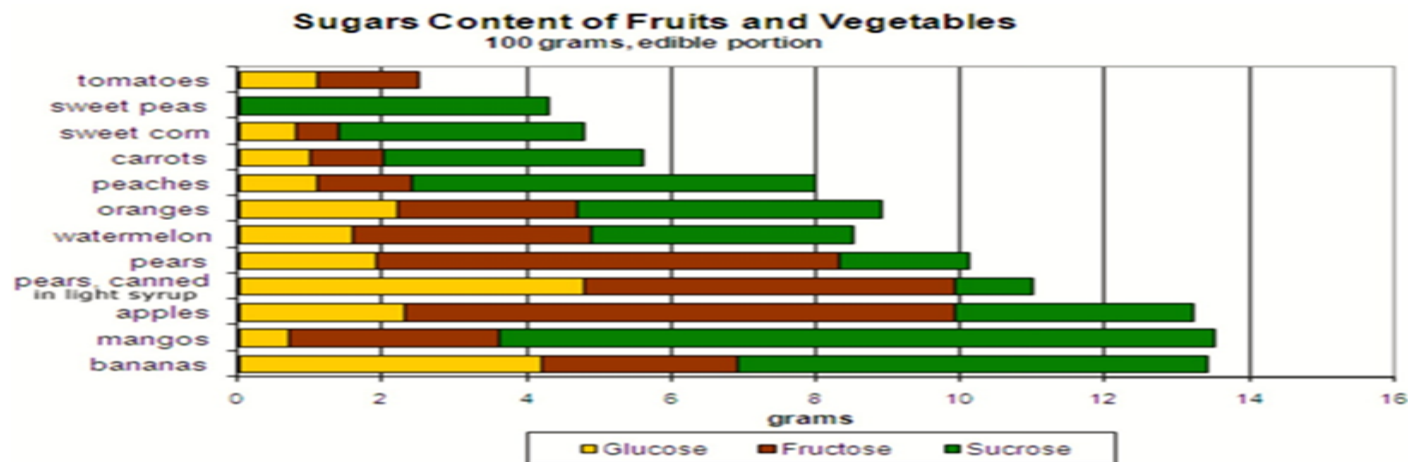
3.1 Sources of Sugar:

There is various source of refined sugar, these are fruits, vegetables, grains, dairy products etc.

Fruits Sources: Almost every fruit contains some form of sugar. The primary natural sugar found in fruits is fructose along with sucrose. Berries, bananas, oranges, apples, and so on are a few examples.

Vegetable source: Natural sugars are also present in some vegetables, like beets and carrots, but in smaller quantities than in fruits.

Dairy Product Sources: Another natural sugar is lactose, which is found in milk and yogurt. This covers goods like ice cream and cheese.



All vegetables or fruits contain mixture of simple sugar such as sucrose, glucose, fructose. The John Yudkin was first person suggest in 1972 sugar was a problem in their wrote book “*Pure, White and Deadly*”. He was the first to propose that the primary cause of diabetes, obesity, and coronary heart disease was the use of "processed sugars". The nutrition industry at the time, which was centred on low fat and fibre, discredited his study^{1,2}.

3.2 Varieties of Sugar



In Indian homes, white sugar is frequently used. It provides a sweet taste and a clean white appear because of its high level of purification and treatment. It is mostly used in tea, coffee, and baking and cooking.

Essential Characteristic:

- ◆ It is refined pure sugar.
- ◆ It has high glycaemic index valve.

White Sugar






It's mainly made from palm or sugarcane, jaggery is an unrefined sugar. Although it undergoes fewer steps of processing, it retains more nutrients. In Indian sweets, refreshments, and traditional food styles, jaggery is commonly used.

Essential Characteristic:

- ◆ It is rich in minerals as will as iron.
- ◆ Its often used in sweets.

Jaggery (Gur)

 <p>Brown Sugar</p>	<p>Brown sugar offers a damp texture and an earthy caramel flavour because it still contains some molasses. It is used in baking and cooking and is less processed than white sugar.</p> <p>Essential Characteristic:</p> <ul style="list-style-type: none"> ◆ It includes molasses with unique flavour. ◆ It has a good alternative for various recipes and flavours.
 <p>Khandsari Sugar (Khand)</p>	<p>The khand sugar, a traditional raw sugar, are used frequently in desserts and sweets. It is less processed and contains the sugarcane juice's nutrients.</p> <p>Essential Characteristic:</p> <ul style="list-style-type: none"> ◆ Its coarse texture with large crystals. ◆ Its often used in Indian food recipes.
 <p>Rock Sugar (Mishri)</p>	<p>The rock sugar is a crystalized form of sugar that is commonly used Indian kitchen. It is prepared by processing and evaporating sugarcane juice until it converts in solid crystals.</p> <p>Essential Characteristic:</p> <ul style="list-style-type: none"> ◆ It's a form of crystalized sugarcane juice. ◆ It's mostly used to ayurveda preparation for digestive benefits.

3.3 Comparison of different sugar

Sugar Type	Health benefits	Common use
White sugar	Excessive glycemic index and no calories.	Mostly used in sweetening the beverages, Desserts and baking.
Jaggery	Higher value of Iron, Minerals and digestive aid.	Mostly used as traditional sweet, beverages and curries.
Brown sugar	It's rich in minerals but retain molasses.	Used in sauces, desserts and baking.
Khandsari	It's a natural sugar that is less refined.	Mostly used drinking syrup, tea and cooking.
Rock sugar	It's a alkaline forming digestive aid.	Used in various ayurveda preparation, mouth fresheners in restaurant.

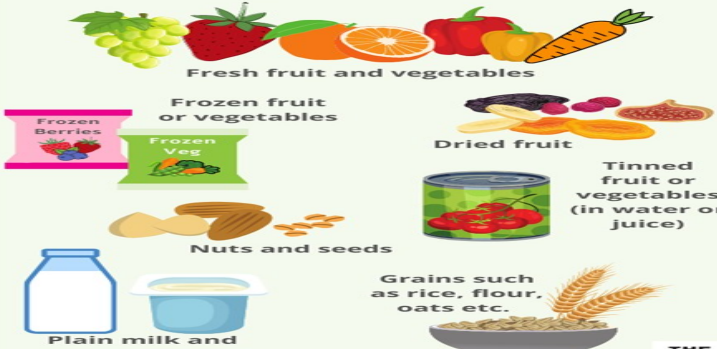
3.4 Added sugar vs Natural sugar

Natural Sugar Vs Added Sugar

What's the difference?


Natural Sugar

Those sugars found naturally occurring in foods such as fruits, vegetables, plain dairy, nuts, seeds & grains. These do not count towards daily sugar intake & consumption does not need to be reduced as these foods provide many nutrients.



Added Sugar

These get added to foods and drinks during manufacturing, in the home, by chefs or occur during food processing such as juicing. We need to reduce the amount of these sugars. Added sugar is also referred to as free sugar.



3.5 Nutrient profile of cane sugar

A major source of empty calories, cane sugar is lacking in essential nutrients and may increase blood sugar levels. Furthermore, it increases the risk of obesity, cavities, heart disease, and fatty liver. It is important to keep in mind that there are both refined and unrefined forms of cane sugar. Like white sugar, refined cane sugar is sucrose and is considered as nutritionally empty due to its lacking minerals³⁻⁶.

On the other hand, less processed foods like khaand, jaggery, or raw cane sugar include trace minerals like calcium, magnesium, and iron. However, unless they are consumed in extremely unsafe amounts, their health benefits are still limited. Making sensible decisions about nutrition therefore requires a knowledge of the differences between sugar varieties.

The nutrient profile can be more accurately determined by the degree of processing that is done to the cane sugar. According to Dr. Selvi, there are approximately regarding the following minerals in 100 grams of jaggery and khaand:

- ◆ Cu about 0.1 to 0.3 mg
- ◆ Zn about 0.2 to 0.4 mg
- ◆ Fe about 11 to 13 mg
- ◆ P about 20 to 90 mg
- ◆ Ca about 40 to 100 mg
- ◆ Mg about 70 to 90 mg
- ◆ K about 100 to 1000 mg

Iron, potassium, and magnesium are just some of the minerals that can be found in raw or unrefined cane sugars like jaggery or khaand, but you shouldn't consume excessive amounts of them if you want to get a lot of minerals. Although they are not a nutritious food, they are slightly better to refined sugar. Because of this, it's simply less of the worst; watch the amount you use^{5,6}.

3.6 Sugar statistic- India

Production Volume: For the 2024–25 sugar season (October–September), the Food Ministry predicts that 33 million metric tons (MMT) of sugar will be produced, which will be enough to cover the entire nation's annual need.

Consumption: Due in large part to the lack of important occurrences like the 2024 General Elections, India is expected to use 28 million tons of sugar in the 2024–25 sugar year, a decline of about 1.5 million tons from the previous year.

Recent Trends: India manufactured 9.54 million metric tons of sugar in January 2025, a 15.5% drop from the previous year. The main causes of the drop include unfavorable weather conditions and crop diseases, which contributed to lower cane yields in major agricultural areas like Maharashtra, Karnataka, and Uttar Pradesh⁷.

3.7 Sugar statistic- Global

Production Volume: The expected global sugar production for 2024–2025 is 186.6 MMT, that is increases 2.8 million tons from the previous year. Lower production in Brazil is more than offset by higher volumes production in China, India, and Thailand.

Consumption Trends: With expanding in nations like India, it is predicted that global sugar consumption will reach a new high⁷.

3.8 Advantage and disadvantage of sugar

3.8.1 Advantage of sugar

Immediate energy sources

Rapid Energy Boost: The body uses sugar, especially glucose, as a rapid energy source. Sugar is quickly absorbed into the bloodstream after consumption, giving rise to an instant energy boost. This can be especially beneficial for athletes or those who need to recover quickly from intensive physical activity.

Brain Function: Glucose is the main energy source for the brain. Sufficient glucose levels are essential for mental functions such as memory, focus, and basic brain function. Sugar consumption can significantly improve alertness and cognitive function.

Enhance enjoyment and flavour

Improved Taste: Foods and drinks taste significantly improved when sugar is added. It makes food more appetizing and pleasant by regulating acidity and bitterness. This can be especially important when preparing appetizing and nourishing meals, especially for kids and people with weaker appetites.

Culinary Versatility: Sugar is essential for texture, colour, and preservation in baking and cooking. By preventing microbial development, it helps preserve jams and jellies, gives baked goods a pleasing texture, and aids in the browning of baked goods^{8,9}.

Facilitate food preservation -In many foods, sugar serves as a preservative. High sugar content can prolong the shelf life of goods like sweetened preserves and canned fruits by inhibiting the formation of mould and bacteria. Food waste can be reduced and food items' shelf life can be increased due to this preservation effect.

Physiological and social valve -Mood Enhancement: Eating sugary foods can cause the brain's endorphins and serotonin, which are feel-good and mood-enhancing chemicals, to be produced. This can promote a feeling of wellbeing and provide momentary stress relief.

Cultural and Social Aspects: Sugar is important in many various cultural and social settings. Sweet food and desserts are essential to social interaction and group experiences during many traditional holidays and celebrations^{8,10}.

Nutritional supplemental valve -In order to make nutritional supplements and medications appealing to both adults and children, sugar is occasionally added to them. This might be very important for making sure that dietary supplements and therapies are taken as advised¹¹.

3.8.2 Disadvantage of sugar

Health risks and chronic disease

Obesity: Excessive sugar consumption is strongly linked to obesity. Consuming an excessive amount of sugar raises calorie intake, leading to weight gain. In turn, obesity is linked to a host of health issues, such as diabetes, heart disease, and several types of cancer.

Diabetes mellitus: One of the primary risk factors for type 2 diabetes is a diet heavy in sugar, especially added sugars and sugary drinks. Frequently eating excessive quantities of sugar can cause insulin resistance, which lowers the body's cells' sensitivity to insulin and raises blood sugar levels.

Cardiovascular Disease: Consuming a lot of sugar has been linked to a higher risk of cardiovascular disease. Consuming too much sugar raises blood pressure, lipid levels, and inflammation—all of which are heart disease risk factors⁸⁻¹¹.

Dental Health Problem

Tooth Decay: Dental caries, or tooth decay, is primarily caused by sugar. Sugar is consumed by oral bacteria, which then produce acids that break down tooth enamel and cause cavities. The risk of dental problems is increased when poor tooth hygiene and an excessive amount of sugar are coupled.

Gum Disease: Continually consuming sugar-filled foods and beverages might aggravate gum disease. Gum and tooth damage can result from gingivitis and periodontitis, which are caused by bacteria that flourish in a high-sugar environment.

Effect on metabolic health

Insulin Resistance: Insulin resistance is a result of insulin action being interfered with by excessive sugar consumption. This disorder makes it more challenging for the body to properly control blood sugar levels, which elevates the risk of type 2 diabetes and contributes to metabolic syndrome⁹⁻¹³.

Non-Alcoholic Fatty Liver Disease (NAFLD): Non-alcoholic fatty liver disease is linked with high fructose and other sugar intake. The liver breaks down fructose, which can lead to inflammation, fat accumulation, and liver damage.

Addictive potential-Sugar Cravings: Sugar's addictive qualities can cause overindulgence and cravings. Sugar's pleasurable effects can lead to a vicious cycle of dependency, making it difficult for people to cut back or regulate their use.

Behavioural Problems: According to certain research, consuming too much sugar may be linked to behavioural disorders like mood swings, impatience, and a loss of self-control. This may have an effect on general wellbeing and mental health^{8,9}.

Nutrient deficiency -Empty Calories: Foods with a lot of added sugar frequently produce "empty calories," which are energy-boosting foods devoid of vital nutrients. Because sugary foods frequently replace more nutrient-dense options in the diet, relying on them can result in dietary shortages.

Impaired Nutrient Absorption: Consuming a lot of sugar might make it more difficult for the body to absorb vital nutrients. The body's capacity to absorb nutrients from other foods may be hindered by too much sugar, which could result in vitamin and mineral shortages⁸⁻¹³.

Factor in Inflammation -Consuming a lot of sugar has been associated with increased inflammation in the body, which can lead to a number of health problems, including arthritis, cardiovascular disease, and other inflammatory illnesses. Consuming too much sugar might cause an inflammatory response that can be detrimental to one's general health and

May accelerate the skin aging process-A diet heavy in sugar and processed carbohydrates causes the body to produce AGEs, which can cause premature aging of the skin¹¹⁻¹³.

Sugar and cancer -The scientific data about sugar consumption and cancer has been examined by specialists affiliated with World Cancer Research Fund International³. Although the evidence was characterized as limited and contradictory,

this report raised the possibility of an elevated risk of colorectal cancer in areas with high consumption of foods high in sugar^{3,4}. The Carbohydrates and Health Report of the Scientific Advisory Committee on Nutrition in 2015 found no correlation between the incidence of colorectal cancer and the consumption of sugar-sweetened beverages, but it did conclude that there was insufficient evidence to draw conclusions about the relationship between sugar intake and colorectal cancer¹⁴⁻¹⁶.

Sugar depresses immune system -According to a 1973 Loma Linda University study, sugar consumption alters white blood cells that fight bacteria for at least five hours after consumption. On the job, the immune cells were slow. Have you ever observed your children become ill.

According to more recent research from 2018, insulin resistance, which ultimately impairs the immune system, is the mechanism by which sugar damages the immune system¹⁷⁻¹⁹.

4. OBJECTIVE OF STUDY -Knowing sugar's benefits and drawbacks highlights how crucial moderation and balanced consumption are. Although sugar provides benefits like instant energy and enhanced flavour, consuming too much of it can have serious negative health effects. In order to keep a healthy diet, you must:

Moderate Intake: Restrict your intake of sugar-filled foods and drinks. Choose natural sweeteners, including fruits, which offer both natural sugars and vital elements.

Examine the labels: Be mindful of hidden sugars in processed foods and pay attention to food labels. Making healthier food choices and controlling total sugar intake can be aided by this.

Give Whole Foods Priority: A diet high in complete, unprocessed foods should be the main focus. To guarantee a balanced nutrient intake, include a range of fruits, vegetables, entire grains, and lean proteins.

Educate on Health Effects: Educate yourself and other people on the possible negative health effects of consuming too much sugar. Improving awareness can help people make healthier food choices and improve their general health and wellbeing.

5. CONCLUSION—Sugar plays a complicated role in our diets, with both advantages and disadvantages. Although sugar provides flavour, provides you quick energy, and is used in traditions and food preservation, too much of it may result in serious health issues like obesity, diabetes, and heart disease. To maintain optimum wellness, it is essential to find a balance between minimizing the hazards related to sugar and enjoying its health advantages. Humans can minimize the potential harmful effects of sugar while still enjoying its benefits by making educated decisions and limiting their intake.

6. REFERENCES:

1. Margaret A. Clarke, sugar; Sweet-testing carbohydrates [Internet, cited 2025, July 30]. Available from: <https://www.britannica.com/science/sugar-chemical-compound>
2. Sugar. What you need to know. - Eat yourself Brilliant [Internet, cited 2025, July 30]. Available from: <https://eatyourselfbrilliant.co.uk/sugar-what-you-need-to-know/>
3. Types of Sugar - Demystifying Sugar Varieties - AISTA Guide [Internet, cited 2025, July 31]. Available from: <https://aista.co.in/about-sugar/types-of-sugar/>
4. A Nutritionist's Guide to Sugar – The Nutrition Consultant [Internet, cited 2025, July 31]. Available from: <https://thenutritionconsultant.org.uk/guide-to-sugar/>
5. About cane sugar reality and nutritional value [Internet, cited 2025, July 31]. Available from: <https://www.indiatoday.in/lifestyle/wellness/story/the-bittersweet-truth-about-cane-sugar-is-it-really-healthy->
6. All of the Nutritional Facts You Need to Know About Sugar [Internet, cited 2025, august 04]. Available from: <https://www.goodhousekeeping.com/health/diet-nutrition/a34536840/sugar-nutrition-facts/>
7. Sugar: India & Global Trends - Market Analysis by AISTA [Internet, cited 2025, July 31]. Available from: <https://aista.co.in/sugar-india-global-trends/>
8. The Advantages and Disadvantages of Sugar: A Comprehensive Analysis [Internet, cited 2025, august 04]. Available from: <https://medium.com/@habibullah81839/the-advantages-and-disadvantages-of-sugar-a-comprehensive-analysis-7d30fb0ced76>
9. Advantages & Disadvantages of Sugar | Healthfully [Internet, cited 2025, august 04]. Available from: <https://healthfully.com/advantages-disadvantages-of-sugar-12683226.html>
10. Advantages and Disadvantages of Sugar – Statetimes [Internet, cited 2025, august 04]. Available from: <https://statetimes.in/advantages-and-disadvantages-of-sugar/>
11. The Sweet and Sour Side of Sugar: Advantages and Disadvantages [Internet, cited 2025, august 07]. Available from: <https://pros-versus-cons.com/health-wellbeing/food/sugar/>
12. Sugarcane Juice – Benefits, Nutrition, Disadvantages [Internet, cited 2025, august 07]. Available from: <https://www.healthifyme.com/blog/sugarcane-juice/>
13. Reasons Why Too Much Sugar Is Bad for You [Internet, cited 2025, august 07]. Available from: <https://www.healthline.com/nutrition/too-much-sugar>
14. World Cancer Research Fund/American Institute for Cancer Research, Food, nutrition, physical activity and the prevention of cancer: a global perspective. 2007, Washington DC: AICR.
15. World Cancer Research Fund / American Institute for Cancer Research. Continuous Update Project Report. Food, Nutrition, Physical Activity, and the Prevention of Colorectal Cancer. 2011
16. SACN (2015) Carbohydrates and Health Report [Internet, cited 2025, august 13]. Available from: https://www.gov.uk/government/uploads/system/uploads/attachment_data/file/445503/SACN_Carbohydrates_and_Health.pdf
17. Sanchez, A., Reeser, J. L., Lau, H. S., Yahiku, P. Y., Willard, R. E., Mcmillan, P. J., . . . Register, U. D. (1973). Role of sugars in human neutrophilic phagocytosis. *The American Journal of Clinical Nutrition*, 26(11), 1180-1184.
18. Yu, S., Zhang, G., & Jin, L. H. (2018). A high-sugar diet affects cellular and humoral immune responses in *Drosophila*. *Experimental Cell Research*, 368(2), 215-224.
19. Sugar is a food that affects our health in profound ways [Internet, cited 2025, august 17]. Available from: <https://www.newscientist.com/definition/sugar/>

Beyond Borders: The Role of Global Governance in Solving Transnational Issues

Dr. Subhash Kumar Baitha
Assistant Professor

Department of International Relations Central University of Jharkhand
Ranchi- 835222 Jharkhand, India **Email-** subhgnu@gmail.com

Sumit Kumar Rajak
Research Scholar

Department of International Relations Central University of Jharkhand
Ranchi- 835222 Jharkhand, India **Email-** sumit078495@gmail.com

Abstract-This article explores the growing importance of global governance in addressing transnational challenges that transcend national boundaries, including climate change, pandemics, cyber security threats, and global trade inequalities. It highlights the limitations of traditional state-centric approaches and emphasizes the role of international organizations, transnational networks, and public-private partnerships in fostering cooperation and resilience. Climate governance is examined through mechanisms such as the Paris Agreement, climate justice initiatives, renewable energy transition, and reforestation efforts. The article also discusses global health pandemics, emphasizing the need for democratized decision-making, transparency, and technological innovation in preparedness and response. In the digital sphere, cyber security governance is analyzed through multilateral treaties, collaborative frameworks, and capacity building. Finally, global trade is reviewed in the context of widening economic inequalities, stressing the necessity of fair trade policies, inclusive growth, and stronger representation of developing nations in international financial institutions. The conclusion underscores that only through strengthened multilateralism, equity, and innovation can humanity collectively tackle twenty-first-century challenges and secure a sustainable and just global future.

Keywords-Global governance; Climate change; Climate justice; Renewable energy; Reforestation; Global health pandemics; Cyber security governance; International law; Transnational networks; Global trade; Economic inequality; Multilateralism; Sustainable development; Public-private partnerships; International cooperation.

Introduction-The term "global governance" describes the frameworks and joint initiatives used by nations, non-governmental organizations (NGOs), international institutions, and other transnational actors to solve issues that cut across national boundaries. It entails establishing guidelines, standards, and regulations to control conduct on international matters, guaranteeing the efficient management of a range of interests while promoting global collaboration. Climate change, pandemics, and cyber

examples of global concerns that demand coordinated tactics and policies that are beyond the scope of individual countries. The difficulties of maintaining fundamental rights and values while regulating cyberspace, an area that transcends national boundaries, have grown more evident in the digital age. This calls for complex interactions between digital regulations, global governance, and international law (Babikian, 2024). In this approach, transnational networks are essential. Sub-national actors can keep abreast of world events and gain knowledge from one another's approaches to addressing issues such as economic downturns and climate change by taking part in these networks. Through sharing achievements and errors, this teamwork encourages people to get better (Seven Erdoğan, 2024). In a time of globalization and interconnectedness, the problems that humanity faces are becoming more and more universal. Problems including pandemics, cybercrime, international terrorism, climate change, and migration crises are no longer limited to a single nation; rather, they are global in nature and call for coordinated action. The conventional strategy of sovereign states acting independently is insufficient as these transnational issues get more complex. In order to solve common problems and promote cross-border cooperation, global governance a framework of international organizations, networks, and cooperative mechanisms comes into play.

Key points on Transnational Challenges Requiring Global Governance- Climate Change: Today the current situation is to be climate change is one of the most important because the whole world suffer and try to find the solution how to overcome these issues. The IPCC assesses the current level of climate change understanding. It shows the areas in which the scientific community agrees on climate change-related issues (IPCC — Intergovernmental Panel on Climate Change, 2019). The IPCC creates thorough assessment reports that cover the current level of scientific, technical, and socioeconomic information regarding climate change, its effects, potential hazards, and ways to slow down its pace. In

addition, it generates Methodology Reports that offer instructions for creating greenhouse gas inventories and Special Reports on subjects decided upon by its member governments. The most recent report is the Sixth Assessment Report, which includes a Synthesis Report and three Working Group contributions. The Synthesis Report was completed in March 2023, the Working Group I contribution was completed in August 2021, the Working Group II contribution in February 2022, and the Working Group III contribution in April 2022. With the election of a new Chair and new IPCC and TFI Bureaus in July 2023, the IPCC officially commenced its seventh assessment cycle (IPCC — Intergovernmental Panel on Climate Change, 2019). UNDP seeks to assist fragile and conflict-affected nations by addressing the effects of the climate emergency on conflict through integrated solutions. With a focus on climate-proofing conflict prevention and peacebuilding, as well as making sure that efforts related to nature, climate, and energy have a positive impact on peace, this includes programmatic support for governments on climate security through the Climate Security Mechanism with DPPA, UNEP, and DPO (Expertise, 2020). "The new finance goal agreed at the UN Climate Conference in Baku is an insurance policy for humanity," UN Climate Change Executive Secretary Simon Stiell emphasized. "This agreement will safeguard billions of lives and continue to grow the clean energy boom." All nations will be able to benefit from the enormous advantages of aggressive climate action, including higher development, more jobs, and more affordable and clean energy. It only functions, however, provided the premiums are paid in whole and on schedule, just like any other insurance policy (UN Climate Change Conference Baku - November 2024 | UNFCCC, 2024).

The ways for good Climate Governance

1.Strengthening International Commitments: The Paris Agreement (2015) is a landmark accord under the United Nations Framework Convention on Climate Change (UNFCCC) that aims to limit global temperature rise to well below 2°C, with efforts to keep it within 1.5°C (UNFCCC, 2015). To strengthen commitments, countries must increase their Nationally Determined Contributions (NDCs), ensuring ambitious emissions reduction targets backed by enforceable mechanisms (*Climate Change 2021: The Physical Science Basis*, 2021).

- i. Enhancing Multilateral Agreements
- ii. Accountability and Compliance Mechanisms
- iii. Financing Climate Action
- iv. Strengthening Regional Cooperation
- v. Integrating Climate Policy into Trade and Development

2.Promoting Climate Justice: A key component of global climate governance is climate justice, which acknowledges that vulnerable people, especially those in the

Global South, are disproportionately impacted by climate change. To address these discrepancies, equitable policies, funding, and participatory decision-making are essential components of effective climate governance.

- i. Recognizing Historical Responsibility and Fair Burden Sharing
- ii. Strengthening Loss and Damage Mechanisms
- iii. Expanding Climate Finance for Vulnerable Nations
- iv. Indigenous and Local Community Right
- v. Gender and Social Inclusion in Climate Policies

To make sure that current disparities are not made worse by global climate policies, climate justice is crucial. Achieving a fair and sustainable future requires bolstering financial systems, acknowledging past obligations, and elevating the voices of underrepresented groups.

3.Enhancing Public-Private Partnerships: By utilizing both private sector innovation and governmental assistance, public-private partnerships (PPPs) are essential to global climate governance. Sustainable development, resilience, and the shift to a low-carbon economy can all be accelerated by governments, corporations, and international organizations working together effectively. Accelerating climate action requires strengthening public-private partnerships. Global governance may leverage the potential of PPPs to promote inclusive and sustainable climate solutions by promoting financial incentives, enhancing corporate accountability, and easing technology transfer.

- i. Mobilizing Private Sector Investment in Green Infrastructure
- ii. Promoting Corporate Sustainability and Net-Zero Commitments
- iii. Technology Transfer and Innovation
- iv. Strengthening Climate Risk Disclosure and Accountability
- v. PPPs for Climate Resilience and Adaptation

4.Scaling Up Climate Financing:A key element of global climate governance is climate finance, which makes sure that initiatives for adaptation and mitigation are adequately funded. To make the shift to low-carbon economies and improve climate resilience, developing nations especially those most at risk from climate change need substantial financial assistance. Increasing financial commitments, enhancing fund accessibility, and utilizing both public and private investments are all part of scaling up climate financing. The pricing of risk to enable well-informed, effective capital-allocation decisions is one of the fundamental roles of financial markets. Financial markets require timely and accurate disclosure from businesses in order to perform this job. A misallocation of capital could result from investors and others pricing or valuing assets erroneously in the absence of accurate information. The TCFD (Task Force on Climate-Related Financial Disclosures) published climate-related financial

disclosure guidelines in 2017 to assist businesses in supplying more accurate data to promote market transparency and better-informed capital allocation (TCFD, 2020)

5. Renewable Energy Transition: A key component of global climate governance is the shift to renewable energy, which aims to lower greenhouse gas emissions, improve energy security, and encourage sustainable economic growth. To expedite this shift and guarantee fair access to sustainable energy technologies and funding sources, a concerted global effort is needed. The transition to renewable energy necessitates strong international governance frameworks, financial assistance for developing nations, and regional collaboration. By strengthening policy commitments, promoting technological transfer, and eliminating subsidies for fossil fuels, the world can hasten the transition to a sustainable and just energy future. In 2024, global energy investment is expected to surpass USD 3 trillion for the first time, with USD 2 trillion allocated to clean energy infrastructure and technology. Since 2020, clean energy investment has increased, and the total amount spent on coal, oil, and gas has now been surpassed by the amount spent on renewable energy, grids, and storage (*World Energy Investment 2024*, 2024).

1. Strengthening Global Commitments to Renewable Energy
2. Promoting International Investment and Technology Transfer
3. Regional Energy Partnerships for Sustainable Growth
4. Phasing Out Fossil Fuel Subsidies and Carbon Pricing
5. Scaling Up Innovation in Energy Storage and Smart Grids

6. Global Reforestation Efforts: Because it improves carbon sequestration, restores ecosystems, and fosters biodiversity, reforestation is an essential tactic for reducing the effects of climate change. Large-scale reforestation projects must be given top priority by global governance through international collaboration, funding, and policy enforcement since forests serve as carbon sinks. One of the most important pillars in the fight against climate change is global reforestation, but it needs effective governance, funding, and enforcement of policies. Global leaders may greatly improve carbon sequestration and biodiversity protection by increasing worldwide reforestation initiatives, stopping additional deforestation, and strengthening local communities. The global challenge of climate change necessitates global solutions. Addressing this international issue requires effective global governance to guarantee responsibility, promote collaboration, and coordinate efforts. International agreements and cooperative efforts have achieved great strides, but much more needs to be done to close the gaps in equity, funding, and action. The international community can pave the way for a resilient and just future for everybody by

emphasizing shared responsibility and sustainable behaviors.

7. Health Pandemics: Among the most serious international risks that humanity faces are health pandemics. The rapidity at which viruses can spread across borders in a globalized environment has been shown by diseases like COVID-19, H1N1, Ebola, and HIV/AIDS. Since worldwide coordination is necessary to contain a pandemic, addressing such crises calls for a global approach. 196 nations, including the 194 WHO Member States, are bound by the IHR, an instrument of international law. The response to the devastating epidemics that once swept over Europe gave rise to the IHR (International Health Regulations). They give nations rights and responsibilities, such as the need to report incidents involving public health. The Regulations also specify the standards used to decide whether a certain incident qualifies as a "public health emergency of international concern" (World, 2019). Institutions like the World Health Organization (WHO) play a central role in coordinating responses, such as sharing information, issuing guidelines, and mobilizing resources.

To strengthen global governance for future pandemics, the following steps are crucial:

Democratize Decision-Making: Ensure equal representation of all nations in global health institutions.

Increase Funding for Health Systems: Invest in global health preparedness to minimize future outbreaks.

Enhance Transparency and Accountability: Build trust in global institutions by ensuring fairness and open communication.

Leverage Technology: Use AI and big data to enhance disease surveillance and response capabilities.

Health pandemics serve as a sobering reminder of our common vulnerability as a species and the need for cooperation. Despite its difficulties, global governance continues to be the mainstay of pandemic response and prevention. A more robust and cohesive global health system can be achieved through global governance by promoting cooperation, guaranteeing fair resource distribution, and resolving systematic injustices. We can lessen future dangers and safeguard the welfare of everyone, regardless of geography, by continuing to invest and innovate.

Cybersecurity: In the current digital era, cybersecurity has emerged as one of the most important worldwide issues. Our world is becoming more interconnected due to the internet's and technology's rapid growth, which has led to the emergence of new vulnerabilities that cut across national borders. Cyber threats have a destructive and far-reaching effect, ranging from ransomware attacks that destroy vital infrastructure to state-sponsored cyber-espionage that targets governments and businesses. No one country can address these dangers alone as

cyberattacks increase in frequency, sophistication, and scale. Cybersecurity is now a genuinely transnational problem that calls for international collaboration and group effort. But handling the intricacies of cyberspace governance is no easy feat. Coordination is challenging due to competing national agendas, the lack of uniform rules, and the internet's global reach. With 196 member nations, INTERPOL assists police in every one of them in collaborating to make the globe a safer place. Along with providing a variety of operational and technical assistance, we allow them to exchange and access information about crimes and offenders. The four international sectors we believe to be the most urgent right now—terrorism, cyber-crime, organized crime, and financial crime & anti-corruption (INTERPOL, 2017). In addition to demonstrating the Union's commitment to facilitating the execution of the WSIS action lines and accomplishing the Sustainable Development Goals (SDGs), the targets reflect the impact and long-term impact of ITU's activities and show progress towards the Union's strategic goals. By measuring, ITU will cooperate with the entire spectrum of other organizations and entities worldwide dedicated to promoting the use of ICTs and telecoms for a connected world by 2030 (ITU Strategic Plan 2024-2027, 2024).



Fig: ITU Strategic plan 2024-2027 Strategic framework ITU Strategic Plan 2024-2027. (2024). ITU.

<https://www.itu.int/en/council/planning/Pages/default.aspx>

The ways for good Cybersecurity Governance, are:

1. Developing a Comprehensive Global Treaty
2. Strengthening Public-Private Partnerships
3. Promoting Digital Literacy and Capacity Building
4. Fostering Trust Among Nations.

International efforts for good Global Cybersecurity Governance are the *Budapest Convention on Cybercrime* (2001): The first international treaty on cybercrime, the *United Nations Open-Ended Working Group* (OEWG) and the *Group of Governmental Experts* (GGE) on information security, regional frameworks like the European Union's GDPR and the African Union Convention on Cybersecurity, multistakeholder Approaches: collaboration among states, NGOs and private sector (e.g. tech companies) and cyber norms development: efforts to

establish norms for responsible state behavior in cyberspace , such as not targeting critical civilian infrastructure during peacetime.

Global Trade and Economic Inequality: Beginning in the 1980s, free market reforms were encouraged in the developing countries by the US government and Bretton Woods organizations such as the countries Bank and the International Monetary Fund. The opening of domestic economies to foreign investment and goods was a crucial component of these reforms. Since then, the predominant tendency in economic development in both developed and developing nations has been globalization, which is fueled by trade liberalization and international capital flows. When the Soviet bloc nations began opening up their economies in the 1990s following the conclusion of the Cold War, the trend picked up speed. A steady increase in international trade and investment over the next 20 years was encouraged by the establishment of the World Trade Organization (WTO) in 1994, a strong supranational organization that replaced the General Agreement on Tariffs and Trade to intensify efforts to remove trade and investment barriers worldwide (Hung, 2021). Global trade, which links countries via the interchange of capital, products, and services, has been a significant force behind economic growth and progress. Globalization and trade liberalization have boosted innovation, opened up new markets, and lifted millions out of poverty in recent decades. These advantages haven't been shared equally, either. Economic disparity within and across nations has increased as a result of some nations and regions thriving while others have been left behind. The disparity in income, unequal access to international markets, and worker exploitation in developing countries serve as clear reminders of the difficulties that come with the system of international trade. Not only is economic inequality a moral problem, but it also destabilizes global development when it is made worse by trade imbalances. The poorest countries run the risk of increased marginalization in a system that disproportionately favors wealthier states if egalitarian policies are not implemented. Addressing these inequities requires effective global governance. Fair trade policies, inequality reduction, and inclusive economic growth can be fostered by organizations such as the World Trade Organization (WTO), International Monetary Fund (IMF), and regional trade associations. Economic growth has been brought about by global trade, but this growth has not been distributed fairly, which has widened economic gaps. The wealthiest countries control a disproportionate amount of global commerce and gain economically.

from it, especially developed economies like the United States, China, and member states of the European Union. On the other hand, because of high tariffs, restricted access to cutting-edge technology, and diminished negotiating power, developing countries frequently find it difficult to compete in the global market. In the context of overlapping crises, the State of Economic Inclusion Report (SEI) 2024 examines initiatives to expand economic inclusion programs—bundles of coordinated, multifaceted interventions that assist people, households, and communities in increasing their incomes and assets in a sustainable manner. By increasing their resilience and generating employment prospects, these initiatives improve the financial circumstances of the most vulnerable and impoverished individuals (Open Knowledge Repository, 2025).

Institutions in Global Trade Governance

1. World Trade Organization (WTO): The WTO plays a key role in creating international trade regulations. Nonetheless, a lot of developing nations contend that WTO regulations are unfair and give wealthier countries more influence over international trade policies.

2. International Monetary Fund (IMF) and World Bank: Both organizations lend money and offer financial support to developing nations, but detractors contend that the terms of these loans frequently put economic expansion ahead of social justice, thereby increasing inequality.

3. Regional trade agreements: Developing nations have the chance to boost intraregional trade and lessen their dependency on wealthier economies through regional trade agreements such as the African Continental Free Trade Area (AfCFTA) or Mercosur in South America. ASEAN as tools to empower developing regions.

Conclusion:

The problems we confront, whether they are related to public health issues, economic injustice, cybersecurity threats, or climate change, transcend national borders in our increasingly interconnected globe. Strong global governance frameworks that place a high priority on cooperation, inclusion, and sustainability are necessary to drive collective action on these transnational concerns. Even though established organizations like the World Trade Organization, United Nations, and international financial authorities have achieved great progress in promoting collaboration, the ongoing disparities in representation, accountability, and equity underscore the necessity for change. The way forward necessitates a fresh dedication to multilateralism, in which countries put aside their limited self-interests in order to collaborate for common objectives. In addition to assisting in the mitigation of current crises, strengthening global governance lays the

groundwork for future peace, prosperity, and resilience. The international community can guarantee that no country or community is left behind in addressing the intricate problems of the twenty-first century by resolving inequities, elevating underrepresented voices, and encouraging innovation. In an interconnected world, the issues we face are no longer confined by borders. Global governance represents humanity's best hope for addressing these challenges, ensuring a future defined by unity, resilience, and progress for all.

References:

1. Babikian, J. (2024, January 1). *Beyond Borders: International Law and Global Governance in the Digital Age*. <https://doi.org/10.13140/RG.2.2.30094.95042>
2. Seven Erdoğan. (2024, December 4). *Building Bridges Beyond Borders: Unlocking the Role of Transnational Networks in Paradiplomacy*. E-International Relations. https://www.e-ir.info/2024/12/04/building-bridges-beyond-borders-unlocking-the-role-of-transnational-networks-in-paradiplomacy/?utm_source=chatgpt.com
3. IPCC — Intergovernmental Panel on Climate Change. (2019). [ipcc.ch](https://www.ipcc.ch/); IPCC. <https://www.ipcc.ch/>
4. World. (2019, December 11). *International health regulations*. Who.int; World Health Organization: WHO. https://www.who.int/health-topics/international-health-regulations#tab=tab_1
5. INTERPOL. (2017). *INTERPOL | The International Criminal Police Organization*. Interpol.int. <https://www.interpol.int/>
6. *ITU Strategic Plan 2024-2027*. (2024). ITU. <https://www.itu.int/en/council/planning/Pages/default.aspx>
7. Hung, H. (2021). Recent Trends in Global Economic Inequality. *Annual Review of Sociology*, 47(1), 349–367. <https://doi.org/10.1146/annurev-soc-090320-105810>
8. *Expertise*. (2020). UNDP. <https://www.undp.org/expertise>
9. *UN Climate Change Conference Baku - November 2024 | UNFCCC*. (2024, November 24). Unfccc.int. <https://unfccc.int/cop29>
10. *Open Knowledge Repository*. (2025). Worldbank.org. <https://openknowledge.worldbank.org/entities/publication/e7d7c0e7-7885-479f-86da-42d0f4f1b65e>
11. *Climate Change 2021: The Physical Science Basis*. (2021). Ipcc.ch; IPCC. <https://www.ipcc.ch/report/ar6/wg1/>
12. *Task Force on Climate-Related Financial Disclosures (TCFD)*. (2020). Task Force on Climate-Related Financial Disclosures. <https://www.fsb-tcf.org/about/#the-climate-challenge>
13. *World Energy Investment 2024 – Analysis - IEA*. IEA. <https://www.iea.org/reports/world-energy-investment-2024/overview-and-key-findings>

Analyzing internal migration in Raebareli, Uttar Pradesh

Harsh Vardhan Awasthi & Dr. Sarada Prasad

Doctoral Scholar & Assistant Professor
School of Extension and Development Studies
Indira Gandhi National Open University

Abstract:

As rapid urbanization transforms regions across India, understanding migration patterns becomes important for effective urban planning and policy-making. Raebareli, a district in Uttar Pradesh, will witness substantial urban development due to its inclusion in the State Capital Region, prompting this study to explore migration trends in the area. This study aims to analyze internal migration patterns in Raebareli, focusing on the drivers, streams, and demographic characteristics of migrants, providing crucial insights for future policy frameworks. This research utilizes secondary data from the Census of India's D-series Migration tables to assess intra-district, inter-district, and inter-state migration patterns. The study focuses on in-migrants in both rural and urban regions of Raebareli, analyzing volume, reasons, and spatial distribution. The study finds that rural migration is mainly driven by marriage, which constitutes the largest proportion of in-migration, with women accounting for the majority of migrants. Interestingly, work-related migration is almost equally split between rural and urban areas, indicating a strong employment base in rural regions. Furthermore, the majority of migrants have resided in the district for over 10 years, indicating long-term settlement trends. Migration from neighboring districts such as Sultanpur and Pratapgarh dominates, while inter-state migration remains minimal. These findings emphasize the importance of developing targeted rural policies, improving urban infrastructure, and creating regional employment opportunities to accommodate future migration inflows. This study can guide strategic planning for urban expansion and rural development in Raebareli.

Keywords: Census, Migration, State Capital Region, Urbanization, Women & Rural Development.

Introduction: The term internal migration refers to the migration within the boundaries of a given nation. It is operationally defined in terms of residential moves across civil divisions such as districts, states, rural, and urban areas (Pathak and Ram, 2015). All migrations that take place within the territorial jurisdiction of a country are distinguished as internal migrations (Chandna, 2016). Migration is not merely a movement of people, but it is a fundamental factor helping to explain the ever-changing space-content and space-

relations in a country (Gosal, 1961).

It has been generally observed that migration tends to flow towards the areas of greater economic opportunities, urban industrial concentration, and areas with abundant development activities (Vaidyanathan, 1967 & Gosal and Krishan, 1975).

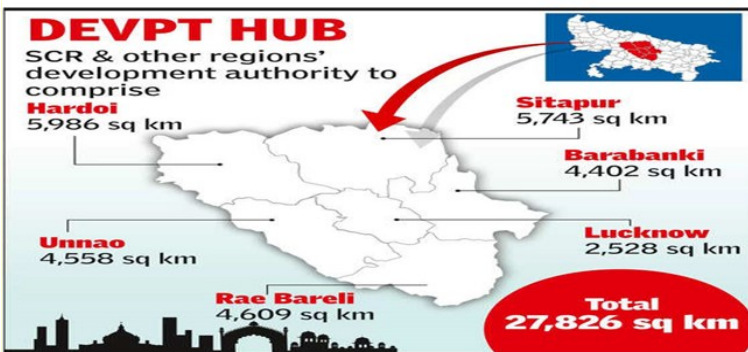
Migration and occupational structure are often an outcome of traditional social/caste stratification in India (Madheswaran and Attewell 2007; Morris, 1965). With 68% of all the workers being cultivators and agricultural laborers, the district is more likely to experience in and out-migration. The rural-urban migration stream makes significant contributions to the process of urbanization and indicates the attractiveness of an urban center (Bose, 1967). Further, the main factors of migration are often related to expanding employment opportunities, encouragement by close relatives, and expectation of a better life in the urban area (Majumdar and Majumdar, 1978). With growing urbanization, these cultivators and agricultural laborers are more likely to migrate to have better income opportunities.

The district population constitutes 30% of people from the Scheduled Caste. Singh (2018) found that credit constraints play a very important role in undertaking migration sections, especially for underprivileged and poor households in rural Uttar Pradesh. Muller and Shareef (2010) found positive relationships between remittances received and schooling attendance of teens, and this magnitude is highest among marginalized and downtrodden classes. Unemployment, land ownership, and maximization of their income are the most important determinants for rural-urban migration. Singh (2014) found that social networks play a very important role in facilitating migration. Improved transportation, communication, amenities, rural-urban interaction, and changes in social values have also promoted urban migration (Cherunilam, 1987). Regarding the type of migration, the usual statistics reveal that there is an inverse relation between the number of in-migrants to cities and the distance of migration (Gosal, 1961). This study was carried out as there was no structured data available about the district on migration. Since Raebareli is expected to grow at a very rapid pace in the

coming years, it becomes even more pertinent to do a study on migration patterns so that policy measures can be taken to ensure seamless movement of people in the times to come.

Study Area: Raebareli district lies at 26.23' North latitude and 81.24' East longitude. It is the 27th largest district of Uttar Pradesh, lying south of the Awadh region. It has an area of 4609 sq km with 6 tehsils, 9 towns, and 1733 villages. It has a population of more than 34 lakhs, of which 91% live in rural areas. Its economy is largely agrarian, with a significant portion of the workforce engaged in agriculture and allied activities, making it a compelling case for studying migration patterns as the district undergoes urbanization. Due to the presence of national institutes like National Institute of Fashion Technology (NIFT) and National Thermal Power Corporation (NTPC), Unchhahar, and the Indian Telecom Industry (ITI), the district has attracted skilled manpower in the past. Institutes like the Rail Coach Factory and AIIMS became fully operational after the Census 2011, so their impact on migration is unaccounted for. Located just adjacent to the state capital Lucknow, Raebareli has a strategic location within Uttar Pradesh's State Capital Region (SCR) (image 1), which is expected to witness significant urban.

Image 1: State Capital Region



Source: Times of India Website

development in the coming years. Its inclusion in SCR makes it a hub for migration from surrounding under-served districts such as Sultanpur, Pratapgarh, and Fatehpur. Raebareli's current infrastructure remains primarily rural, with only 9% of its population living in urban areas. The expansion of its urban boundaries, driven by increasing investments in education, healthcare, and industry, will likely reshape migration patterns in the district, attracting both skilled and unskilled labor from nearby regions and potentially altering the rural-urban migration balance. On the one hand, it offers new economic opportunities for migrants seeking employment in emerging sectors. On the other hand, the influx of migrants could strain existing

infrastructure, especially in urban areas where housing and public services are already limited. Effective urban planning will be critical in managing this growth to ensure that both residents and migrants benefit from the district's development. The district's socio-economic structure, including its large Scheduled Caste population (30%), and the reliance on social networks for migration decisions, further complicates the migration landscape.

Methodology: In this study, secondary data from the Census of India 2011 Migration D-Series tables were used, which are publicly available through the Office of the Registrar General of India. To examine internal migration patterns in Raebareli district, migration data were filtered from the broader Uttar Pradesh dataset using district-level codes. Specifically, the D3 table provided data on the volume, causes, and streams of migration, while the D9 table was used to assess the spatial distribution of inter-district migration. Migration data were classified into three categories: intra-district (within the district), inter-district (between districts within the state), and inter-state (between states). The analysis focused on in-migrants to both rural and urban areas of Raebareli, which were classified based on the census definitions of settlements. The causes of migration were categorized based on the predefined categories in the Census D-3 series table, including marriage, employment, business, education, household movement, and others. Each migrant was classified under one of these categories based on their reported reason for migration. These categories were then analyzed for rural and urban streams to identify trends and patterns across different regions.

Descriptive statistics, such as percentages, were calculated to identify migration trends across gender, region, and migration reasons. Microsoft Excel was used for data analysis and the preparation of tables and graphs summarizing migration volumes and patterns. These tables were designed to highlight key patterns, such as gender differences, rural-urban migration trends, and the spatial distribution of migrants across districts and states. While the Census of India 2011 remains the most comprehensive source of migration data at the district-level, one limitation of this study is its reliance on decade-old information, which may not fully reflect the accelerated urbanization (AIIMS and Rail Coach Factory became fully operational after 2011) trends in Raebareli over the last decade and it presents a limitation in capturing recent migration trends. Some basic facts about the district are taken from the district census data handbook of 2011.

Results and discussion:

Volume of migration: The internal migration in

Raebareli during 2011 was 9.44 lakhs (Table 1), of which 83.1% were females and 16.9% were males. Mostly the migration was in rural areas, which was 86.7%, of which 86.8% were females, which corresponds to marriage as the primary reason. It also indicates a strong influence of traditional social norms on migration patterns. Whether it is rural or urban, females dominate the numbers in migration. This suggests that migration policy must account for the specific needs of female migrants, especially in rural areas. The total immigrants in 2011 was 27.72% of the total population of the district. Urban migration corresponded to 40.68% of the total urban population, suggesting that urban centers in Raebareli are also experiencing a significant influx. This highlights the growing appeal of urban areas due to better access to services such as healthcare, education, and employment. However, in comparison to rural in-migration, i.e., 26%, it can be deduced that urban infrastructure may not yet be fully prepared to accommodate a large number of migrants.

Table 1: Volume of internal In-Migrants in Raebareli, 2011

Total in migrants		Rural		Urban	
944322		86.7		13.3	
Female	Male	F	M	F	M
83.1	16.9	86.8	13.2	58.9	41.1

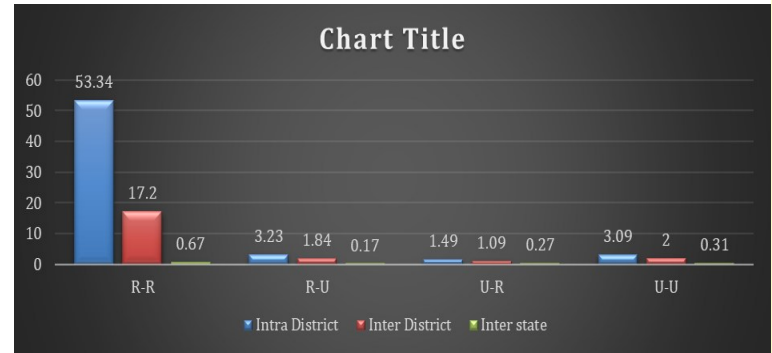
Source: Migration Tables, Census of India 2011

Proportion and streams of migration: Bar Chart 1 describes the proportion of migrants in different categories. Intra-district migration constitutes 74.23% of the total internal migration, of which 89% is in rural areas that too 71% (bar chart 2) is from rural to rural, which shows migration is happening mostly within the district, driven by local factors like marriage or rural employment opportunities. Only 11.36% of people migrated to urban areas within the district, which indicates Raebareli’s urbanization may be slower than expected, or urban migration might follow a more gradual, later wave. Inter-district migration is 24.18%, of which also majority is to rural areas, i.e., 82%. Inter-state migration is just 1.57%, of which 33.79% is to urban regions of the districts, which may be because national-level institutes of the district are acting as an economic magnet and are attracting skilled manpower.

Bar Chart 1: Proportion of Migration



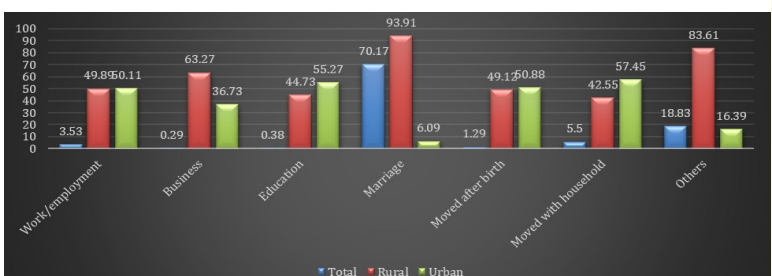
Source: Migration Tables, Census of India 2011



Source: Migration Tables, Census of India 2011

Reasons for migration:-In the bar chart 3 reasons for migration, it can be seen that marriage accounts for 70.17% of the total migration that too 93.91% in rural regions of the district. Interestingly, people migrating for business and work/employment purposes are moving to rural areas with 63.27% and 49.89% respectively. It suggests that employment opportunities within rural areas (perhaps agriculture or rural industries) play a larger role than anticipated. Business activity in rural regions also indicates economic potential in these areas, possibly small-scale industries or local enterprises. This also indicates that rural economies are not being abandoned for urban jobs at the rate seen in other parts of the country. Work/ employment migration shows a relatively even split between rural and urban destinations (with 49.89% migrating for work in rural areas and 50.11% to urban areas), which is quite unusual as urban areas are typically seen as hubs for employment. Major reasons to migrate to urban areas are moving with household (57.45%), education (55.27%), moving after birth (50.88%), and work/employment (50.11%). This suggests that the lack of local public services in rural areas is a key factor driving urban migration, reflecting a rural-urban service gap. The migration for education (55.27%), although relatively low overall, points to an education infrastructure gap in rural areas. 44.73% of people migrating for education to rural areas may be due to the absence of good schools in their area, so they might have migrated to a nearby rural area with better educational facilities.

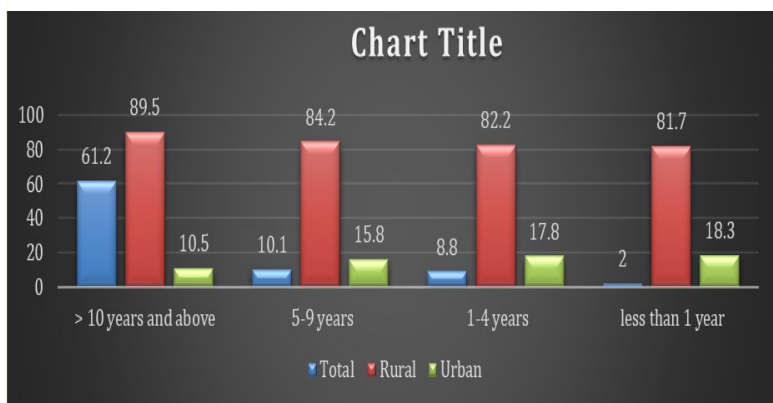
Bar Chart 3: Reasons for Migration



Source: Migration Tables, Census of India 2011

Duration of Migration:-Migrants residing for more than 10 years (bar chart 4) are the largest in number, i.e., 61.2% of whom are 89.5% in rural regions. This indicates that most migrants are long-term settlers, with only smaller numbers (2%) being recent (under one year). Since it is evident from Table 1 and bar chart 3 that women migrate to rural areas due to marriage, where women move to live with their husband’s family, so long-term settlers may be females. It can also be deduced that there are stable living conditions, secure livelihoods, family connections, and affordable living costs in the rural areas of Raebareli. However, the relatively low number of recent migrants may also indicate barriers to migration, such as a lack of job opportunities, housing shortages, or infrastructural limitations. In urban areas, people residing for more than 10 years may be due to the reasons of marriage, moving with household, and others (bar chart 2). In the category of duration of residence, 5-9 years, rural migrants also dominate.

Bar Chart 4: Duration of Migration



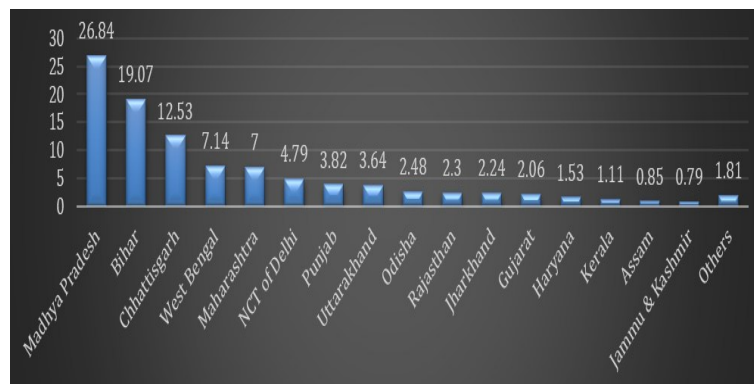
Source: Migration Tables, Census of India 2011

Spatial distribution of migration:

More than 58% of inter-state migrants (bar chart 5) are mostly from the states that share their boundary with the state of enumeration, i.e., Uttar Pradesh. These states are Madhya Pradesh (26.84%), Bihar (19.07%), and Chhattisgarh (12.53%). This clearly shows the inverse relation of distance with migration. The proportion of migrants decreases as the distance from Raebareli increases. This also highlights the importance of proximity in migration decisions, where people tend to migrate shorter distances for economic opportunities or social connections. There are also significant inter-state migrants from West Bengal (7.14%), Maharashtra (7%), and NCT of Delhi (4.79%), which suggests that certain sectors in Raebareli (ITI, NIFT, and NTPC Unchhahar, which were existing before the Census 2011) might be attracting skilled workers from farther regions.

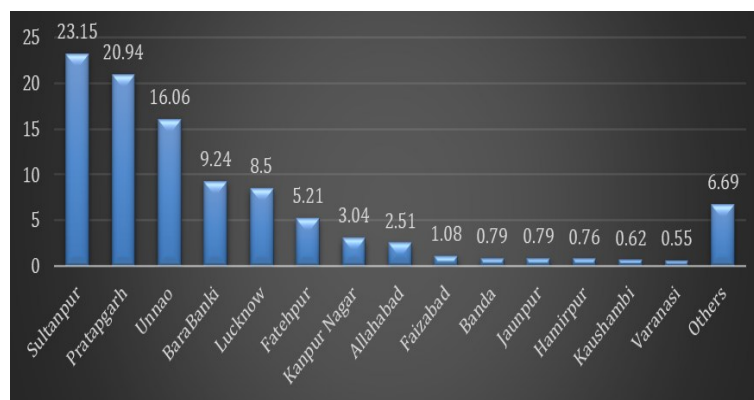
In terms of inter-district migrants, distance also plays a major role. More than 82% (bar chart 6) of the inter-district migrants are from the surrounding districts of Raebareli, indicating a strong regional migration pattern. People are more likely to migrate to nearby areas, likely due to cultural similarities, lower cost of relocation, and existing social networks. These districts are Sultanpur (23.15%), Pratapgarh (20.94%), Unnao (16.06%), Barabanki (9.24%), Lucknow (8.50%), Fatehpur (5.21%). This suggests that Raebareli has better economic opportunities than these neighboring districts, and it is serving as a regional hub for them. The regional infrastructure around Raebareli, particularly roads and transport, might play a crucial role in facilitating this type of migration.

Bar Chart 5: Inter-State spatial distribution



Source: Migration Tables, Census of India 2011

Bar Chart 6: Inter-district spatial distribution



Source: Migration Tables, Census of India 2011

Conclusion:-This study focuses on the internal migration patterns of Raebareli district, showing that the majority of migration is intra-district, motivated by social factors such as marriage, specifically in rural areas. Work/ employment migration is almost evenly distributed between rural and urban areas, emphasizing the existing economic significance of rural sectors. Furthermore, long-term settlement trends indicate that Raebareli provides stable living conditions for migrants, particularly in rural regions. Understanding these

migration patterns is important for policy formulation that balances the demand of rural development with the district's expected urbanization. For rural areas, there is a need for policies that cater to employment opportunities, educational access, and healthcare services to accommodate the influx of rural migrants. Whereas for urban areas, improving infrastructure, housing, and public services is critical to manage future waves of urban migration. Policymakers should prioritize regional collaboration with neighboring districts to manage the flow of migrants and reduce potential strain on resources. One limitation of this study is reliance on decade-old data that does not fully reflect the fast changes occurred in recent years. Future studies with more up-to-date data would give deeper insights into emerging migration trends. It could also explore the socio-economic impacts of migration in Raebareli post-urbanization, particularly focusing on the changing roles of women migrants and the economic outcomes of rural employment migration. In-depth qualitative studies could also provide a deeper understanding of the social networks facilitating regional migration.

References:

1. Bose, A., 1967, Migration Streams in India, Population Review, 2(2): pp. 39-45.
2. Census of India (2011). Migration D-Series Tables. Ministry of Home Affairs. New Delhi, Office of the Registrar General, Govt. of India
3. Chandna, R.C., 2016, Geography of Population: Concept Determinants and Pattern, Kalyani Publishers, New Delhi.
4. Cherunilam, F., 1987, Migration: Causes, Correlates, Consequences, Trends and policies, Himalayan Publishing House, Delhi.
5. Choubey, Alok & Rai, Gayatri. (2021). Study of In-migration in Lucknow district, Uttar Pradesh. 67. 20-33. 10.48008/ngji.1758.
6. Gosal, G.S., 1961, Internal Migration in India: A Regional Analysis, Indian Geographical Journal, 36(3): pp. 106- 121.
7. Gosal, G.S., and Krishnan, G., 1975, Patterns of Internal Migration in India, in Kosinski, L.A., and Prothero, R.M., (eds.), People on the Move, Methuen and Co. Ltd., London: pp. 193-206.
8. Madeshwaran, S. and P. Attewell (2007). Caste Discrimination in the Indian Urban Labour Market: Evidence from the National Sample Survey, Economic and Political Weekly Vol. 42(41).
9. Majumdar, P.S. and Majumdar.I., 1978, Rural Migrants in an Urban Setting, Hindustan Publishing Corporation, Delhi.
10. Morris, M. D. (1965). The emergence of an industrial labor force in India: A study of the Bombay cotton mills, 1854-1947. Unit of California Press.
11. Mueller, Valerie & Shariff, Abusaleh. (2011). Preliminary Evidence on Internal Migration, Remittances, and Teen Schooling in India. Contemporary Economic Policy. 29.11. 10.1111/j.1465-7287.2010.00211. x.
12. Pathak, K. B., and Ram, F., 2015, Techniques of Demographic Analysis, Himalaya Publishing House, Mumbai.
13. Singh, R. (2014). The role of social networks in migration: a case study of out-migration from Uttar Pradesh to Mumbai. Journal of Studies in Dynamics and Change (JSDC), ISSN: 2348-7038, 1(3), 137-144.
14. Singh, R. (2018). Credit constraints and Rural Migration: Evidence from Six Villages in Uttar Pradesh. Migration Letters, 15(3), 389-399.
15. **Times of India. (2025, April 25). State Capital Region Development Authority notification. Times of India. <https://timesofindia.indiatimes.com/city/lucknow/state-capital-region-development-authority-notification/articleshow/111874551.cms>**
16. Vaidyanathan, K.E., 1967, Population Redistribution and Economic Change, 1951-61, Ph.D. thesis, University of Pennsylvania.

Borders and Balance: Navigating India's Migration Challenge with Lessons from the U.S.

Nihar Sharma

M.A. Political Science

Kanoria P.G. Mahila Mahavidyalaya, Jaipur

Illegal migration has been a complex and sensitive issue in India for decades, but in recent years, it has taken center stage in political debates and discussions. As the nation grapples with questions of security, national identity, and demographic change, it becomes crucial to look beyond our borders and see how other democracies tackle similar challenges while remaining true to their democratic values. Among these countries, the United States stands out, not solely for its history of mass migration, strict border enforcement, and extensive security apparatus but also for the significant political debates that surround it. The U.S.'s experience offers both positive and cautionary lessons for India's future policy choices. From the heated debates regarding Assam to national headlines about the CAA and NRC, the question of '*who belongs and who doesn't*' has taken center stage in political and public discourse.

Understanding India's Migration Dilemma -

India's migration history has been shaped by its ancient and colonial past, as well as its geopolitical relations. The country shares an extremely porous border stretching over 4,000 kilometers with Bangladesh, which remains a major point of concern, particularly in states such as Assam and West Bengal. Over the decades, factors such as political instability in the neighbouring countries, economic hardships, and at times political motives have pushed migrants into India, raising serious concerns over demographic change and putting pressure on the political system of the country. This has fueled genuine concerns and fears of cultural and economic marginalization.

The Indian government took various steps in response to these issues. These include the Citizenship Amendment Act, 2019 (CAA) which aims to provide fast-track Indian citizenship for certain persecuted religious minorities (Hindus, Sikhs, Buddhists, Jains, Parsis, and Christians) who fled persecution from Pakistan, Afghanistan, and Bangladesh; and the National Register of Citizens (NRC) to document Indian citizens and identify illegal immigrants. Both measures have sparked intense political debates and discussions: praised by some for taking necessary steps for national security and being accused by some of

religious discrimination. The challenge for India is not just securing the borders but doing it in such a way that aligns with the country's democratic and constitutional values.

The American Experience: Walls and Beyond

Thousands of miles away, another large democracy, the U.S., faces similar challenges and debates over illegal migration. It shares a border of over 3,000 kilometers with Mexico, but unlike the porous borders of India, the U.S.-Mexico border has been highly securitized, with walls and fences built over decades and billions of dollars spent on surveillance technologies.

However, the U.S. policy isn't just about physical barriers; it also includes various administrative and legal measures to address illegal migration. Programs like DACA (Deferred Action for Childhood Arrivals) offer protection to young undocumented migrants who were brought into the United States as children, recognizing humanitarian realities and respecting their dignity. At the same time, enforcement agencies such as the ICE (Immigration and Customs Enforcement) are given the task of large-scale deportations.

We see a mix of federal laws and state-level initiatives in the U.S. system. States like California have passed "sanctuary" laws to protect undocumented migrants, while states like Texas have taken a stricter and harsher route. This shows that while states may differ in their views and policies on migrants' rights, there is still a broader commitment to uphold national security laws and to balance strict enforcement with respect for human rights.

Policy Lessons for India

India and the U.S. have different socio-cultural systems, levels of economic development, and migration patterns. Yet, some elements of the American approach to tackling illegal migration may yield valuable policy insights for India.

Improvement in documentation – The U.S. maintains a clear and detailed database of citizens and immigrants supported by advanced biometric system. In India, the experience of the NRC process highlighted the challenges of conducting such large-scale documentation exercises in a country with a population approximately 4 times larger than that of the U.S. To address this challenge, investing in modern and transparent technologies could help reduce errors and build greater trust among the public.

Centre-State Coordination – Both India and the U.S. are federations. The American model demonstrates flexibility by allowing states to form independent policies to address local realities. In India, states like Assam, West Bengal, and Tripura suffer from the effects of illegal migration far

more than non-border states like Karnataka, Madhya Pradesh, etc. Empowering state governments to play a structured role in policy making and enforcement procedures could make the responses more effective and better aligned with the local requirements.

Addressing economic realities – The fact that migrants bring cheap labor to both the countries cannot be ignored. In the U.S., despite political rhetoric, the production and service sectors benefit significantly from migrant workers. Similarly, many parts of India benefit from cheap labor, whether in construction, domestic work, or as daily wage laborers. While their economic contribution to the country is important, it also creates higher job competition for the locals and could increase the feeling of resentment among the country's legal population due to increased unemployment. Policy-makers should therefore strive to balance strict enforcement with recognition of the migrant's contributions to the country and the economy.

However, not all policies and practices adopted by the U.S. are suitable for the Indian context. India should be cautious when taking inspiration from other models, as each country has its unique challenges and social structure. This diversity makes it difficult to find universal solutions for the problem of illegal migration.

The American model itself is often criticized for being discriminatory and inhumane. Reports of racial profiling, harsh detention conditions, and family separations surface from time to time. Policies perceived as targeting a specific community have a risk of inflaming tensions rather than solving the root cause, as was seen in the form of violent protests in Assam, New Delhi, Meghalaya, Tripura, and various other Indian states against the NRC.

A Balanced Way Forward

Border securitization and migration control are essential for any nation to ensure security and adequate opportunities for its citizens. However, this process should not undermine our democratic and constitutional values. India can surely learn from the U.S.- its use of modern technology, better data management, and its system of multi-layered governance, but it must create solutions that are tailored to its unique history, values, and requirements.

In the end, strong migration policies shouldn't be built on fear alone. They should balance protection with empathy, fairness, and respect for human life. In this way, we can aim to secure our borders and protect our people without losing sight of who we truly are.

Problems and Prospects of Rural Women Worker with Special Reference to Small Scale and Cottage Industries in Jaipur District, Rajasthan, India

Pratibha Bhaskar¹, Ravi Ranjan Kumar², Saket Kushwaha³

1 Scholar, Department of Geography, Rajiv Gandhi University, Itanagar, Arunachal Pradesh, India

2Assistant Professor, Department of Social Work, Rajiv Gandhi University Arunachal Pradesh, India

3Vice-Chancellor, University of Ladakh, Ladakh, India

Abstract

The villages of India are its heart. It has been this way for years. Our country's fundamental character is shaped by its rural residents. With over 5000 years of documented and verifiable legacy, this ancient civilization has kept constant interaction with many other civilizations worldwide, thanks to the items and produce made by the rural artisans. India, their homeland, has been portrayed by the rural craftsmen as a global center for the production of amazing handicrafts. Coir, handicrafts, handlooms, and khadi are examples of traditional industries. The pattern of livelihood strategies is the potential for development and growth are crucial factors in many policy decisions. Data was gathered from primary and secondary sources. Using a combination of probability and non-probability sampling procedures, data were collected from 495 rural women employees of small-scale and cottage industries in Jaipur, Rajasthan, using structured open-ended and closed-ended questionnaires. A Ginni coefficient analysis was used to accomplish the objective of investigating the issues and potential factors impacting the rural women workers in the study area. When compared to other industries, the situation of rural women who work in cottage and small-scale enterprises is appalling. Most of the rural women workers aimed at meeting their food and daily needs of the households and requirements of livelihood through their own work production. The results of Gini coefficient for Jaipur district revealed that rural women workers engaged in small scale and cottage industries in the study area indicated various problems such as personal, infrastructural, traditional, financial, marketing etc. have adverse and significant impact on the women workers.

Keywords: Ginni Coefficient, Problems and Prospects, Rural Women Worker, Small Scale and Cottage Industries.

Introduction

“Gender equality is more than a goal in itself. It is a precondition for meeting the challenges of reducing poverty, promoting sustainable development and building good governance.”

-Kofi Annan

The economic development of a region is determined by the availability of resources, planned utilization of opportunities and availability of assets in various industries, which have a direct impact on the living standards and livelihoods of the local communities, whether positive or negative (Jaim, 2021). Development and livelihood are closely related, and sources of livelihood have a big influence on the region's overall development and socio-economic progress (Lee & Denslow, 2005). In order to improve the social standing of rural women workers and ensure gender equality in industries for the next generation, it is imperative that gender-sensitive labor requirements be met in small-scale and cottage industries (Edriss & Kamvani, 2003; Abedi & Badrgeh 2011). Additionally, issues pertaining to women workers must be identified and addressed.

Women's employment determines their economic standing. Women are empowered as a result of their economic standing, which also elevates them in society (Simi, 2024). The reality is that most women's household responsibilities are combined with economic activity and the use of their skills and labor to augment the family's income (Edriss & Kamvani, 2003), which can make the difference between a respectable living and degrading poverty. The situation of women workers in small scale and cottage industries is particularly dismal (Abedi & Badrgeh 2011). The nature of the various problems and challenges faced by rural women workers engaged in different types of small scale and cottage industries will logically differ from each other (Maurya, 2017). For this reason, the key problems and challenges must first be identified and thoroughly assessed. Therefore, a methodical study is required to identify the particular issues that rural women workers in various small and cottage enterprises face. Incentives and concessions supplied by the government should be tailored to the type and extent of issues experienced by rural women in small and cottage enterprises, hence this research will assist the government in offering incentives and concessions. Only with this strategy can balanced regional industrial development be guaranteed.

Therefore, the study was undertaken in the Jaipur district of Rajasthan, with the general objective to examine the problems and prospects of rural women workers in small-scale and cottage industries in Jaipur District, Rajasthan. In order to accomplish the study's goals, statistical analyses were performed on the acquired data.

Review of Literature

Purkait (2016) explored the socio-economic role of cottage industries in promoting rural women's empowerment in South 24 Parganas. The study highlights that participation in cottage industries plays a crucial role in alleviating extreme poverty and providing self-employment opportunities to rural women. This, in turn, enhances their confidence and decision-making capabilities. Improved food security leads to better nutritional standards, and there are observable shifts in educational attainment and age of marriage among rural girls. Ultimately, economic independence contributes to elevating their social status and gradually fosters a sense of gender equality within the community. Thus, the cottage industry acts as a foundational mechanism for initiating women empowerment in rural areas.

Rahman (2021) examined how involvement in the handicraft industry influences women's economic empowerment in Rangpur. Employing a mix of qualitative and quantitative research methods, the study collected primary data from 200 women through a multistage sampling approach. A multiple logistic regression analysis was conducted to assess the factors influencing women's empowerment. The findings reveal that seven out of eight variables—including employment in handicrafts, working hours, and monthly earnings—significantly impact the economic empowerment of women in the region.

Kishor and Pai (2022) conducted a systematic review focusing on the various challenges women face in entrepreneurship. The study points out that women entrepreneur often experience multiple socio-economic barriers throughout the process of establishing and managing their businesses. They take on several roles simultaneously, which complicates both the launch and sustainability of their ventures. Despite governmental efforts to encourage women's entrepreneurship, the issue of maintaining a healthy work-life balance remains a major concern. The rise of digital technologies has introduced both new opportunities and additional hurdles for women-led businesses. The study further emphasizes the need to promote entrepreneurship among highly educated women, encouraging them to lead businesses rather than work as employees under others.

Simi (2024) explored how women artisans are

contributing to sustainable development through the use of eco-friendly materials such as biodegradable, recycled, and natural resources in their handicraft production. The research underscores that these women not only help minimize environmental harm but also sustain local traditions and support community livelihoods. By producing eco-conscious goods like organic textiles, handmade natural beauty products, and recycled home decor, these women are innovating within the green business landscape. However, the study also reveals significant obstacles, including limited market access and inadequate resources. It concludes that as consumer demand for sustainable products grows, these women artisans are uniquely positioned to lead a movement toward a greener and more equitable future.

Yadav et al. (2024) explored how perceived risks influence Indian women's continued use of mobile payment services. The study assessed the perceptions of 444 female users, focusing on how various risks affect trust, satisfaction, and intention to keep using digital payment systems. Findings revealed that financial and performance-related risks reduce both trust and user satisfaction, whereas privacy concerns do not significantly affect women's attitudes. Interestingly, psychological risk was found to have a positive influence on both trust and satisfaction. Additionally, self-efficacy emerged as a key factor in strengthening users' intent to continue using mobile payment platforms. Overall, trust and satisfaction played crucial roles in reducing risk perception and encouraging ongoing use.

Ramaswamy et al. (2025) examined the economic and social impact of rural women entrepreneurs in sectors such as agriculture and handicrafts. The study emphasized that these women not only contribute to job creation and economic diversification but also promote gender equality and community empowerment. Despite obstacles such as inadequate access to finance and poor infrastructure, the authors argue for the necessity of support systems tailored to women—such as specialized financial tools, skill-building initiatives, better infrastructure, and gender-sensitive policy frameworks. Empowering rural women entrepreneurs, the study suggests, is key to achieving sustainable and inclusive development. Rural women workers employ a variety of livelihood strategies in an effort to maintain their standard of living. A livelihood system can only be considered sustainable if it can manage and recover from risks and preserve or improve its assets and skills without depleting the base of natural resources. Women workers in rural areas, age disparity, education level, employment type, skills, family situation, income source, income variance, gender

inequality, work distribution, working hours, conservatism, social security, number of children, etc. are some of the characteristics that affect livelihood and income patterns. Given the aforementioned concerns, a study on rural women workers' struggles for livelihood strategies is required to gain a better understanding of their role in ensuring the sustainability of livelihoods, particularly in light of the numerous threats to rural livelihoods. As a result, an analysis of the livelihood strategies of rural women workers in Rajasthan's Jaipur area as well as the barriers preventing them from relying on small and cottage enterprises has been attempted.

Materials and Methods:

This study was conducted on rural women workers in Jaipur district. This district was selected purposefully because the study area has a large number of rural women workers in small and cottage industries and the factors and challenges affecting the livelihood and income of rural women workers were considered. This district is largely involved in the work of organizations like Manav Kalyan Sangh, Lok-Chetana Samiti, e-Mitra, e-Governance and other developmental programmes run by the Government of India for the welfare of rural women. For the investigation, a combination of probability and non-probability sampling methods were used. There were thirteen blocks in the Jaipur District. Every block was specifically selected for the current inquiry. Out of these blocks, 495 rural women workers who are directly involved in small-scale and cottage industries were selected for the study.

Resource use Efficiency:

To achieve the objectives of this study, the problems and potential factors faced by rural women workers in small and cottage industries have been analysed using tabular presentation and Garret ranking technique. The method has the advantage of being statistically analyzed and providing the opportunity to rank the problems based on their severity. A different rank is assigned when the same number of respondents are subject to two or more constraints.

For Garret, the formula to convert ranks into percent is as follows:

$$\text{Percent Position} = 100 * (R_{ij} - 0.5) / N_j$$

Were,

R_{ij} = Rank given for i^{th} constraint by j^{th} individual;
 N_j = Number of problems ranked by j^{th} individual.

Result and Discussion: A region's development is a multifaceted factor that shows how much its infrastructure, social fabric, and economics have grown. As is well known, not all areas experience development in the same way under comparable geographic circumstances. In this

study, which focuses on the Jaipur district and the cottage and small-scale industries—such as blue pottery, leather work, carpeting, Jaipuri Razai, agricultural allied sectors (such as making papads, jam, jelly, pickles, etc.), block printing, and embroidery—an effort is made to comprehend various stages of development while taking into account various development indicators.

1.1 Financial Problems

The number of respondents who said that they were concerned about financial issues is displayed in Table 1.1(a). According to Table 1.1(a), only 263 (53.13%) of the 495 respondents said that they had trouble getting credit, and 380 (76.76%) said that they had trouble with the capital disparity between men and women. In a similar vein, 38 (7.67%) and 46 (9.29%) respondents, respectively, cited high interest rates and a lack of a secure loan as issues.

Table 1.1(a): Financial problems and rural women worker respondents total ranking.

Financial Problems	Ranking				Total
	1 st	2 nd	3 rd	4 th	
Reveals inadequate access to credit	263	110	98	24	495
High interest rate	46	198	156	95	495
Capital difference between M and F	380	67	33	15	495
Lack of secure loan	38	110	167	180	495

Table 1.1(b) displays the garret ranking of the financial limitations. According to the results, workers' capital gap between M and F was placed first with an average score of 43.20, followed by high interest rates, which came in second with an average score of 36.38. Lack of a secured loan had an average score of 20.14, placing it in third place.

Table 1.1(b): Percentage position and their corresponding Garret's Table values.

Financial Constraints	% Position	Garret Score	Total Score	Average Score	Rank
Reveals inadequate access to credit	12.5	73	727944	149166.75	4
High interest rate	37.5	56	145512	363868.231.3	2
Capital difference between M and F	62.5	43	373455	432023.5	1
Lack of secure loan	87.5	27	728830	201459.25	3

1.2 Infrastructural Problems

The number of respondents who answered in identifying the infrastructure issues that they are concerned about is displayed in Table 1.2(a). According to Table 1.2(a), only 249 (50.30%) of the 495 respondents cited a marketing network as a concern, while 195 (39.39%) cited a lack of excellent roads. Similarly, poor storage facilities, lack of mobility, and lack of transportation were cited as issues by 32 (6.46%), 44 (8.9%), and 79 (15.96%) respondents, respectively.

Table 1.2(a): Infrastructural problems and rural women worker respondents total ranking.

Infrastructural Problems	Ranking					Total
	1 st	2 nd	3 rd	4 th	5 th	
Lack of good roads	195	110	97	60	33	495
Poor storage facilities	32	55	170	110	128	495
Lack of mobility	79	182	93	102	39	495
Marketing network	249	165	39	30	12	495
Lack of transportation	44	122	30	2	297	495

Table 1.2(b): Percentage position and their corresponding Garret's Table values.

Infrastructural Constraints	% Position	Garret Score	Total Score	Average Score	Rank
Lack of good roads	10	75	8212561	162702.4	4
Poor storage facilities	30	60	8070802	3189041.6	1
Lack of mobility	50	50	1460648	17323.2	5
Marketing network	70	40	862302	1594764	2
Lack of transportation	90	24	7258657	209162.8	3

Table 1.2(b) displays the infrastructure restrictions' garret ranking. The results show that, with an average score of 31.89, inadequate worker storage facilities came in first, followed by marketing networks, which came in second with an average score of 15.94. Lack of mobility came in fifth place with an average score of 1.7, lack of adequate roads came in fourth place with an average score of 1.62, and lack of transit came in third place with an average score of 2.09.

1.3 Production Constraints -The number of respondents who answered in identifying the production

challenges as they affect them is displayed in Table 1.3 (a). According to Table 1.3(a), only 167 (33.73%) of the 495 respondents cited disease infection as an issue, while 150 (30.30%) cited inadequate storage facilities. Accordingly, 148 (29.89%), 58 (11.71%), 50 (10.10%), 40 (8.08%), 40 (8.08%), 39 (7.87%), 39 (7.87%), 35 (7.07%), and 35 (7.07%) respondents, respectively, cited a number of issues, including a variety of identical products, a compilation of material, variations in the length of the dry period, a lack of research and extension support, a labor shortage, competition from others, a lack of credit, and low material prices.

Table 1.3(a): Production Problems and rural women worker respondents total ranking.

Production Problems	Rank											Total	
	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11		
Inadequate credit	35	69	8	55	45	28	67	25	14	7	2	495	
disease infestation	16	7	18	58	25	44	15	39	27	55	42	5	495
shortage of labor	39	25	27	5	7	42	15	18	22	5	10	495	
Variability in amount of dry period	40	37	7	19	39	97	20	15	10	30	9	1	495
Compilation of material	58	25	44	8	28	61	32	11	57	17	14	495	
Competition with others	39	25	27	42	15	7	18	5	10	13	14	495	
Variety of same products	14	8	69	67	55	45	35	28	25	14	7	2	495
Inadequate research & extension support	40	37	7	18	49	87	30	20	10	25	9	1	495
Land tenure	50	36	44	12	8	48	60	33	10	58	16	15	495
Lack of good storage facilities	15	0	23	40	2	25	64	30	13	50	24	14	495
Low price of material	14	0	55	0	45	36	67	25	14	9	0	495	

Table 1.3(b): Percentage position and their corresponding Garret's Table values.

Production Problems	% Position	Garret Score	Total Score	Average Score	Rank
Inadequate credit	4.5454	83	4.6	72.81818182	3
Disease infestation	13.6363	72	4.8	39.36363636	6
Shortage of labor	22.7272	65	4.98	81.27272727	1
Variability in amount of dry period	31.8181	60	1.28	76.18181818	2
Compilation of material	40.909	55	4.19	58.72727273	4
Competition with others	50	50	4.24	50.72727273	5
Variety of same products	59.0909	45	1.8	33.09090909	7
Inadequate research & extension support	68.1818	41	4.6	27.18181818	9
Land tenure	77.2727	35	1.25	31.72727273	8
Lack of good storage facilities	86.3636	28	4.57	25.27272727	10
Low price of material	95.4545	17	1.29	7.090909091	11

1.4 Traditional Problems -The number of respondents who answered in identifying the traditional difficulties as they affect them is displayed in Table 1.4(a). According to Table 1.4(a), only 90 (18.18%) of the 495 respondents said that they had trouble getting credit, and 77 (15.55%) said that they had trouble with the capital gap between men and women. In a similar vein, respondents 65 (13.13%), 50 (10.10%), 50 (10.10%), 49 (9.89%), 38 (7.67%), 32 (6.46%), 25 (5.05%), 21 (4.24%), 19 (3.83%), 15 (3.03%), 11 (2.22%), and 8 (1.61%) cited high interest rates and, respectively, the absence of a secure loan as issues.

Table 1.4(a): Traditional Problems and rural women worker respondents total ranking

Tra- ditio- nal Prob- lems	Rank															Total
	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	
T1	35	69	148	52	45	28	60	20	10	7	2	7	5	4	3	495
T2	117	18	58	25	44	15	39	27	55	42	5	15	8	17	10	495
T3	39	25	27	5	100	42	15	18	22	125	10	25	15	19	8	495
T4	40	37	149	39	97	20	15	10	30	9	19	15	5	8	2	495
T5	50	25	44	48	28	61	32	11	57	17	14	25	35	32	8	495
T6	39	25	27	42	15	67	18	125	10	13	14	25	35	32	8	495
T7	48	69	67	55	45	35	28	25	14	7	2	8	25	32	35	495
T8	40	37	87	49	87	30	20	10	25	9	1	8	32	25	35	495
T9	50	36	44	28	48	60	33	10	58	16	15	25	30	28	17	495
T10	50	33	40	52	25	64	30	13	50	24	14	17	28	25	30	495
T11	35	69	55	40	45	36	67	25	14	9	15	25	33	14	13	495
T12	48	69	67	55	45	35	28	25	14	7	2	8	25	32	35	495
T13	39	25	27	5	100	42	15	18	22	125	10	25	15	19	8	495
T14	40	37	149	39	97	20	15	10	30	9	19	15	5	8	2	495
T15	50	25	44	48	28	61	32	11	57	17	14	25	35	32	8	495

Note: Traditional problem (Symbol): Explanation in behavioural (T1), Fewer sector are women friendly (T2), Pressure to stick to traditional gender role (T3), Gender gap/ inequality (T4), Lack of suitable environment (T5), Limited mobility (T6), Lack of education (T7), Low-risk bearing ability (T8), Balancing between family and work place (T9), Stiff competition (T10), Limited industry knowledge (T11), Safety concerns (T12), Lack of social and institutional support (T13), Fear of failure (T14), Timidity (T15)

Table 1.4(b) shows the traditional problems' garret ranking. The findings indicate that, with an average score of 9.11, limited worker mobility was placed first, followed by fewer sectors that are women-friendly, which came in second with an average score of 7.28. With average scores of 7.26, 6.74, 5.56, 3.51, 3.48, 3.37, 3.33, 2.16, 2.03, 1.95, 1.48, 1.23, and 1.01 respectively, the following factors were ranked third, fourth, fifth, sixth, seventh, eighth, ninth, tenth, eleventh, twelfth, fourteenth, and fifteenth: timidity, juggling work and family obligations, lack of

education, safety concerns, lack of social and institutional support, low-risk bearing ability, fear of failure, fierce competition, lack of industry knowledge, stiff competition, gender gap/inequality, lack of a suitable environment, explanation in behaviour, and pressure to adhere to traditional gender roles.

Table 1.4(b): Percentage position and their corresponding Garret's Table values.

Traditional Problems	% Position	Garret Score	Total Score	Average Score	Rank
Explanation in behavioural	3.33	85	5.12E+11	3.337	9
Fewer sector are women friendly	10	75	5.06E+13	2.16	10
Pressure to traditional gender role	16.66	69	5.06E+15	1.01	15
Gender gap/ inequality	23.33	64	5.16E+11	1.48	13
Lack of suitable environment	30	60	6.33E+11	7.26	3
Limited mobility	36.66	57	5.06E+15	1.23	14
Lack of education	43.33	53	7.24E+10	9.11	1
Low-risk bearing ability	50	50	6.66E+10	3.37	8
Balancing between both place	56.66	47	1.67E+10	7.28	2
Stiff competition	63.33	43	8.29E+10	6.74	4
Limited industry knowledge	70	39	8.27E+10	2.03	11
Safety concerns	76.66	36	7.24E+10	3.51	6
Lack of social and institutional support	83.33	31	5.06E+15	5.56	5
Fear of failure	90	24	5.16E+11	1.95	12
Timidity	96.66	15	6.33E+11	3.48	7

Policy Implication:-The study's conclusions are used to inform the appropriate recommendations that are sent to MSEs, the Development Authority for Microfinance Institutes, various handicrafts institutions, and current and potential entrepreneurs.

Based on the findings of this research, the following suggestion are offered.

Industry diversification, especially the inclusion of cottage and small-scale labor and other activities in the best strategy, helps to raise household incomes and create jobs in the industrial sector. Policies that enable rural women to participate in handicrafts and cottage industries on a commercial basis should prioritize the development of cottage and small-scale industries. Extension agents must be trained in a range of business endeavours in order to offer an appropriate enterprise mix to cottage and handicrafts, thereby reducing risk, various issues, and uncertainty factors in small-scale and cottage industries.

Models of effective cottage practices have suggested the possibility of higher incomes and a wider range of solutions. The desired models should be presented in rural communities to persuade women that they are superior to the ones that are already in use. At the same time, appropriate extension strategies should be discovered in order to increase the usage of the developed models.

It is important that rural women workers communicate with Lok-Mitra, self-help groups, village representatives and members of the Gram Panchayat. These individuals provide suitable and possible solutions to many industrial problems usually faced by women workers and keep them informed about government policies, schemes, initiatives as well as regular updates on fund allocations and procedures. As a result, rural women will be more likely to participate in government programs.

The main factor influencing incomes in rural women's homes will be policy initiatives targeted at raising the net income, social status, social network, various income sources of these households from small-scale and cottage enterprises. Additionally, we must better understand the problems factors limiting household income growth from cottage and small-scale businesses.

Conclusion-This study has taken rural women workers (specifically) who are employed in small and cottage industries in Jaipur district or are involved in any work related to them. This research work discusses the problems and factors that affect or hinder the work performance of any rural women workers.

According to the research area's Gini Index data, rural women deal with issues including gender and income inequality, industry competition, working hours, and skills, among other things. To end poverty, desirable development programs are needed to address the issues rural women experience at work. An essential development strategy that should be implemented is the expansion of work prospects for rural women in self-employment in tiny and cottage enterprises, which are concentrated among the impoverished. In order to boost small-scale, cottage, and handicraft production in rural regions, as well as to establish an effective system of supplying input services and competitive market prices, it is necessary to encourage rural women workers. Small and cottage industry-driven development policies should be supported since they have the ability to raise impoverished people's incomes and so lessen inequality. Thus, it is advised to concentrate on development initiatives that will undoubtedly have a bigger impact on eradicating poverty and allow the majority of the impoverished to make a living.

Based on the criteria used to investigate the issues and opportunities faced by rural women employed in small-scale and cottage industries in Rajasthan's Jaipur district, it was discovered that villages and small-scale and cottage industries located near urban centres enjoy greater privileges and are more developed than other industries located farther away from service centres. The adoption of additional socio-economic infrastructures and the commercialization of traditional cottage businesses could further expand the livelihood options available to women in these industries.

Reference:

1. Abedi, A. & Badrageh, K. (2011). Programs for empowering rural women in Iran. *The Journal of American Science*, 7(4), 212-216.
2. Ajani, E. N., Onwubuya, E. A., & Mgbenka R.N. (2013). Approaches to economic empowerment of rural women for climate change mitigation and adaptation: Implications for policy. *International Journal of Advance Agricultural Research* 1, 37-42.
3. Bajpai, G.C. (2014). African women entrepreneur: Problems, challenges and future opportunities. *International Journal of Managerial Studies and Research* 2(5), 17-22.
4. Birdi, M. R. & Mokaya, S. O. (2017). Factors Affecting Growth of Women-led Small and Medium Enterprises in Arusha Municipality, Tanzania. *International Journal of Scientific Development and Research (IJS DR)*, 2(10), 45-50.
5. Edriss, A. & Kamvani, P. (2003). Socio-economic constraints women face when running micro-enterprises: A comparative case study in Southern Malawi. *Eastern Africa Journal of Rural Development*, 19(1), 41-51.
6. Ferdoushi, K. (2011). Contribution of rural women to family income through participation in microcredit: an empirical analysis. *American Journal of Applied Sciences*, 8(3), 238-245.
7. Jaim J. (2021). Problems of political unrest: women in small businesses in Bangladesh. *New England Journal of Entrepreneurship Emerald Publishing Limited*. <https://www.emerald.com/insight/2574-8904.htm>
8. Kishor, S., & Pai, R. (2022). A Systematic Review of Issues and Challenges Associated with Women Entrepreneurs. *International Journal of Management, Technology, and Social Sciences*. 548-571. <https://doi.org/10.47992/IJMTS.2581.6012.0237>
9. Lee S.S. & Denslow D. (2005). A Study on the Major Problems of U.S. Women-Owned Small Businesses. *Journal of Small Business Strategy*, 15(2), 77-89.
10. Maurya, M. K., Kamalvanshi, V., & Badal, P. S. (2017). An analysis of constraints faced by the farmers for livelihood using Garrett's Ranking technique in Eastern Uttar Pradesh. *Trends in Biosciences*, 10(44), 9120-9123.
11. Purkait, S. (2016). Rural Development & Women Empowerment: Role of Cottage Industries. *Education & Policies*, 53, 55-60. https://www.researchgate.net/publication/358815648_Rural_Development_Women_Empowerment_Role_of_Cottage_Industries_Education_Policies
12. Rahman, H. (2021). Empowering Women through Handicraft Industry: A Case Study of Rangpur. *JnU Journal of Economics*, 3(1), 13-30. https://www.researchgate.net/publication/358346240_Empowering_Women_through_Handicraft_Industry_A_Case_Study_of_Rangpur
13. Ramaswamy, V., Bhuvaneswari, R., & Senthil Kumar, S. (2025). Economic Contributions and Social Impacts of Women Rural Entrepreneurs. In Bayram, G. E., Bayram, A. T. & Sak, M. (Eds.), *Empowering Women through Sustainable Development and Entrepreneurship IGI Global Scientific Publication*, 51-72. <https://doi.org/10.4018/979-8-3693-6572-4.ch004>
14. Simi, S. (2024). Empowering Women through Sustainable Handicrafts. *International Journal for Research in Applied Science and Engineering Technology*, 12, 187-194. <https://doi.org/10.22214/ijraset.2024.64947>
15. UNDP INDIA. (2004). Aajeevika - Livelihoods in Rajasthan: Status, Constraints and Strategies for Sustainable Change ARAVALI. *Human Development Resource Centre*, 1-61.
16. Yadav, P., Kumar, A., Mishra, S. K., & Kochhar, K. (2024). Financial equality through technology: Do perceived risks deter Indian women from sustained use of mobile payment services? *International Journal of Information Management Data Insights*, 4(2), 100266. <https://doi.org/10.1016/j.ijmei.2024.100266>
17. **Author Contribution:**
18. Dr. Pratibha Bhaskar: Investigation, methodology, formal analysis, writing—original draft. Dr. Ravi Ranjan Kumar: Validation, writing—review and editing.
19. Prof. Saket Kushwaha: Validation, methodology—reviewing and editing.
20. **Data Availability:**
21. Upon reasonable request, the corresponding author will make the datasets created and/or examined during the current work available

निलज वनिता का सांस्कृतिक भौतिकवाद

अमर सिंह

(शोधार्थी)

डॉ. सीमा चन्द्रन

(शोध-निर्देशक)

सहायक आचार्य

केरल केन्द्रीय विश्वविद्यालय तेजस्विनी हिल्स, कासरगोड-671325

Mail-seemachandran@cukerala.ac.in Mob-9447720229

प्रस्तावना

क्या संसार भर में जितने भी मानवीय, वातावरणीय, मानवभौतिकीय क्रियाकलाप हो रहे या किए-कराए जा रहे हैं जिनमें अपराध, अनीति, कुकर्म, दुराचार, अहं, अविधिता आदि सम्मिलित हैं क्या वे सब परिष्कृत, परिशुद्ध और नियमावत हैं? यदि हाँ तो ठीक है। यदि न, तो आप ये मानिये कि जब ये सभी मानवीय कृतिकताएँ परिष्कृत नहीं हैं, तब भला उन्हें शुद्ध परिष्कृत भाषा व पाठ-दार्शनिकीय वातावरण में कैसे अभिव्यक्त व संप्रेषित किया जा सकता है? संसार में अब तक जब से हम सचेत हुए हैं तब से हम से अधिक सचेत लोगों ने मानवीयता को समाज के बड़े ठेकेदारों ने चाहे वे सनातनवादी हों, बुद्धवादी हों चाहे मुगल, सामंत, उपनिवेशी आदि हों, सभी ने समाज को कई नई और अविश्वनीय तथा बलपूर्वक नई अविधिक दशाएँ और दिशाएँ दी हैं। यह मात्र कुछ धन और यश प्राप्ति के लिए अधिक से अधिक हुआ है। इतिहास को तो परिष्कृत करा कर नवीन रूप दे दिया गया। लेकिन आज सामयिक सामाजिक बोधपरक युग ने इतिहास-परिष्कृतिकरणीयता को धर दबोचा और इस हर बात को हर विषय को एक शंका की दृष्टि से देखने की परिकल्पना ने वास्तविकताओं को बाहर फेंकने का काम प्रारम्भ कर दिया।

प्रस्तुत सुलभ सांसारिक हाव-भाव और रंगबाजी सबसे अधिक साहित्य में देखने को मिलती है। हालाँकि ऐसा नहीं है कि अन्य विषयानुशासनों में यह सब नहीं देखने में आता। यह सारे मानव-प्राणी विषयों में देखने में आता है। साथ ही वह चाहे किसी पत्र, पात्र के द्वारा हो अथवा किसी समाज, साहित्य आलोचक के मुखारविंदु व लेखन से या के द्वारा। इसका मुख्य कारण खासा साहित्य और सामाजिकी में आई नवीन आलोचना सिद्धांतकियाँ हैं। सिद्धांतकियाँ चाहे वह मार्क्सवादी हो, चाहे विखंडनवादी हो, नव्य इतिहासवादी हो, चाहे सांस्कृतिक भौतिकवादी हो और चाहे सांस्कृतिक साहित्य ही हो। इन सारी सिद्धांतकियों ने अपने-अपने रूप में एक ही समान बात के भिन्न-भिन्न अर्थचित्रव्याकरण और मान्यताएँ देने प्रारम्भ किए हैं। जैसा कि होना भी चाहिए था। इसी रूप में एक विषय जो आज गंभीर समस्या बनता जा रहा है। वह है - स्त्री विमर्श। यदि इस विमर्श को सांस्कृतिक भौतिकवादी सिद्धांतिकी से खोलकर देखा जाय तो? जैसा सांस्कृतिक भौतिकवाद के बारे में सुधीश पचौरी ने कहा है कि "हर सांस्कृतिक 'कृति' (टेक्स्ट) का ऐतिहासिक संदर्भ होता है। इस तरह हर कृति खास परिस्थिति की पैदाइश होती है। इतना ही नहीं, हर कृति का एक कृतिगत इतिहास होता है। जिनसे उसकी कृतीयता या पाठीयता बनती है। इसके अलावा हर कृति के कृतिगत इतिहास और उसके इतिहास के 'पाठीकरण' को देखना समझना होता है और इस तरह कृति को अनुशासनों के आर-पार जाकर उसके उन विमर्शों को पढ़ना होता है जो कृति से गुजर कर जाते हैं। इसीलिए सांस्कृतिक भौतिकतावादी अध्ययन के लिए यह जरूरी है कि वह कृति में सक्रिय 'सत्ता' के प्रश्नों पर ध्यान दें और हाशिये पर डाल

दिये गए समूहों (जैसे मजदूर वर्ग, महिला वर्ग व समलैंगिक) को फोकस कर सके।"¹

यहाँ ध्यान रखने की बात यह है कि जिस प्रकार मजदूर वर्ग पर ध्यान दिया जाय या अन्य पर ठीक वैसे ही समाज में जो अन्य में हैं चाहे वह व्यापारी वर्ग हो या कोई अन्य समाज संदर्भ, समाज के उस संदर्भ पर भी फोकस किया जाना चाहिए? अब यहाँ यह ध्यान में रखने योग्य बात है कि 'सांस्कृतिक' का अर्थ सांस्कृतिक से भिन्न है। सांस्कृतिक का अर्थ होता है किसी व्यक्ति के चरित्र के दर्शन के सौन्दर्य के आयाम जिसमें निहित हों जैसे संरचना और भौतिकता, कला आदि उस बिम्बार्थ वातावरण को सांस्कृतिक कहा जाता है। सांस्कृतिक अर्थात् किसी समूह या समाज के व्यक्तित्व के दर्शन के सौन्दर्य के आयाम जिसमें निहित हो जैसे होली, दीवाली आदि। इसे और अधिक गहरे समझने के लिए एक उदाहरण और पचौरी जी की पुस्तक से लेते हैं। वे कहते हैं कि "कहने की आवश्यकता नहीं सांस्कृतिक भौतिकवादी नजरिया सचेत रूप से 'राजनीतिक' है। वह 'व्याख्या की राजनीति' को महत्व देता है वह मानता है कि हर व्याख्या 'राजनीतिक' होती है और इसीलिए वह ऐसे 'पठन' पर बल देता है जो शोषितों, दमितों और हाशियाकृतों पर न केवल ध्यान दें बल्कि टेक्स्ट या कृति और उसकी व्याख्या में प्रतिरोध व भीतरघात की संभावनाओं पर ध्यान दें। सांस्कृतिक भौतिकवाद टेक्स्ट या कृति के विरोधी पाठ की जरूरतों पर ध्यान देता है ताकि कृति में निहित सत्ता की प्रतीकात्मक संरचना में कतव्योत (टिंकर) की जा सके।"² वैसे तो यह बहुत ही सूक्ष्म पद्धति है लेकिन इसे उतनी ही सरलता से समझा भी जा सकता है। हालाँकि ध्यान रहे कि 'सांस्कृतिक' शब्द 'कल्चर' शब्द का पर्याय नहीं है। 'कल्चर' शब्द के लिए 'सांस्कृतिक' शब्द का प्रयोग होता है। साथ ही यह भी कि यह मोर्विश हैरिंश के 'कल्चर मटेरियल' की अर्थवृत्ति से बड़ा है। इसलिए सुधीश पचौरी के उपरोक्त कथनार्थ से थोड़ा बाहर भी रहेगा।

स्त्री-विमर्श का संविधान की ओर अपना रुख करते हुए जाना बराबरी के हक में कहीं न कहीं आरक्षण माग लेना है। जिसे कई स्त्रियाँ पसंद नहीं करतीं। वे क्षमता के बल पर स्थान मिलने के इच्छुक हैं न कि आरक्षण के। कुछ पुरुष वर्ग भी यही सोच रखते हैं। यह बात महान समाजशास्त्री 'आनंद कुमार' और महिला एवं बाल-विकास मंत्री 'रेणुका चौधरी' भी; उद्धरणरत रेखा कस्तवार जी की पुस्तक 'अपने होने का अर्थ' में कहतीं मिलतीं। पुस्तक-पाठ में उद्धृत है कि "शेर हो गयी स्त्री" सामाजिक संक्रांति का सबसे जलता सवाल है। कानून के स्त्री के प्रति संवेदनशील होने पर अपने अधिकारों के प्रति जागतीं औरतों से व्यवस्था आतंकित है। कल से स्त्रियाँ 'वैधानिक आतंकवाद' फैलाने में सफल होंगी। न्यायविदों की चिंता गहरी है। स्त्रियाँ भेंडिया आया, भेंडिया आया चिल्ला रहीं हैं, कल जब सच में भेंडिया आ जाएगा तो स्त्री को मदद के हाथ नहीं मिलेंगे अर्थात् स्त्री झूठी शिकायतें कर रही हैं। कानून के इस दुरुप्रयोग के खिलाफ किसी सजी का प्रावधान भी नहीं।

कहा यह भी जाता रहा है कि अब तो पुरुष प्रताड़ित है, घरेलू हिंसा के खिलाफ आने वाली शिकायतों में 13-14 प्रतिशत हिस्सा प्रताड़ित पुरुषों का है। सामाजशास्त्री आनंद कुमार राय कहते हैं कि दुरुपयोग की गुंजाइश खत्म नहीं हुयी तो उपलब्धियां बेमानी हो जाएंगी। इसलिए सबकी सुनवायी हो, सबको न्याय मिले ऐसी मंशा रेणुका चौधरी जी (मंत्री महिला एवं बाल-विकास) ने व्यक्त की है।³ यहाँ न्याय की आवश्यकता इसलिए है कि स्त्री-विमर्श निगमों की देन है। वह निगमवादियों की एक व्यापारिक चाल है जैसे कि राजनीति मर्मज्ञ सतीश कुमार कहते हैं कि “अंग्रेजों के समय में स्त्रियों की स्थिति में सुधार के उपाय किए गए”⁴ साफ स्पष्ट होता है कि यह भूमिका उसी समय यानी हाल्ट जागरण से ही प्रारम्भ की गई थी। हाल्ट जागरण यानी आधी बातें बताना और आधी छुपा लेना। कुछ ज्ञानी-सरोकारियों का मानना है कि यह काम सिमरन बुवा से या एक स्वीडिश महिला के काम-शिक्षा देने के लगभग 1896 के आस-पास से माना जाता है कि इन्होंने प्रारम्भ किया। लेकिन यह अर्ध-सत्य है। आशारानी व्होरा जी कहती हैं कि “प्राचीनकाल की अधिकार सम्पन्न नारी मध्यकाल के बाद 19वीं शताब्दी तक आते-आते पूरी तरह अधिकारविहीन व पर-निर्भर हो चुकी थी।”⁵ आलोचक सुधीश पचौरी कुमकुम संगारी के हवाले से कहलवाते हैं कि “कुमकुम संगारी बताती हैं किस तरह अंग्रेज ओरियंटलिस्टों ने भाषा और साहित्य के शिक्षण को नियंत्रित किया और किस तरह भारतीय स्थानीय एलीट की जरूरतों से उसे मेल में रखा ताकि अनुकूलन में परेशानी न हो”⁶। वे कई नियमों से चल रहे थे। उन्हीं नियमों में यह भी एक नियम छिपा था। जिसे समझना समय के साथ कठिन हुआ। जो यहाँ आज पकड़ में आया है। हाल-फिलहाल आने वाले समय में पूंजीवादी राष्ट्र जब इधर ध्यान देंगे, सामान्य तौर पर कहा जा सकता है कि जल्द ही यह पागलपन समाप्त हो जाएगा। राजकिशोर जी लिखते हैं कि “जिन्हें भ्रम है कि सामंतवाद या पूंजीवाद ने स्त्री की यह दुर्दशा की है, उन्हें साम्यवादी देशों में स्त्री की हालत पर गौर करना चाहिए।”²⁰ इस बात से साफ स्पष्ट होता है कि जिस समय सम्पूर्ण विश्व एक पूंजीवादिता के रूप में बहाल हुआ, उस दिन इनका खेल समाप्त हो जाएगा।

अब हम पचौरी जी पुनः पंक्ति बदलते हैं और लिखते हैं कि “रीतिकाल में हमारे यहाँ भी ऐसी ही नायिकाएँ रहीं। लेकिन उन्हें क्रमिक तरीके से पराजित कर दिया गया।”⁷ लेकिन बाद में सुधीश पचौरी जी उन्हीं स्त्रियों को सशक्तिकरण और विमर्श से जोड़ देते हैं। जबकि वे यह अच्छे से जानते हैं कि विमर्श की स्त्री का निर्माण एक प्रतियोगिक अपने रूप में अपने लाभ के लिए मिशनरियों, उपनिवेशियों, निगमवादियों ने ‘हाल्ट जागरण’ के माध्यम से निर्मित किया था, जो आज एक विमर्श का रूप ले बैठी है। “यद्यपि अंग्रेजों ने इस देश में नयी अर्थव्यवस्था, औद्योगिकता, संचार-सुविधा, प्रेस आदि को अपने निजी स्वार्थ के लिए स्थापित किया, फिर भी इससे भारत का हित हुआ।”⁸ इससे साफ स्पष्ट होता है कि इन निगमवादियों ने ‘हाल्ट जागरण’ के माध्यम से कुछ ऐसी स्थापनाएँ कीं। जिनसे वे समाज के अंदर भी अधिकाधिक निगमन कर सकें। क्योंकि किसी न किसी प्रकार वे पुरुषवर्ग से तो धन निगमित कर ही रहे थे, साथ ही महिलाओं से भी किस प्रकार से उन्हें एक व्यवस्था में लाया जाय और विशेष स्तर पर उन्हें भी निगम का कल्पुर्जा बनाया जाय। यह निगमवादियों की एक चाल थी। जिसे महिलाएँ न समझ सकीं। क्योंकि महिलाएँ अनुकूलन ढूँढती थीं। ये वहीं महिलाएँ थीं जिनके पति या तो इनके किसी गलत लत या काम के कारण इन्हें छोड़ दिया करते थे अथवा कभी जिनकी अकाल मृत्यु हो जाती थी अथवा किसी दूसरी महिला के त्रिया-चरित्र में जा फँसते थे। ऐसी महिलाएँ पूरे विश्व में थीं। निगमवादियों के ‘हाल्ट जागरण’ और समाज में बाजार की परख व

बाजार-व्याकरण को समझते हुए जहाँ- जहाँ इन लोगों ने अपना जाल फैलाया और अनुकूलन दिया वहाँ-वहाँ महिला सशक्तिकरण परिवेश बनाने लगे। उपनिवेशवादियों का यह मानना था कि यदि ये सशक्त होकर धन कमाएँगी और विकास के बारे में सोचेंगी तब वे बाजार में आएँगी और बाजार पर हमारा राज तो है ही। यह उनकी एक चाल-नीति थी। जिसमें पूरे विश्व की महिलाएँ फँसी हैं व औरों को भी साथ में फँसा रही हैं।

वास्तविका में शिक्षा, जीवन में सुधार की सीमा तक ही रखा गया था, ताकि समाज में पुरुष और स्त्री के मध्य मृत्यु-लक्ष्य तक ‘अनुकूलन’ बना रहे, विद्रोह नहीं। विद्रोह करना तो इन्हें सिखाया गया अपने स्वार्थ के लिए और इस काम का प्रारम्भ विश्व भर में निगमवादियों ने किया था। विश्व की सारी महिलाएँ जो उच्छ्वत थीं वे ‘अनुकूलन का पाठ’ जानती थीं। महिलाओं के प्रति यह ज्ञानावृत्ति प्राचीन समय से विद्यमान थी। पर सीमा भर, ऐसे ही ताकि जीवन का वे समझ सकें तथा समाज में वे विशेष संतुलन बना सकें। वैसे यह ‘अनुकूलन का पाठ’ भारत में भी पहले से ही विद्यमान थी। यदि स्त्री का निर्लज्ज होना ही यदि सबसे बड़ा एमपवारमेंट है, तब पुरुष वर्ग से क्या छीना जा रहा है? पुरुष से अंदरूनी रूप में ये उनके अधिकार-स्वाधिकार के रूप में हड़प लेने की मंशा इनकी ‘फैसले अब हमारे है’ पुस्तक से देखिये वे कहती हैं कि “इसीलिए औरत के लिए सभी जायज, नाजायज है और मर्द के लिए सारे नाजायज, जायज है क्योंकि सत्ता उसी की है, सियासत उसी की है, संसद व कानून सबके सब उसके नियंत्रण में हैं।”⁹ आप देखेंगे कि ये महिलाएँ जो संविधान में अपनी स्थिति बनाने के लिए दम भर रही हैं जिनकी भूमिका ही बाजारी है, वे किस तरह पुरुष के कर्तव्य अपने नियंत्रण में लेने की चेष्टा में हैं। इस छीन-छोर के पीछे का व्याकरण क्या है? अतः वह कौन सा आधार रहा कि ‘निर्लज्जिता’ होने में इतनी बड़ी शक्ति मानी जाने लगी। सोचने की बात यह है कि यह सशक्तिकरण जो प्रत्येक स्त्री को स्त्री विमर्श की ओर खींचते हुए ले जा रहा है वह भी संविधान की ओर। कुछ चुनिन्दा महिलाओं के कारण जो एक स्वार्थ के कारण संसद की सदस्यता लेने के चक्कर में हैं अथवा किसी बड़े अंतर्राष्ट्रीय पदों पर पहुंचने की लालसा बनाए हुए हैं और उनके जाल में फँस रहीं हैं, वे स्त्रियाँ विमर्श और अपने जीवन का ‘व’ और ‘ज’ भी नहीं जानती।

‘ग्रीन ब्लाट’, ‘हैडेन ह्विट’ और सहमति ‘सुधीश पचौरी’ की लेते हुए कहें तो कह सकते हैं कि कोई भी इतिहास रेखीय नहीं होता, बल्कि कथित इतिहास में इतिहास को रेखीय बना देने की कमी होती है। यह उस समय का इतिहास है जो घटित हुआ है अथवा जिसमें इतिहास में अनुसंधान पद्धतियों कि कमी से हम वास्तविकताओं तक पहुँच नहीं सके हैं। एक बात और कभी-कभी जैसे भारत में 1800 ईसा के आस-पास कुछ गिने चुने लोग ही थे जो ‘ठीक-ठाक पढ़ना लिखना’ जानते थे। लेकिन वे भी भारत के स्वतन्त्रता आंदोलन में सक्रीय थे। वास्तविक इतिहास कौन लिखता? इतिहास छिपे पड़े रहे। इधर नव्य-इतिहासशास्त्रवादी पद्धति ने साहित्य और ‘वास्तुजगत’ के माध्यम से इतिहास के असतत में आने वाली बिंदुईताओं को खोलना प्रारम्भ किया। जिसमें नए-नए विषयों की पहचान हो, वे हमारे सामने खुलकर आ रहे हैं। इस ‘निलज वनिता’ को हमने उसी तरह से जैसे ‘सांस्कृतिक भौतिकवाद’ जो ‘मोर्विस हैरिस’ के ‘कल्चर मटेरियल’ से थोड़ा ऊपर और भिन्न है के अनुसंधान पद्धति के माध्यम से समझा। यहाँ जब ‘निलज वनिता’ रीतिकाल में दिखी तो, क्योंकि सुधीश पचौरी जी ने रीतिकाल : सेक्सुआलिटी समारोह को एक विखंडन और फूको विचरण आलोचना पद्धति से समझा है। इस लिए यह हमें तभी

समझ आएगा जब हम किसी अन्य सिद्धांतिकी के माध्यम से इसे समझेंगे अन्यथा नहीं। यह बात स्वयं वाणी प्रकाशन के संपादक अरुण माहेश्वरी जी ने लिखी और कही है वे लिखते हैं कि 'यह किताब नव्य-इतिहासवादी, उत्तर-आधुनिकतावादी, उत्तर-संरचनावादी, संस्कृतिक भौतिकवादी नजरिए से हिन्दी साहित्य के नैतिकतावादी दरोगाओं द्वारा रीतिकाल की इन चिर निंदित स्त्रियों के सम्मान को बहाल करती है, रीतिकाल के कुपठियों की वैचारिक राजनीति को सप्रमाण ध्वस्त करती है और रीतिकाल को नए सिरे से पढ़ने के लिए विवश करती है।'¹⁰ हालांकि वे लेखक के अधीन बात कर गए लेकिन वास्तविकता वे न पहचान सके कि रीतिकाल के बाद उन महिलाओं के साथ क्या हुआ और वे क्या होकर क्या कर रहीं हैं। इस लिए मैंने इसे सांस्कृतिक भौतिकवादी सिद्धांतिकी से समझा है।

हम निलज वनिता को आज शंका की दृष्टि से क्यों देखने लगे हैं इसका कारण आप सुधीश पचौरी के शब्दों के माध्यम से समझिए "यह भूमंडलीय समय है। मनुष्य एक साथ ही विश्व नागरिक है और स्थानीय है। अपने समाज में मौजूद उपद्रव बहुत कुछ आधुनिक और उत्तर-आधुनिक की टकराहटों का नातीजा है। इसलिए यह टिहरी गाँठ है जो खुल रही है। आधुनिकीकरण की योजना अपने यहाँ अंग्रेजों के जामने में शुरू हुई थी जिसे आजादी के बाद अखिल भारतीय स्तर पर लागू किया गया। उसके सामने स्वयं अपनी प्रकृति को पहचानने की चुनौती उठ खड़ी हुई है।"¹¹ आज हम विश्व नागरिकता को समझते हैं और उनकी चाल को भी इस लिए हम गाँठों से टकराने की चाप मोल ले रहे हैं और हमारे साथ है उत्तर-आधुनिकता की व्याकरण व बहस ! जहाँ हर 'चाल' और हर 'नीति' एक विज्ञापन है। जिनके पीछे ऊंचे दर्जे का काम करती है निगम या व व्यापार कला !

संदर्भ ग्रंथ-सूची :-

1. नयी साहित्यिक सांस्कृतिक सिद्धांतिकियाँ, सुधीश पचौरी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2022, पृ. 461
2. नयी साहित्यिक सांस्कृतिक सिद्धांतिकियाँ, सुधीश पचौरी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2022, पृ. 461
3. अपने होने का अर्थ, रेखा कस्तवार, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2012, पृ. 99
4. महिला सशक्तिकरण, सतीश कुमार, THE WOMEN PRESS, NEW DELHI, FRIST PUBLISHED - 2016
5. औरत कल, आज और कल, आशारानी व्होरा, कल्याणी शिक्षा परिषद, नई दिल्ली, संस्करण - 2011, पृ. 5
6. रीतिकाल : सेक्सुआलिटी का समारोह, सुधीश पचौरी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2017, पृ. 25
7. रीतिकाल : सेक्सुआलिटी का समारोह, सुधीश पचौरी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2017, पृ. 9
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास सं. डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हृदयाल, प्रकाशन मयूर बुक्स, नई दिल्ली, 62 वाँ संस्करण - 2018, पृ. 413
9. फैसले अब हमारे हैं, रंजना श्रीवास्तव, कल्याणी शिक्षा परिषद, नई दिल्ली, संस्करण - 2017, पृ. 126
10. रीतिकाल : सेक्सुआलिटी का समारोह, सुधीश पचौरी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2017, आवरण पृष्ठ बाईं ओर
11. आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2000, आवृत्ति 2006, पृ. 7

भारतीय सामासिक संस्कृति के पुनर्निर्माण में दारा शुकोह की भूमिका

आशीष कुमार तिवारी

(शाोधार्थी)

प्रो. चंद्रकांत सिंह

(शोध निर्देशक)

हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, जिला- काँगड़ा, पिन- 176215

ईमेल - chandrakants166@hpcu.ac.in

मो.-9805792455, 6388774476

शोध सारांश-संस्कृति हमारी मानवीय अस्मिता और अस्तित्व का मूल है। ज्ञान-शील, आस्था-विश्वास, कला-कौशल, कानून-शासन प्रणाली, आचार-विचार, रीति-रिवाज एवं अन्य क्रियाकलापों का समग्र जटिल रूप संस्कृति में परिलक्षित होता है। भारत बहु-सांस्कृतिक राष्ट्र है। यहाँ सदियों से विभिन्न आचार-विचार, धर्म- भावना एवं रीति-रिवाज के साथ लोग रहते आये हैं। आजकल प्रायः भारतीय समाज में विविध तरह की संकीर्णता, कट्टरता आदि का बोलबाला दिखाई देता है। ऐसे में विराट सांस्कृतिक विमर्श और सामासिक संस्कृति के पुनर्निर्माण की आवश्यकता है ताकि भारतीय अस्मिता को अक्षुण्ण रखा जा सके। सामासिक संस्कृति का तात्पर्य संस्कृतियों का मेल भर नहीं है बल्कि संस्कृतियों का पारस्परिक विलयन है। इतिहास साक्षी है कि संस्कृति के तत्व, धर्म, कला, साहित्य आदि परंपराओं में समयानुरूप ढलते रहे हैं और विराट बोध के कारक रहे हैं।

प्रस्तुत आलेख में सांस्कृतिक विमर्श एवं सामासिक संस्कृति के आलोक में दारा शुकोह के आध्यात्मिक अनुभव को समझने का प्रयास किया गया है। दारा का प्रयास भारत में ऐसी संस्कृति का निर्माण करना था जिसमें हिंदू और मुस्लिम पंथों की एकतानता हो। उसने समभाव से फारसी में "मज्म उल् बह्रैन" और संस्कृत में "समुद्र संगम" नामक पुस्तकों की रचना की ताकि दोनों संस्कृतियों के सिद्धांतों का तुलनात्मक अध्ययन हो सके। यही नहीं आत्मीयता, बंधुत्व एवं सद्भाव उसके लेखन के मूल आधार थे। दारा ने हिंदू दर्शन और एकेश्वरवाद की सुचिंतित समझ के लिए उपनिषदों का गहन अध्ययन किया। उसने 52 उपनिषदों का फारसी में "सिरे अकबर" नाम से अनुवाद भी किया ताकि भारत की बहुल संस्कृतियों में एकत्व और समत्व स्थापित हो सके। प्रस्तुत शोध-आलेख दारा शुकोह के सामासिक सांस्कृतिक विचारों को उल्लिखित करने के साथ वर्तमान संदर्भों में भारत की सामासिक सांस्कृतिक आवश्यकता को भी व्याख्यायित करता है।

शोध-आलेख - संस्कृति किसी देश, जाति और समाज की आत्मा होती है। इसका कलेवर अत्यंत व्यापक है। अतः इसका अर्थ भी विभिन्न समूहों द्वारा विविध किया जाता है। कलाकर्मों से साहित्य, नृत्य, नाट्य, संगीत आदि से जोड़ते हैं वहीं नृतत्वविज्ञानी, समाजशास्त्री आदि मनुष्य के विविध व्यवहारों एवम् उपलब्धियों से। हिंदी के सुप्रसिद्ध कवि रामधारी सिंह दिनकर ने इसे अपने वृहत्ग्रंथ 'संस्कृति के चार अध्याय' में धर्म एवं दर्शन से जोड़ा है। यही नहीं कट्टरता के निषेध एवं सहिष्णुता की व्यापक भावना को इसकी कसौटी मानते हैं।¹ समग्र रूप से भारतीय संदर्भ में उक्त सभी तत्व संस्कृति में समाहित किए जाते हैं। वस्तुतः हमारी ज्ञान-कला, साहित्य-दर्शन, कानून-कौशल, आचार - विचार, रीति - रिवाज, आस्था- विश्वास, तथा जीवन-मूल्यों और क्रियाकलापों में संस्कृति का संश्लिष्ट रूप दिखाई देता है।

संस्कृति सदियों से प्राण-धारा बनकर हमारे बोध एवं संस्कार में उद्बुद्ध होती रही है। इतिहास साक्षी है कि भारतीय संस्कृति ने अपनी सहिष्णुता, धर्म-परायणता एवं सद्भाव के द्वारा समूचे विश्व का मार्गदर्शन किया है। इस विशाल भू-भाग वाले देश में अनेक भाषा-भाषी रहे हैं जिन्होंने सदियों से अपनी बोली-बानी एवं आचरण की मीठी खुशबू को प्रसारित किया है ताकि व्यापक मानव-भावना का उत्कर्ष हो सके। भाषा, पंथ, परंपरा आदि की दृष्टि से भारतीय संस्कृति को विभिन्न सांस्कृतिक-धाराओं का महासंगम कह सकते हैं। जिसमें आर्य संस्कृति से लेकर आदिवासी, द्रविड़, तिब्बती, हड़प्पाई, मंगोली, तुर्की एवं यूरोपीय धाराएँ समाहित हैं। ये धाराएँ भारतीय संस्कृति की गंगा-जमनी तहजीब को सामासिक संस्कृति में परिवर्तित करती रही हैं। भारतीय संस्कृति ने अनेक जातियों के श्रेष्ठ विचारों को अपने में समाहित किया है ताकि उसका आयतन संवर्धित हो सके। हमारी संस्कृति में यहाँ के मूल निवासियों आदि की समन्वय-भावना के साथ बाहर के देशों से आने वाले शकों, हूणों, यूनानियों की सांस्कृतिक भावना भी घुली हुई दिखाई देती है। अरबों, तुर्कों और मुगलों के घुलने-मिलने के बाद भी भारतीय मनीषा अपनी स्पष्टता, सटीकता एवं पृथकता के गुण को धारण करती रही है ताकि वह अपना विशेष दाय प्रस्तुत कर सके। यह और बात है कि इस देश में जीवन-गति की तलाश करने वाले शासकों और उनके अंध अनुयायियों ने इस संस्कृति को मिटाने और विनष्ट करने की अकारथ चेष्टा की। जब भी भारत की धरती वैमनस्य, घृणा एवं उन्माद का शिकार बनी, संतों ने अपनी पवित्र बानी से इस धरती को प्रकाशमान किया। हर बार के आक्रमण, अवमानना एवं व्यर्थ के जय-घोष के बाद भी आक्रान्ता इस धरती को चूर्णित न कर सके। इस धरती की सदाशयता एवं उपकार करने की भावना ने सभी को बांधकर रखा यही इसकी शक्ति, सामर्थ्य एवं ऊर्जा की ताब है।

भारतीय इतिहास में यह समन्वय और सामासिकता प्राचीन समय से दिखाई देती है और मध्यकाल के मुस्लिम शासन काल के दौरान जब अतिशय कट्टरता का बोलबाला आरंभ हुआ तब भी यह पूर्णतया समाप्त नहीं होती। उस समय सूफ़ी साधक और संत कवियों के साथ कुछ संस्कृतिधर्मी शासक और रोज़कुमारों ने इसे जीवंत रखा। इनमें मुगल शहजादा दारा शुकोह प्रमुख हैं। शहजादा दारा शुकोह ने आजीवन सामासिक संस्कृति के विकास के लिए प्रयत्न किया और इसी वजह से उसे अपनी जान भी गंवानी पड़ी। क्योंकि "उनके अपने समय में कट्टर उल्मा (धर्म विशेषज्ञ) उनको काफ़िर (धर्मभ्रष्ट) समझते थे वा अधिक से अधिक उनको ऐसे मुसलमान समझते थे जिन पर हिन्द संस्कार पड़ चुके थे।" दारा के व्यक्तित्व को व्याख्यायित करते हुए प्रख्यात आलोचक मैनेजर पांडेय लिखते हैं "दारा शुकोह संगम-संस्कृति का साधक था। उसके विचार से इस्लाम हिन्दू धर्म दो समुद्रों की तरह हैं जिनके बीच संगम सम्भव है। इसी संगम के खोज और स्थापना की कोशिश दारा ने की।" दारा से पूर्व भी सल्तनत और मुगल काल में संगम संस्कृति की परंपरा मौजूद थी। यह परंपरा सूफ़ीमत और अमीर खुसरो और जायसी की कविताओं में दिखाई देती है और साथ ही संत कवि कबीर, रज्जब, रहीम और दाद के वचनों में। जैसा कि मैनेजर पांडेय लिखते हैं- "एक परम्परा तसव्वुफ़ अथवा सूफ़ी मत की थी जो तेरहवीं-चौदहवीं सदी से भारत में फैल रही थी। उसी से जुड़े थे अमीर खुसरो, जिनकी कविता में संगम-संस्कृति की अभिव्यक्ति हो रही थी। दूसरी परम्परा हिन्दी के सन्त कवियों की थी, जिसके अगुआ थे कबीर और दाद। वे दोनों हिन्दू और इस्लाम के रूढ़िवाद के विरोधी और एकेश्वरवाद या तौहीद के साधक थे।" दारा शुकोह को अपने पूर्वज बादशाह अकबर से भी यह परंपरा और प्रेरणा विरासत में मिली थी जिसने हिंदू धर्म-दर्शन के अनेक ग्रंथों को फारसी में अनूदित कराया। यही नहीं उसने सभी धर्मों के सद्गुणों का एकीकृत कर नवीन पंथ 'दीन -

ए - इलाही'की स्थापना की। दारा शुकोह तत्कालीन भारतीय समाज के इस्लाम और हिंदू धर्म- दर्शन में समन्वय और एकता स्थापित करने के लिए मुख्यतः दो पुस्तकों की रचना करता है। एक फारसी में मज्म 'उल बहैन' और दूसरी संस्कृत में 'समुद्र-संगम'। मज्म 'उल बहैन' फारसी पढ़े मुसलमानों के लिए थी और 'समुद्र-संगम' संस्कृत पढ़े हिंदुओं के लिए। 'समुद्र संगम' में दारा पुराणों में वर्णित समुद्र मंथन के रूपक का उपयोग करते हुए अपनी कृति के बारे में लिखता है "विष्णु रूपी आत्मा की इच्छा से अपने मन का मैंने मन्दर बनाया और संकल्प-विकल्पों को देव-दैत्य बनाया और वेद रूपी समुद्र का मन्थन करके एक ऐसे ज्ञान-रत्न को निकाला, जो चौदह रत्नों से अलग है।" वह इन पुस्तकों में अपने ज्ञान और विश्वास की अभिव्यक्ति करता है। वह दोनों धर्मों को बराबर महत्व देता है और सूफ़ी मत व हिंदू धर्म - दर्शन के बीच परिभाषा - भेद के अतिरिक्त कोई फ़र्क नहीं मानता। वह अपने अनुभव से प्राप्त ज्ञान को अभिव्यक्त करता है- "मैंने देखा कि स्वरूप की प्राप्ति को लेकर, परिभाषा-भेद के अतिरिक्त कुछ भी भेद नहीं है। अतः मैंने दोनों की एकवाक्यता की।" दारा शुकोह ने सत्य को जानने वाले दो समुदायों के सत्य के ज्ञान और विवेक की अभिव्यक्ति मज्म 'उल बहैन' के 22 खंडों में की है। अनासिर (तत्त्व), हवास (इन्द्रिय), शरल (भक्ति), सिफ़ते अल्लाहत आला (सर्वोच्च ईश्वर के गुण), रूह (आत्मा), आलमे-अरबेआ (चारजगत), आवाज़ (ध्वनि), नूर (प्रकाश), रूयत (ईश्वर-दर्शन), इस्माये अल्लात आला (सर्वोच्च ईश्वर के नाम), नबूवत व विलायत (सिद्धत्व), ब्रह्मांड, जिहात (दिशा), आलमे-बरजख (मृत्यु तथा पुनरुत्थान की अन्तर्वेला), कयामत (प्रलय), आदि सभी तत्त्वों की व्याख्या के दौरान दारा शुकोह ने इस्लाम धर्म, खास तौर से सूफ़ीमत, और हिन्दूधर्म- दर्शन के बीच समानता और एकता की स्थापना की ताकि मुसलमान और हिन्दू धर्म के समुदायों के बीच एकता, आत्मीयता और सद्भाव का विकास हो।

दारा ने वर्ष 1657 में हिन्दू धर्म - दर्शन के आधारभूत ग्रंथ उपनिषदों का फारसी भाषा में अनुवाद 'सिरि अकबर' नाम से किया। सिरि अकबर का अर्थ होता है महान रहस्य। दारा शुकोह की मान्यता थी कि उपनिषद ईश्वर प्रदत्त पहली किताब है जिसका उल्लेख कुरान में भी है। वह कुरान का हवाला देता है - "कुरआन में यह लिखा है कि एक किताब है जो छिपी हुई है। उसको पवित्र व्यक्तियों के अलावा कोई छु नहीं सकता। यह संसार के मालिक या ईश्वर की देन है।" इस सम्बन्ध में कालिका रंजन काननगो लिखते हैं - "उसने प्रयास किया कि हिंदू धर्म तथा इस्लाम के बीच की खाई को पाट दे - और यह जनसाधारण के लिए नहीं परंतु दोनों जातियों के शिष्ट वर्ग के हित में। वह इस प्रतिज्ञा को लेकर चला कि समस्त दैवी धर्म-ग्रन्थों का एक सामान्य उद्गम स्थान अवश्य होगा क्योंकि कुरान में एक 'उम्मुल किताब' (गुप्त पुस्तक) का उल्लेख है। जिस उत्साह तथा विश्वास से सर गलाहड 'पवित्र पात्र' की खोज में दत्तचित्त हो गया था, उसी उत्साह तथा विश्वास से दारा इस गुप्त पुस्तक की खोज में संलग्न हो गया। इस्लाम की सीमाओं को पार करके उसने उसी पुस्तक को उपनिषदों के रूप में पाया जो अपवित्र दृष्टि से दिखाई नहीं दे रही थी।" दारा शुकोह ने कुरान की मदद से उपनिषदों के महत्व की व्याख्या की और तौहीद को स्पष्ट करने का प्रयास भी किया जिससे भारत में हिन्दू और मुस्लिम संस्कृति में एकता और सामंजस्य स्थापित हो सके। दारा शुकोह ने धर्म-दर्शन के साथ ही भाषाई कट्टरता और संकीर्णता को दूर करने का भी विशद प्रयास किया। उसने उस समय संस्कृत का अध्ययन किया जब मुसलमानों के लिए यह भाषा वर्जित समझी जाती थी। उसने संस्कृत के उद्भट विद्वान आचार्य जगन्नाथ को अपना गुरु माना और उनसे संस्कृत का अबाध ज्ञान प्राप्त किया। दारा ने न केवल संस्कृत का अध्ययन किया बल्कि 52 उपनिषदों का संस्कृत से फारसी भाषा में अनुवाद भी किया।

अनुवाद के साथ ही उसकी संस्कृत भाषा की कृति 'समुद्र संगम' उसके सामासिक भाषाई प्रतिबद्धता के पुष्ट करती है। दारा द्वारा गोस्वामी नृसिंह सरस्वती को लिखा गया प्रशस्ति पत्र उसके संस्कृत भाषा के ज्ञान को स्पष्ट बयां करता है। इस पत्र में दारा नृसिंह गोस्वामी की जो यथोचित वंदना कर अपनी बात रखता है वह भारतीय मानस के 'विद्वान् सर्वत्र पूज्यते' उक्ति को चरितार्थ करती है।
“स्वस्तिश्रीमप्रपंचचिरतरचित्तसिंचिन्तितसमुदचंद्रोचिःसंचयचाक चिक्यचमत्कारचर्चनचर्चितचंद्रविरोचनचित्रभनुरुचिनिचयाच्युतचन्द्रचूणचरणचिन्तामणिषुरुचिरतरवचनरचनसमुच्चरणचातुरीसंचारसमंचनवंचित-वाचस्पतिचतुराननपंचाननेषु।”¹⁰

इस प्रकार दारा शुकोह ने हिंदू धर्म और इस्लाम को मानने वालों के बीच एकता और सामाजिक समरसता स्थापित कर सामासिक संस्कृति के विकास का जो प्रयास किया है वह महत्त्वपूर्ण है। उसने आजीवन हिंदू धर्म और इस्लाम मतानुयायियों में शांति और प्रीति की वृद्धि की। इस संबंध में डॉ. काननगो की टिप्पणी सर्वथा संगत प्रतीत होती है –“यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि भारत में जो कोई भी धार्मिक शान्ति की समस्या का हल करना चाहता है, उसको यह कार्य वहाँ से प्रारम्भ करना होगा जहाँ पर दाराशिकोह ने उस कार्य को छोड़ा था तथा उसको उस मार्ग का अनुसरण करना होगा जिसको उस राजकुमार ने निर्धारित किया था।”¹¹ निश्चित ही दारा शुकोह ने भारतीय संस्कृति के नियामक तत्वों पर विचार करते हुए इसके महात्म्य को उजागर किया। दारा के चिंतन, दर्शन एवं जीवन में भारतीयता की छाप दिखाई देती है। इस्लाम के आने के बाद जिस तेजी के साथ संस्कृति एवं मानवीय-बोध का पराभव हुआ। हिन्दू देवल स्थान एवं देव मंदिरों को जिस आक्रामकता के साथ चूर्णित किया गया वह अत्यंत हृदय विदारक था। दारा मजहबी उन्माद का सख्त विरोधी था यही कारण है कि ज्ञान की तलाश में वह कुन एवं कुरा के मेयार से बाहर आकर भारतीय विद्या परम्परा को महत्त्व देता है। दारा शुकोह के प्रयास आज भी प्रासंगिक हैं। आज दारा के कार्य को बड़े स्तर पर देखे जाने की आवश्यकता है ताकि विरोधी शक्तियां इसे खण्डित एवं निष्प्राण न कर सकें। हमारी भाव-भाषा, खानपान, पहनावे, कला, संगीत आदि में हमारी प्रखरता ही हमें विशिष्ट बनाती है। यह इस बात की पोषक है कि हम गंगा-जमुनी तहजीब के सही पहरए हैं। मानवता के विकास में, सद्भाव की रक्षा में हमने आज से नहीं बल्कि सदियों से समूचे विश्व को आलोकित किया है। हमारी विशद सांस्कृतिक पहचान के बारे में पं. मदन मोहन मालवीय ने ठीक कहा है कि “भारतीय सभ्यता और संस्कृति की विशालता और उसकी महत्ता तो संपूर्ण मानव के साथ तादात्म्य संबंध स्थापित करने अर्थात् ‘वसुधैवकुटुंबकम्’ की पवित्र भावना में निहित है।” निश्चय ही हम अहम से इदम की भावना को अपने हृदय में धारण कर बढ़ते रहे ताकि सही अर्थों में ज्ञान, प्रेम एवं शील की स्थापना कर सकें। यह हमारी ग्रहण शीलता का स्वाभाविक गुण था कि हमने सदा सीखा। हमारे पुरखों ने अपनी ज्ञान-संपदा एवं चिन्तना से सतत अन्वीक्षण दृष्टि अर्जित की जिसके केंद्र में सद्भाव है। किंतु वर्तमान सन्दर्भ में अधिकार-कर्तव्य आदि में व्याप रही हीन भावना ने हमें संकुचित किया है। निरे स्वार्थ से अंध होकर हमने अपनी भाषा एवं संस्कृति को हेय-दृष्टि से देखने का कलुषित कार्य किया है। जाति-पंथ एवं धड़ों में बटे हुए हम वर्चस्व एवं मद में डूबे हुए हैं, आवश्यकता इस बात की है कि हम संकुचित स्व से ऊपर उठकर देश-प्रथम की भावना के साथ कार्य करें ताकि हमारी बौनी मान्यताओं का नाश हो एवं सृजन के पुष्प सुवासित हो सकें। सामासिक संस्कृति का तात्पर्य केवल संस्कृतियों का योग भर नहीं है बल्कि संस्कृतियों का मिलकर एक हो जाना है। विविध संस्कृतियों के तत्व, धर्म, दर्शन, मान्यताओं की पारस्परिक अविभाज्यता

ही किसी राष्ट्र का सही निर्माण करती है। इसमें कोई एक संस्कृति विजेता और दूसरी विजित न होकर दोनों सहचरी होती हैं। इस तरह शनैः शनैः एक दूसरे के विचारों को अंगीकार कर संस्कृतियां विभेद रहित हो जाती हैं ताकि मानवता का सम्यक एवं युग अनुरूप विकास हो सके। अपसंस्कृति के विकास के इस युग में दारा शुकोह द्वारा किया गया कार्य मुस्लिम निगाह से भारतीय संस्कृति को निरखना है, इस निरखने में श्रेष्ठता का दावा नहीं है बल्कि साक्षीत्व की आँख से संस्कृति को देखते हुए इसके सभी प्रस्थान बिन्दुओं पर उचित दृष्टि रखनी है। यह दृष्टि भी आधुनिक पश्चिमी शिक्षा के युग में दीगर एवं महत्वपूर्ण है जिस पढ़ते एवं आँकते हुए हम अपनी संस्कृति के जीवत को देख सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ -

- 1.सिन्हा सच्चिदानंद, संस्कृति विमर्श,वाग्देवी प्रकाशन,बीकानेर , प्रथमसंस्करण, भूमिका, पृष्ठ संख्या- 08
- 2.काननगो कालिका रंजन, दारा शिकोह, गया प्रसाद एंड सन्स प्रकाशन,आगरा, द्वितीय संस्करण की भूमिका
- 3.पांडेय मैनेजर, दारा शुकोह संगम - संस्कृति का साधक, राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2024,पृष्ठ संख्या- 12
- 4 - वही ,पृष्ठसंख्या - 94
- 5- शुकोह दारा,मज्म ‘उल बह्रैन’, (अनुवादक -जगन्नाथ पाठक), राका प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2005, पृष्ठ संख्या -175
- 6- वही, पृष्ठ संख्या - 89
- 7- पांडेय मैनेजर, दारा शुकोह संगम- संस्कृति का साधक, राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2024, पृष्ठसंख्या - 94
- 8- वही ,पृष्ठसंख्या- 59
- 9- काननगो कालिका रंजन, दाराशिकोह, गया प्रसाद एंड सन्स प्रकाशन, आगरा, द्वितीय संस्करण की भूमिका
- 10- शुकोह दारा,सिरे अकबर, (संपादक - अनुवादक: डॉ. हर्षनारायण), भुवनवाणीट्रस्ट, लखनऊ, संस्करण- 1975कीभूमिका
- 11- काननगो कालिका रंजन, दाराशिकोह, गया प्रसाद एंड सन्स प्रकाशन,आगरा ,द्वितीय संस्करण की भूमिका

वीरांगना झलकारी बाई (मोहनदास नैमिशराय) : दलित अस्मिता के सरोकार

डॉ. अंकिता विश्वकर्मा

असिस्टेंट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
हिन्दी विभाग, पूर्णियाँ कॉलेज, पूर्णियाँ (पूर्णियाँ विश्वविद्यालय, पूर्णियाँ)
ईमेल – vishwakarmaankita16@gmail.com

शोध सारांश – वीरांगना झलकारी बाई हिन्दी के प्रसिद्ध दलित कथाकार मोहनदास नैमिशराय द्वारा लिखित ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में लिखा गया दलित अस्मिता के सरोकारों से परिपूर्ण उपन्यास है। कथाकार ने वीरांगना झलकारीबाई के बाल्यावस्था के प्रसंग के माध्यम से उनकी वीरता एवं साहस का वर्णन किया है। दलितों एवं पिछड़ों को सवर्ण समाज के मुखौटा ओढ़े प्रतिनिधि वीर एवं साहसी होने की धारणा को अस्वीकार करते थे। बाल विवाह से उत्पन्न समस्याएँ, झाँसी के राजा के अकर्मण्यता, भोग विलास, जनता पर सत्ता पक्ष और अंग्रेजों की नीतियों के दहरे मार का चित्रण किया गया है। वीरांगना झलकारी बाई ने रानी लक्ष्मीबाई की सहगामिनी बनकर 1857 ई. की प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की पृष्ठभूमि तैयार की। एक सैनिक के रूप में उन्होंने उन्होंने दलित एवं पिछड़े वर्ग की महिलाओं को तलवार चलाना सीखाया और प्रशिक्षण के क्रम में ही ब्राह्मण समाज के मिथ्यारोप के दंश को झेला। रानी लक्ष्मीबाई के समान ही मुखमुद्रा के कारण झलकारीबाई अंग्रेजों द्वारा पकड़े जाने पर निडरता के साथ खड़ी रही। अंग्रेजों द्वारा जीवित छोड़े जाने पर वे झाँसी को स्वतंत्र न करा पाने के कारण दुःखी हुई।

बीज शब्द – वीरांगना झलकारी बाई, दलित अस्मिता, सवर्ण समाज, जनेऊ, बाल विवाह, गऊ-हत्या, जाति, अंग्रेज, इतिहास।

मूल आलेख – वीरांगना झलकारी बाई मोहनदास नैमिशराय द्वारा लिखित ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में लिखा हुआ दलित स्त्री अस्मिता के सरोकारों से सम्बंधित उपन्यास है। जिसमें कथाकार ने रानी लक्ष्मीबाई की प्रिय सखियों में से एक झलकारी बाई के जीवन-चरित, उनके संघर्षपूर्ण जीवन और झाँसी की स्वतंत्रता के लिए प्रदर्शित वीरता एवं साहस का वर्णन किया है। दलित-पिछड़े वर्ग के पात्र को अपने उपन्यास का नायक बनाकर उन्होंने इतिहास के आईने में छिपी दलित अस्मिता के प्रश्नों को वर्णित एवं व्याख्यायित करने का सारगर्भित एवं प्रशंसनीय कार्य किया है।

वीरांगना झलकारीबाई का जन्म झाँसी के निकट भोजला नामक कोइरी परिवार में हुआ था। उनकी माता का नाम लहकारी बाई, पिता का नाम सदोबा मूलचंद था। वे बचपन से ही वीर और साहसी थीं। कथाकार ने बाघ के हमले के प्रसंग का वर्णन किया है। जिसमें झलकारी बाई ने अपनी सूझ-बूझ और साहस से शेर को मार गिराया। दलित और पिछड़े वर्ग के लोगों के साहसपूर्ण कृत्यों पर सवर्ण समाज को विश्वास ही नहीं होता है। वे कहते हैं – **“छोटी जात की लड़की किसी बाघ को मार दे। तत्कालीन समाज की परिपाटियों के अनुसार इसमें विरोधाभास था। वीरता और बहादुरी के सारे गुण तो सवर्ण समाज के क्षत्रियों के लिए सुरक्षित कैर रखे थे। और दलितों और पिछड़ों के खाते में अवगुण के साथ अयोग्यताओं की भरमार थी।”** सवर्ण समाज चाहता था कि दलित और पिछड़े एक साथ मिलकर न रहें। वीरांगना झलकारी बाई में बाल विवाह के दंश का वर्णन किया गया है। छोटी उम्र में हुयी शादी में बालक/बालिकाएँ विवाह का वास्तविक अर्थ भी नहीं समझ पाते थे। कम उम्र में विवाह से स्त्रियों को अनेक कष्ट झेलने पड़ते थे, ऐसा लगता था कि उनका जन्म पत्नी और दासी बनने के लिए ही हुआ हो – **“वह पिंजरा सोने का होता था**

चाँदी का या फिर साधारण लोहे का होता तो पिंजरा ही था। पिंजरे के कैदी का दर्द एक ही जैसा होता।”² सभी बालवधुओं की सीमारेखा घर की चारदीवारी तक ही सिमट कर रह जाती थी।

ईसाई मिशनरियों और बौद्ध धर्म के अनुयायियों ने भारतीय समाज में विद्यमान अस्पृश्यता और अशिक्षा इत्यादि समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया। उस समय भोजला गाँव में पाठशाला नहीं थी। ब्राह्मण अपने घर पर सवर्ण समाज के बच्चों को पढ़ाते थे। दलितों और पिछड़ों को उन लोगों ने शिक्षा से दूर कर दिया था। झलकारी बाई बौद्ध भिक्षुओं को बताती है कि – वे कउर्त पढ़वौ तमाओं काम नई।³

बुंदेलखंड में मराठा वंश की स्थापना से पहले झाँसी नेवलकर वंश में था। राजा रूद्रप्रताप ने ओरछा की स्थापना की। रूद्रप्रताप के पौत्र वीरसिंह देव ने झाँसी के किले का निर्माण कराया था। वृद्धावस्था में दतिया से झाँसी को न देखपाने के कारण वीरसिंह देव ने कहा कि आँखों में झई सी पड़ गयी है। इसी आधार पर इस किले का नाम झाँसी पड़ गया। झाँसी के पूर्व राजा रामचंद्र राव ने 1832 ई. में विलियम बैंटिक का स्वागत किया था। झाँसी के वर्तमान राजा गंगाधर राव अकर्ण्य होकर हमेशा रास रंग में झूबे रहते थे। जिससे जनता त्रस्त थी – **“सुसंस्कृत और रंगीले राजों के ऐश्वर्य से उत्पन्न राज्य में मँहगाई के दबाव और अतिरिक्त करों के बोझ से थकी हारी जनता की पीठ पर फिरंगी चाबुक की मार भी पड़ती थी।”⁴**

भारतीय हिन्दू समाज चातुर्वर्ण की व्यवस्था पर आधारित था। जाति प्रथा के मूल सिद्धांत इस प्रकार हैं – **“(1). जन्म के आधार पर मनुष्यों में असमानता (2). व्यवसायगत असमानता, और (3). चारों मुख्य वर्णों में पूर्ण एवं कठोर सामाजिक विभाजन और उनकी उपजातियों के मध्य उतना ही कठोर भेदभाव।”⁵** समाज में सछूत और अछूत दो प्रकार की कोटियाँ थी। अछूतों में भी दलित और पिछड़े दो प्रकार के लोग थे। पिछड़ों को सछूत छू सकते थे। झाँसी में हुए जनेऊ आंदोलन के समय वर्णव्यवस्था की दीवार गिरा पाना दलितों और पिछड़ों के लिए आसान नहीं था। राजा के आदेश से उनका मन आहत था। **“शूद्रों को जनेऊ मत पहनने दो। अगर पहने तो उनके जनेऊ तोड़कर फेंक दिए जाएँ। साथ ही दूसरों आदेश भी था। वह यह कि ताँबे और लोहे के जनेऊ आग में लाल-लाल कर इन्हें पहनाया जाय।”⁶** झाँसी के महाराजा गंगाधर राव समानता के पक्षधर ने होकर पुरातनपंथी थे। दलित, पिछड़ों और नारी अधिकारों का वे विरोध करते थे। वीरांगना झलकारी बाई के बचपन के साथी चन्ना उर्फ चम्पालाल (जाटव) और रमची उर्फ रामचरन (वाल्मीकि) को बचपन से लेकर युवावस्था तक जलालत झेलनी पड़ती थी। सम्पन्न एवं दबंग वर्ग के पास निर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों की दलित जातीय अस्मिता और पहचान पर चोट करने के अतिरिक्त कोई कार्य ही नहीं था। **“दलित समाज में जन्में व्यक्ति के उम्र का कोई महत्व न था। महत्व था केवल वर्ण व्यवस्था पर आधारित नियमों और परम्पराओं का”⁷** उच्च वर्ग के बालक को भी बाऊ साहब, ब्राह्मण देवता इत्यादि कहना और दलित पिछड़े वर्ग के वरिष्ठ नागरिकों के लिये अपशिष्ट शब्दों का प्रयोग करना किस संस्कार एवं सभ्यता का प्रतीक है।

दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र पुस्तक में शरण कुमार लिंबाले ने सौंदर्यशास्त्र की चर्चा करते हुए कहते हैं कि भारतीय धर्म परंपरा में सत्य, शिव सुंदरम की परिकल्पना कि गई है, किन्तु इसके विपरीत दलित साहित्य दलित समाज में व्याप्त असत्य, असुंदर और अशिव की बात करता है - **“हिन्दू धर्मशास्त्र ने दलित मनुष्य के स्पर्श छाया और वाणी को अस्पृश्य माना है। अस्पृश्य के स्पर्श से अन्न पानी और मनुष्य अपवित्र होता है। मनुष्य ही नहीं ईश्वर भी अपवित्र होता है। अस्पृश्य के लिए अलग बस्तियाँ, अलग पनघट, अलग श्मशान भूमि की व्यवस्था की है।”** ⁸ चन्ना और रमची काम के तलाश में झाँसी आते हैं। झाँसी की नगर संरचना का उल्लेख करते हुए कथाकार ने बताया है कि दलितों का घर शहर के दूसरी छोर पर और गंदगी के अंबार पर ही होता है - **“दलित जातियों के लोग परकोटे के बाहर रहते थे। उनमें कुछ परिवार अंग्रेजों की सैनिक बस्ती के पास रहते थे और शेष वहाँ बसे थे जहाँ नगर भर का कूड़ा पड़ा होता था। उन्हें खास सीमा में रहने की ताकीद थी।”** ⁹

भारत की स्वतंत्रता के 76 वर्ष के बाद भी बहुत सारे आजादी के दीवाने गुमनाम अंधेरो में खोए हुए हैं। वर्तमान समय में उन्हें खोजकर निकालने के लिए अनेक कार्य किया जा रहा है। दलित एवं पिछड़े वर्ग के स्वतंत्रता सेनानियों के विवरण इतिहास एवं लोक में नहीं मिलता है, जिसका प्रमुख कारण इन्हें वीर और साहसी नहीं मानना था। मोहनदास नैमिशाराय जी कहते हैं - **“दलित समाज के लोग साहसी थे और बहादुर भी, लेकिन उनकी पहचान बने, ऐसा सवर्ण समाज नहीं चाहता था। उत्तर भारत में उनके लिए पग-पग पर अडचने थी। वर्ण व्यवस्था की दस्तक थी।”** ¹⁰ ऐसी विपरीत परिस्थिति में झलकारी बाई स्त्री और दलित पिछड़े वर्ग की होकर सैनिक के रूप में देश की सेवा करने के कार्य को सवर्ण समाज अवहेलना की दृष्टि से देखता था।

झलकारी बाई झाँसी की महिला सेना की कमांडर थी। प्रशिक्षण के दौरान गाय के बछड़े को गोली लग जाती है। जिसका गलत प्रचार करके झलकारी बाई और उनके पति पूरन को पंचायत द्वारा गो हत्या के लिए देश निकाला की सजा दे गयी। वे रानी लक्ष्मीबाई के पास अपनी समस्या लेकर जाते हैं लेकिन वे भी गऊ हत्या/चोट को अपराध की श्रेणी में मानकर उन्हें प्रायश्चित्त करने के लिए कहती है। मिथ्यारोपी ब्राह्मण को वे काई सजा नहीं देती है - **“पृथ्वी पर ब्राह्मण को देवता कहा गया था। उन्हें भू-राजस्व से शाश्वत मुक्ति प्राप्त थी और घोर से घोर पाप करने के लिए ब्राह्मण अबध्य था।”** ¹¹ रानी लक्ष्मीबाई ब्राह्मणों को नाराज नहीं करना चाहती थी।

कथाकार मोहनदास नैमिशाराय वीरांगना झलकारी बाई के लेखन का उद्देश्य बताते हुए कहते हैं कि भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में भारत की जनता ने बिना किसी भेदभाव एवं वर्ण संघर्ष के अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। किन्तु जब भी इतिहास में शहीदों एवं महानायकों का वर्णन होता है। तो सवर्ण मानसिकता से ग्रसित इतिहासकार दलित विभक्तियों का उल्लेख तक नहीं करते हैं। इसलिए आज इतिहास को नर्वाने सिरे से लिखने की आवश्यकता है- **“चश्माधारी इतिहासकारों, साहित्यकारों और पत्रकारों में से किसी ने भी दलित समाज की उस वीरांगना झलकारी बाई की खबर नहीं ली थी।”** ¹² इस ऐतिहासिक दलित स्त्री आत्मकथात्मक उपन्यास के माध्यम से उन्होंने दलित और पिछड़े समाज की गौरवशाली इतिहास को प्रकाशित करके दलितों की नयी पीढ़ी को प्रेरित करने का प्रयास किया। वीरांगना झलकारी बाई में नारायण शास्त्री और महिला (छोटी) की कथा के माध्यम से अंतर्जातीय विवाह का उल्लेख करते हुए झाँसी में होने वाला सामाजिक परिवर्तन का वर्णन किया गया है। मछरिया में विद्यमान

दलित अस्मिता एवं चेतना विद्यमान है। डॉ. शरणकुमार लिंबाले के शब्दों में - **“मनुष्य को केन्द्र मानकर जाति व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह करने वाली यह प्रतीत है। इस चेतना की प्रेरणा अंबेडकरवादी विचार है।”** ¹³ अंबेडकर के पूर्व भी दलितों में मनुष्य रूप में सामाजिक मान्यता हेतु समाज से संघर्ष होते रहे हैं। महाराजा गंगाधर राव के अकर्मण्यता एवं स्वभाव से वह परिचित थी। इसलिए उनके गलत आचरण के लिए नारायण शास्त्री से तर्क करती है - **“वे राजा हैं, कुछ भी करे और हम परजा। सबई नियम का परजाई के लाने है। राजा अपने लाने कुछ नई सोचता। अरे बीस दासियों को हरम में रख सबई के साथ रंगरलिया, फिर भी आग न बुझाई।”** ¹⁴ राजा के भोग-विलास के कारण झाँसी की जनता में आक्रोश था। शास्त्री और मछरिया का अंतर्जातीय विवाह सामाजिक बंधनों को तोड़ने वाला था। इसलिए मनुवादी समाज इसे सहन नहीं कर सका। राजा के दरबार में उन्हें बुलाकर महाराजा गंगाधर राव द्वारा उन्हें देश निकाला दे दिया गया। किन्तु झाँसी की धरती पर परिवर्तन की एक लहर तो उठ ही गयी थी। भारतीय समाज की संरचना पितृसत्तात्मक है। बिना पुरुष के सहयोग के स्त्री विकास के पथ पर अग्रसर नहीं हो सकती है। वीरांगना झलकारी बाई उपन्यास में महिला पलाटन में सैनिकों की संख्या नहीं बढ़ रही थी। रानी लक्ष्मीबाई से झलकारी बाई ने कहा कि जब तक उनके पति नहीं कहेंगे वे सेना में सम्मिलित नहीं होगी। स्त्री जीवन का यह दारुण सच है कि वह सवर्ण समाज में हो या दलित पिछड़े समाज में उसकी समस्याएँ एक समान ही हैं। रानी लक्ष्मीबाई को अपनी पुरानी स्मृति याद आ जाती है - **“वे नाचने के लिए कहे तो नाचने लगे फूल से भरे सेज पर लेटने के लिए कहे तो बिछ जाऊँ सभी अपनी पत्नियों को अंकशायिनी बनाकर रखना चाहते हैं जाँबाज़ बनाकर नहीं”** ¹⁵ झाँसी के राजा को रानी का तलवार चलाना पसंद नहीं था, तो सामान्य परिवार के पुरुष अपनी पत्नियों को सेना में क्यों भेजना चाहते। समाज में प्रगतिशीलता की धारा प्रवाहित हो रही थी। जो पितृसत्तात्मक सोच को बदल रही थी।

झाँसी की स्वतंत्रता के लिए जनता अपना सर्वस्व न्योछावर करने को तैयार थी। इस स्वतंत्रता यज्ञ में सभी धर्मों के लोगों ने राष्ट्रीयता की भावना से ओत प्रोत होकर झाँसी के लिए प्राण-प्रण से लग गए। मोहनदास नैमिशाराय कहते हैं कि दलित वर्ग कमजोर नहीं है, किन्तु उन्हें कमजोर बनाने की साजिश जारी है - **“झलकारी न स्वयं कमजोर थी और न उनकी जाति थी। पर उन्हें कमजोर बनाए रखने की सदियों से चले आ रहे ऐसे नियम थे, जिन पर कड़ाई से पालन होता था।”** ¹⁶

सेना में दलित-पिछड़ों के शामिल होने से झाँसी का सवर्ण समाज नाराज था, किन्तु रानी समानता की पक्षधर थी। उनके लिए झाँसी की सुरक्षा एवं आजादी सर्वोपरि था। 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में वीरांगना झलकारी बाई की भूमिका का उल्लेख करते हुए कथाकार कहते हैं - **“जिस इतिहास ने 1857 की परिस्थितियों का निर्माण किया था। उसकी निर्मात्री अकेली रानी लक्ष्मीबाई नहीं थी, झलकारी भी थी। सुत काटते हुए उसने क्रांति की लड़ियों की बुनावट कर डाली थी। ऐसी बुनावट जिसमें अंग्रेज भी उलझकर रह गए थे।”** ¹⁷ एक सामान्य दलित स्त्री रानी लक्ष्मीबाई का सानिध्य पाकर देश की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष में सहगामिनी बन गयीं।

प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन के समय भारत में राष्ट्रीयता की भावना का अभाव था। देश छोटी-छोटी रियासतों में विभाजित था। वे एक-दूसरे को ईर्ष्या एवं विद्वेष की दृष्टि से देखते थे। झाँसी के राजा गंगाधर राव की मृत्यु के बाद झाँसी पर अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया। लेकिन भारतीय जनता एवं देशी सैनिकों को कोई परवाह नहीं था। अंग्रेजों की संख्या कम

होने पर भी राजा, नवाब, बड़े जागीरदार उनके इशारे पर नाचते रहते थे।
“ झाँसी में सैनिक और असैनिक कुल मिलाकर झाँसी में अस्सी अंग्रेज थे। दूसरी तरफ झाँसी के ही हजारों देसी सैनिकों की मौजूदगी, उनकी देश-प्रेम की भावना तब कहीं चली गई। ”

18 झाँसी में राजनीतिक उथल-पुथल के कारण जनता के व्यक्तिगत एवं सामूहिक हितों को आघात लगा था।

10 मई 1857 में मेरठ की छावनी में भारतीय सैनिकों ने विद्रोह कर दिया था। झाँसी में पूरन कोरी और भाऊ बख्शी ने नेतृत्व संभालने का कार्य किया था। मेरठ और दिल्ली के सिपाहियों के सहयोग से झाँसी और कानपुर अंग्रेजों की पराधीनता से मुक्त हो गए। 8 जून 1857 को झाँसी में विद्रोह की अग्नि पुनः प्रज्वलित हो गयी। झाँसी में घोषणा किया गया - **“अमूल खुदा का झाँसी लक्ष्मीबाई की - फिरंगियों को मार डालो। ”**¹⁹ इस उद्घोष से लग रहा था कि झाँसी की रानी को उनका खिलाफ वापस मिल गया था।

अंग्रेजों की चौतरफा घेराबंदी के विरुद्ध वीरांगना झलकारी बाई और पूरन के नेतृत्व में दलित और पिछड़ी जाति के लोगों ने युद्ध प्रारंभ किया। झलकारी बाई ने अदम्य वीरता और साहस का परिचय दिया। वे चाहती थी कि रानी लक्ष्मीबाई बिठूर के सुरक्षित स्थान पर पहुँच जाएं। झलकारी बाई अंग्रेजों की सेना पर भारी पड़ रही थी- **“वे पाँठ दिखाकर मरना नहीं चाहती थी। लड़ते-लड़ते वीरगति को प्राप्त होने की उनकी ललक थी। जूनन था उनके भीतर। ”**²⁰ वीरांगना झलकारी बाई देखने में रानी लक्ष्मीबाई एक समान ही लगती थी। अंग्रेजों का ध्यान भटकाने के लिए झलकारी बाई अपनी सूझ-बूझ का परिचय दिया और मेजर जनरल ह्यरोज से मिलने की बात करती है।

अंग्रेज सैनिक प्रसन्न हुए कि उन्होंने रानी लक्ष्मीबाई को पकड़ लिया है और वे विजयी हो गए हैं। लेकिन झाँसी का देशद्रोही दुल्हाज ने उन्हें पहचान लिया। जिससे लक्ष्मीबाई उस पर क्रोधित हो गयीं - **“अरे पापी तै ठाकुर होके याई का करौ। तै पैदा होतई मर कौ नई गयौ। रानी का नमक खाकर भी खदारी की। ”**²¹

दुल्हाज के बताने पर ह्यरोज झलकारी बाई को गोली मारने के लिए कहता है। इस पर प्रतिक्रिया करते हुए वे बोली कि मुझे मौत से डर नहीं लगता है। उनकी और साहस से प्रभावित होकर मेजर जनरल ह्यरोज स्टुअर्ट से कहता है - **“नो स्टुअर्ट अगर हिन्दुस्तान की एक फीसिदी लड़कियाँ भी इस लड़की की तरह दीवानी हो गई तो हम सबको यह देश छोड़ भागना पड़ेगा। ”**²² अंग्रेज जनरल ने झलकारी बाई को उनकी निडरता के कारण जीवित छोड़ दिया। जीवित बच जाने के बाद भी झलकारी बाई दुःखी थी क्योंकि सामान्य दलित और पिछड़े वर्ग की महिला होकर भी कमांडर बनी। झाँसी की महिलाओं को तलवार चलाना सीखाया और अपने अधिकारों के लिए सवर्ण समाज से संघर्ष किया लेकिन वह झाँसी को अंग्रेजों के चंगुल से नहीं बचा पायी।

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि वीरांगना झलकारी बाई उपन्यास के माध्यम से मोहनदास नैमिशराय ने भारतीय इतिहास की दलित और पिछड़े वर्ग के की नायिका झलकारी बाई के जीवनवृत्त के माध्यम से इतिहास के गर्त में छिपी दलित अस्मिता, उनके संघर्ष को वर्णन किया है। भारत के पितृसत्तात्मक संरचना एवं सवर्ण समाज से मुठभेड़ करती हुयी वे रानी लक्ष्मीबाई की सहगामिनी बनकर अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का परचम लहराती है। उपन्यास के माध्यम से कथाकार सामान्य जनता के दुःख पीड़ा एवं सत्ता परिवर्तन से उत्पन्न परिस्थितियों का वर्णन किया है। अंबेडकर और अन्य सामाजिक सुधारक बाद में आए किन्तु दलित अस्मिता एवं चेतना के बीज 1857 ई. के पहले से भारतीय दलित और पिछड़े वर्ग के अंदर विद्यमान थी, जो बाद में प्रस्फुटित हुई। वीरांगना

झलकारी बाई के बारे में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं-

**“जा कर रण में ललकारी थी,
वह तो झाँसी की झलकारी थी।
गोरों से लड़ना सिखा गई,
है इतिहास में झलक रही,
वह भारत की ही नारी थी। ”**²²

संदर्भ सूची

1. वीरांगना झलकारी बाई, मोहनदास नैमिशराय, राधाकृष्ण पेपरबैक्स संस्करण - पहली आवृत्ति - 2022, पृ. सं. - 23
2. वही, पृष्ठ - 16
3. वही, पृष्ठ - 27
4. वही, पृष्ठ - 35
5. आधुनिक भारत के निर्माता भीमराव अंबेडकर, डब्ल्यू.एन.कुबेर, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली, संस्करण - 2023, पृ. सं. - 1
6. वीरांगना झलकारी बाई मोहनदास नैमिशराय, राधाकृष्ण पेपरबैक्स, संस्करण पहली आवृत्ति - 2022, पृष्ठ सं. - 38
7. वही, पृष्ठ - 51
8. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र - डॉ. शरणकुमार लिंबाले, सम्पादक रमणिका गुप्ता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण - आवृत्ति - 2020, पृ. सं. - 32
9. वीरांगना झलकारी बाई, मोहनदास नैमिशराय, राधाकृष्ण पेपरबैक्स संस्करण - पहली आवृत्ति - 2022, पृ. सं. - 51
10. वही, पृष्ठ - 64
11. आधुनिक भारत के निर्माता भीमराव अंबेडकर, डब्ल्यू.एन.कुबेर, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली, संस्करण - 2023, पृ. सं. - 2
12. वीरांगना झलकारी बाई, मोहनदास नैमिशराय, राधाकृष्ण पेपरबैक्स संस्करण - पहली आवृत्ति - 2022, पृ. सं. - 5
13. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, - डॉ. शरणकुमार लिंबाले, सम्पादक रमणिका गुप्ता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण - आवृत्ति - 2020, पृ. सं. - 44
14. वीरांगना झलकारी बाई, मोहनदास नैमिशराय, राधाकृष्ण पेपरबैक्स संस्करण - पहली आवृत्ति - 2022, पृ. सं. - 39
15. वही, पृष्ठ - 64
16. वही, पृष्ठ - 81
17. वही, पृष्ठ - 44
18. वही, पृष्ठ - 58
19. वही, पृष्ठ - 91
20. वही, पृष्ठ - 95
21. वही, पृष्ठ - 99
22. वही, पृष्ठ - 100
23. <https://hindi.webduuia.com>

आदिवासी कविताओं में स्त्री अस्मिता

डॉ. भारती लक्ष्मी पाल

अतिथि प्राध्यापिका, हिंदी विभाग

गुलबर्गा विश्वविद्यालय, कलबुरगी, कर्नाटक

एवं के.बी.एन. विश्वविद्यालय, कलबुरगी, कर्नाटक

दूरभाष: 8050909991 ईमेल : bharatilaxmi@gmail.com

शोधसार:

आदिवासी साहित्य आदिवासी अस्मिता की बात करता है। यह सहअस्तित्व, सहजीविता में विश्वास रखता है। आदिवासी साहित्य में काव्य लेखन बहुत पुरानी परम्परा है। इसकी पृष्ठभूमि मौखिक साहित्य ही रहा है। हिंदी की पहली कवयित्री सुशीला सामद, 1930-40 के दशक में रही हैं। आदिवासी कविता के माध्यम से स्त्री अस्मिता की बात कही गयी है। आदिवासी स्त्री, आदिवासी समाज के साथ-साथ आम समाज में भी अपनी बराबरी का हक चाहती है। वे अपने अस्मिता के लिए दोनों समाजों से लड़ती हुई दिखाई देती है। ज्यादातर आदिवासी समुदाय में उनको बराबरी का हक मिला है लेकिन कुछ में पुरुष वर्चस्व देखने को मिलता है। उनका अस्तित्व आज भी संकट में है। स्त्री अपने अनुभवों को ही कविता के माध्यम से प्रकट करती है। वह अपने आप को देवी के रूप में नहीं मनुष्य के रूप में समाज में खड़ा करना चाहती है। घर-परिवार में अपने कर्तव्य के अलावा वह अपनी खुद की पहचान व अस्तित्व चाहती है, जिसको सामाजिक स्वीकृति मिलना आवश्यक है। आदिवासी कविता उनके अनुभवों को व्यक्त करने का एक माध्यम है।

बीज शब्द: स्त्री अस्मिता व अस्तित्व, आदिवासी जीवन, संघर्ष, दुःख-दर्द, स्त्री विद्रोह, बुनियादी हक

आमुख: नारी अस्मिता अर्थात नारी स्वतन्त्रता, इसका मतलब यह नहीं कि समाज से अलग नारी स्वतंत्रता, इसका मतलब यह है कि वह किसी और के अधीन न होकर स्व-अधीन रहना चाहती है। समाज में सकारात्मक बदलाव के लिए नारी पुरुष के साथ-साथ चलना चाहती है, वह चाहे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि स्थिति में क्यों न हो। आदिवासी हिंदी कविता में स्त्री अस्मिता को व्यक्त करने वाले प्रमुख कवियों में हैं – निर्मला पुतुल, ग्रेस कुजूर, वंदना टेटे, सरिता बड़ाईक, रमणिका गुप्ता, अनुज लुगन, सुशीला सामद आदि। वैश्वीकरण के दौर में आज स्त्री केवल भोग की वस्तु समझी जाती है। वह अपना पूरा जीवन परिवार और समाज को समर्पित कर देती है लेकिन समाज उसको प्रताड़ित करता रहता है। आदिवासी स्त्रियाँ अपनी अस्मिता के लिए संघर्षरत हैं। पुरुषवादी सत्ता नारी को गुलामी की बेड़ियों में जकड़ कर रखना चाहता है। पुरुष की हर इच्छा वह पूरी करती है किन्तु वह उसकी इच्छाओं का दमन कर देती है। वह अपने परिवार के लिए बिना थके ही काम करती रहती है फिर भी उसको वह सम्मान नहीं मिलता जो मिलना चाहिए। निर्मला पुतुल ने आदिवासी स्त्री की पीड़ा को अपनी कविता 'क्या हूँ मैं तुम्हारे लिए' में लिखती हैं कि –

“क्या हूँ मैं तुम्हारे लिए
एक तकिया
कि कहीं से थका- मांदा आया
और सिर टिका दिया
.....

कोई डायरी /कि जब चाहा
कुछ न कुछ लिख दिया
खामोश खड़ी दीवार
की जब जहाँ चाहा
कील ठोक दी
कोई गेंद /कि जब तक
जैसे चाहा उछाल दी
या कोई चादर/कि जब जहाँ जैसे-तैसे
ओढ़-बिछा ली ?” (1)

औद्योगीकरण के नाम पर आदिवासियों को छला जा रहा है। उनसे जल, जंगल और जमीन छीने जा रहे हैं। उनको मजदूरी के लिए विवश किया जा रहा है। आदिवासी स्त्रियाँ अपने घर की आर्थिक हालत को देखते हुए शहर में मजदूरी करने के लिए विवश हो जाती हैं किन्तु उनके साथ वहाँ प्रगति के नाम पर शोषण और अत्याचार किया जा रहा है। आदिवासी स्त्रियों को देह मात्र समझ कर उनके साथ दुष्कर्म करते हैं, या फिर बेच दिया जाता है। इसके चलते वह कभी घर वापस नहीं आ पाती। इस दुःख को प्रकट करती हुई कवयित्री सरिता बड़ाईक अपनी कविता 'बेटों और नागफनी' में लिखती हैं कि –

“श्मशान जाने से पहले
नागफनी कांटे से
भेदे गये हथेली और पाँव
उरवा-सुतरी से बाँधी गई बेटों
सरसों छींटी गई
घर से श्मशान तक
कांटे चुभे पाँव से सरसों न चुन सके
हाथ/और वापस न आ सके बेटों अपने
गांव!” (2)

स्त्री अपनी स्वयं की पहचान के लिए संघर्षरत है। समाज में वह अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाना चाहती है। परिवार की आड़ में जो छिप गया है उससे निकलना चाहती है। जीवन की जो बाधाएँ होती हैं उनको पार करके अपने आप को सीमित फलक से विस्तृत फलक पर स्थापित करना चाहती है। इस पर निर्मल पुतुल अपनी कविता 'मेरे एकांत का प्रवेश द्वार' में लिखती हैं-

“यह कविता नहीं
मेरे एकांत का प्रवेश-द्वार है
यही आकर सुस्ताती हूँ मैं
टिकती हूँ यहीं अपना सिर
जिंदगी की भांगे-दौड़ से थक-हार कर
.....
मैं कविता नहीं
शब्दों में खुद को रचते देखती हूँ
अपनी काया से बाहर खड़ी होकर
अपना होना।” (3)

कविता केवल शोषण और अत्याचार के लिए ही नहीं, स्त्रियों के बुनियाद को भी मजबूत करने के लिए भी लिखा गया है। कविता के माध्यम से समाज के दोगलेपन को समझने का सन्देश दिया गया है। उनको अपनी बुद्धि का प्रयोग करते हुए मनुष्य के प्रकृति को पहचानने की शिक्षा कविता के माध्यम से दी गयी है। निर्मला पुतुल स्त्री की व्यथा के साथ-साथ उनकी बुनियादी सरोकार को भी कविता में शामिल किया है। उनकी कविता 'बेटियाँ मर्म के लिए' में लिखती हैं कि –

“वे देबे-पाँव आते हैं तुम्हारी संस्कृति में
वे तुम्हारे नृत्य की बड़ाई करते हैं
वे तुम्हारी आँखों की प्रसंसा में कशीदे पढ़ते हैं
वे कौन हैं?

सौदागर हैं वेसमझो!
पहचानों उन्हें बेटियाँ मर्मपहचानो!
पहाड़ों पर आग वे ही लगाते हैं
उन्ही की दुकानों पर तुम्हारे बच्चों का
बचपन चीत्कारता है
उन्ही की गाड़ियों पर

तुम्हारी लड़कियाँ शब्जबाग देखने
कलकत्ता और नेपाल के बाजारों में उतरती हैं।” (4)

स्त्री अपनी अस्मिता के लिए सुदृढ़ हो रही है। शोषण और अत्याचार के खिलाफ आवाज़ उठा रही है। अपने जीवन के सभी पहलुओं में संघर्ष करती वह नज़र आ रही है। उनके अस्तित्व की पहचान आदिवासी दर्शन के बुनियादी तत्व जल, जंगल और जमीन पर ही खड़ा है। इनको भी वे बचाना चाहती हैं। वन्दना टेटे स्त्री जीवन में अत्याचार के खिलाफ संघर्ष करने की प्रेरणा देते हुए लिखती हैं –

“उपनामों का बोझ ढोये
खड़ी है जबरन अपनी जमीन पर
हाँ, बड़ी उदंडता से
क्योंकि फतवा जारी है
उसके खिलाफ
और वह
हुकूमरानों के लारियाये मुहँ
और कुत्तों से तीखे दांतों
के खिलाफ।” (5)

स्त्री अस्मिता बिना पर्यावरण सुरक्षा के नहीं हो सकता। पर्यावरण उनके अस्तित्व की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वे एक दूसरे के पूरक हैं। उन्ही से ही उनकी पहचान है और पहचान ही उनका अस्तित्व है। जल, जंगल और जमीन ही नहीं रहेगा तो उनकी पहचान भी संकट में आ जायेगी। रमणिका गुप्ता स्त्री अस्मिता को पर्यावरण के माध्यम से समझने पर जोर देते हैं। वे लिखती हैं –

“ओ देवदार, तुम्हारे पत्ते
जब भर देते हैं अंधेरे में गंध
सरसराने लगती है ध्वनि तो
सुर में सुर मिलाकर
सारा का सारा जंगल
लगता है गाने
दूर- दूर तक पसर जाता है राह का सन्नाटा
डरने लगता है मन
क्या तुम्हे याद आता है
शादियों से पहले का दुर्दम दमना।” (6)

स्त्रियाँ अपने आत्मसम्मान की रक्षा हेतु हमेशा आत्ममुखर रही है। वे

अपनी जड़ मजबूत करना चाहती है ताकि कोई भी उनको उखाड़ न सके। वे अपनी अस्तित्व की लड़ाई पहले भी लड़ रही थी, आज भी लड़ रही है बिना थके। वे उम्मीद बिना छोड़े हक की लड़ाई लड़ रही है। एक वीर पुरुष की भाँति आदिवासी महिलाएं भी अपनी आत्मसम्मान के लिए संघर्ष कर रही है। अनुज लुगुन अपनी कविता 'उलगुलान की औरतें' में आत्मसम्मान के लिए लड़ाई करती स्त्रियों पर लिखते हैं की –

“वे उतनी ही लड़ाकू थी
जितना की उनका सेनापति
वे अपनी खूबसूरती से
कहीं ज्यादा आक्रामक थी
अपने जुड़े में उन्होंने ईचा बा की जगह
साहस का फुल खोसा था
उम्मीद की तरह पिरोया था
हक की लड़ाई में

उन्होंने बोया था आत्मसम्मान का बीज।” (7)

आदिवासी स्त्रियाँ वीर, साहसी, संघर्षशील, जुझारूपन, परिश्रमी, दयालु और प्रेम, ममत्व की भावनाओं से ओतप्रोत हैं। वे अपनी अस्तित्व स्थापना हेतु पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलना चाहती है। आदिवासी कवयत्री वंदना टेटे अपनी कविता 'औरत-1' में संघर्षशील औरत को उजागर करती हुई लिखती हैं –

“कोई-कोई मोर्चे पर खड़ी
लड़ रही औरत
भीड़ में अकेली, अनवरत
थकती – टूटती

फिर मजबूत करती खुद को खुद से
खेतों – खलिहानों में
जंगल मरुभूमि में
घर में आँगन में।” (8)

उपसंहार:

उत्तर – औपनिवेशिक का दौर ही अस्मिताओं के मुक्तिकामी संघर्ष का था। आदिवासी साहित्य अपनी संवेदना तथा अस्मिता मूलक भाव-वोध को व्यक्त करता है। शहरीकरण, बाजारीकरण, औद्योगीकरण आदि के दौर में आदिवासी साहित्य की पहचान ही जल, जंगल, जमीन की सुरक्षा ही है, जो अस्मिता की रक्षा की बात भी करता है। यह साहित्य वाचिक परम्परा में प्राप्त 'हाशिये का साहित्य' में प्रतिरोध का स्वर को अभिव्यक्त करता है। आदिवासी साहित्य में स्त्री अस्मिता कई रूपों में देखे जा सकते हैं जैसे शोषण और अत्याचार के खिलाफ संघर्ष, वीरत्व का परिचय, प्रकृति की सुरक्षा, पहचान के लिए संघर्ष आदि। इन सभी से स्त्री अस्मिता को समझा जा सकता है। वे अपने अस्तित्व के साथ-साथ प्रकृति और संस्कृति की सुरक्षा को स्थापित करना चाहती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. अदिवासी चिंतन की भूमिका, गंगा सहाय मीणा, पृ.सं. 53
2. वही, पृ.सं. 57
3. www.hindwi.org
4. अदिवासी चिंतन की भूमिका, गंगा सहाय मीणा, पृ.सं. 54
5. वही, पृ.सं. 60
6. सं. – फारवर्ड पत्रिका, पृ.सं. 62, मई 2015
7. www.hindwi.org
8. वंदना टेटे। कोनजोगा, प्यारा केरकेट्टा फाउंडेशन, रांची, 2015, पृ.सं. 35

Digital Payment Frauds in India – Challenges and Solutions

Sri Rajashekara. N.

IPS & Research Scholar

School of Interdisciplinary and Tran disciplinary Studies Indira Gandhi National Open University, New Delhi, India
110068 E-mail rajashekarn1@yahoo.co.in (Corresponding Author)

Dr Abhishek Mishra

Assistant Professor

School of Interdisciplinary and Tran disciplinary Studies Indira Gandhi National Open University, New Delhi, India
110068, E-mail abhishekmishra@ignou.ac.in ORCID 0009-0008-3340-9749

Abstract: It is likely that every individual in India has encountered some form of cybercrime or fraud, even if they have not suffered a financial loss. Receiving a phishing email or text message qualifies one as a victim of cybercrime. The evolving tactics employed in digital payment fraud often involve requests for account numbers, usernames, or passwords under a Vishing Calls or sending the links to steal the credentials taking control of the Mobile devices. These days Digital Arrest, Fake Investment offers, Part time job frauds, QR scam codes, FedEx courier scams are on rise. The Modus Operandi changes but the anonymity of the fraudster using fake SIM cards, edited Aadhar card, using mule or rented bank accounts and the proceeds of the crime parked in Crypto almost remains almost the same.

Subsequently, Remote Access Trojans (RATs) such as TeamViewer or Any-Desk through phishing communications make the victims unwittingly grant control of their mobile devices to the perpetrators. In 2023, approximately 34% of users in India were targeted by local threats, positioning the country as the 80th most targeted globally. This ranking is derived from a report that examined the presence of malicious software directly on users' devices or on removable media connected to them, such as flash drives, memory cards, and external hard drives. The report also noted that many of these threats infiltrated systems through complex installers or encrypted files. Kaspersky products successfully blocked around 74,385,324 local incidents in India.

Key Words: Cybercrime, Digital Payment Fraud, Phishing, Cryptocurrency Fraud, and Remote Access Trojans (RATs)

Background: The cybersecurity market in India reached a valuation of USD 6.06 billion in 2023. Furthermore, nearly 67% of Indian enterprises are reportedly planning to outsource critical aspects of their security frameworks to manage the security service providers within next three years. With 560 million internet users, India ranks as the second-largest online market globally, following China. According to data from the National Crime Records Bureau (NCRB), there were 52,974 reported cases of cybercrime in India in 2021, reflecting a 5% increase from the 50,035 cases documented in 2020, and a 15% rise compared to previous years. There are 7000 Cyber Crimes happening every day not to mention large junk is unreported.

The rate of cybercrime rose from 3.3% of all registered criminal cases in 2019 to 3.7% in 2020. As reported by the National Crime Records Bureau (NCRB), the predominant type of cybercrime in 2020 was fraud, which constituted 60.2% of the total cybercrime cases, amounting to 30,142 out of 50,035 cases. Additionally, 6.6% of the cases, or 3,203 incidents, were related to sexual abuse, while 4.9%, equating to 2,440 cases, involved extortion. The NCRB also noted that there were 4,047 cases of online banking fraud in 2020, with 1,093 cases linked to OTP theft, 1,194 incidents of debit/credit card fraud, and 2,160 cases concerning ATM fraud. Furthermore, among the 578 cases of misinformation on social media, there were 972 cases of online harassment or cyberbullying targeting women and children, 149 cases involving fake profiles, and 98 cases related to data theft. In response to the growing cybercrime threat, the Cyber and Information Security (CIS) division was established in 2017, followed by the creation of the Indian Cyber Crime Coordination Centre (I4C) on January 10, 2020, under the Ministry of Home Affairs.

Cases Registered under Fraud for Cyber Crimes

Credit/Debit cards	ATMs	Online Banking frauds	OTP frauds	Others	Total
1665	1690	6491	2910	4714	17470

Source: <https://pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=2080186>

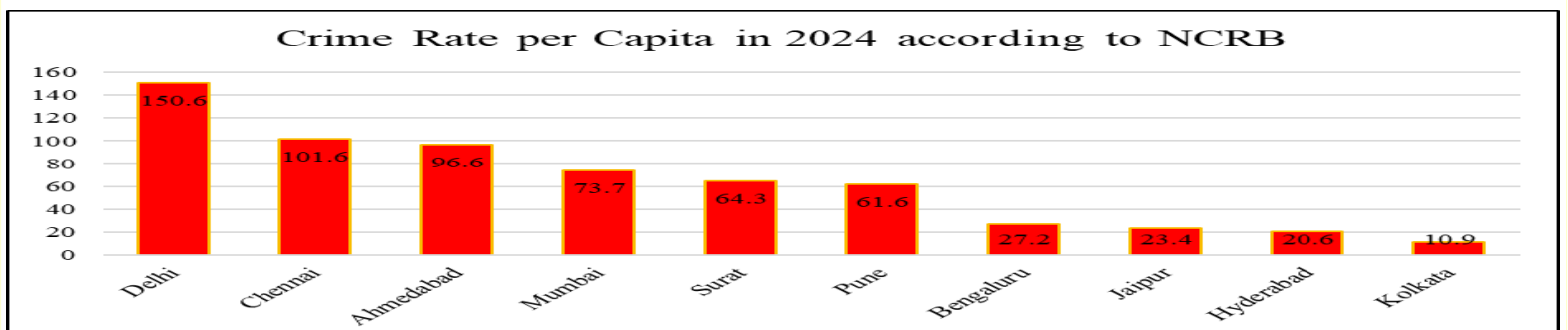
The National Cybercrime Forensic Laboratory, the National Cybercrime Training Centre, and the Joint Cybercrime Investigation Task Force are integral components of the cybercrime ecosystem management unit. Additionally, the National Cybercrime Research and Innovation Centre and the National Cybercrime Reporting Portal, along with the National Automated Fingerprint Identification System (NAFIS), were established on August 17, 2020. Furthermore, there exists a Registry of Foreigners involved in crime in India. Increasing Digital Payment frauds under financial frauds make the Ministry of Home Affairs come with separate wing of financial frauds under its portal National Cybercrime Reporting Portal. Further for Law Enforcement agencies www.Cyberpoliceportal.com has been established. Victim calling 1930 or registering under www.Cybercrime.gov.in can choose either financial frauds or the Cybercrimes against women and Children or other Cyber Crimes. If they prepare to go CEN police station (Cyber, Economic, Narcotics) then the Police will file a complaint under Police cyber portal.

Digital Payment Frauds in India: As for the latest statistics on cybercrime for 2023, the top five types of identity theft are as follows:

1. Credit card fraud (new accounts): 381,122 reports (42.0%)
2. Miscellaneous identity theft: 279,221 reports (30.7%)
3. Bank fraud (new accounts): 84,335 reports (9.3%)
4. Government benefits fraud (applied for/received): 82,419 reports (9.1%)

According to the annual report from the Reserve Bank, incidents of online payment fraud have surged fivefold in the financial year 2023-24, with cybercriminals defrauding individuals of Rs 14.57 billion (Rs 1457 crore) in the previous financial year. The Unified Payments Interface (UPI) service, launched in India eight years ago in 2016, has seen a remarkable increase in usage, with payments through UPI rising by 137 percent over the last two years. A record total of Rs 200 trillion has been transacted through UPI in India. The report indicates that the number of UPI transactions experienced a significant year-on-year growth of 56% in the second half of 2023, increasing from 42.09 billion to 65.77 billion. Concurrently, the value of transactions during this period surged by 44%, rising from INR 69.36 trillion to INR 99.68 trillion.

Challenges: The anonymity associated with individuals involved in digital payment fraud serves as a significant advantage for perpetrators. For instance, the SIM cards, PAN numbers, and identity documents they acquire are often counterfeit. A straightforward method for these fraudsters is to manipulate the Aadhar PDF copy, enabling them to obtain numerous SIM cards. The Centre for Development of Telematics (C-DOT), under the Government of India, utilizes ASTR software to identify the fake SIM using Facial recognition powered by Artificial Intelligence and Machine Learning using photographs used for SIM card applications. Each image is altered in various ways using Photoshop, and each Aadhar card undergoes multiple edits. Consequently, when the customer application forms are examined, they frequently lead to either unidentified individuals or non-existent entities. Retail outlets that provide SIM cards typically do not enforce stringent Know Your Customer (KYC) protocols, allowing them to distribute SIM cards for a nominal fee. Additionally, websites such as www.thispersondoesnotexist.com gives AI enable pictures of any individual. www.sms-receiver.com offer temporary SIM numbers to obtain OTP's from various countries, creating an ideal environment for fraudsters to establish fake accounts on different platforms, including social media. Channels on Telegram and Facebook, as well as WhatsApp groups, entice individuals with promises of high returns from cryptocurrency and stock market investments. Fraudsters, masquerading as investors, share messages claiming substantial profits within a short timeframe. Although the wallets may display impressive returns, actual withdrawals are consistently denied.



Source: <https://www.indiatoday.in/technology/features/story/digital-arrest-scam-rising-in-india-here-is-how-to-protect-yourself-and-everything-else-you-need-to-know-2648746-2024-12-12>

Solutions: The Government of India has established Know Your Customer (KYC) regulations for cryptocurrency investments. A 1% Tax Deducted at Source (TDS) is applicable on these investments, along with a 30% tax on profits derived from cryptocurrency trading, without the possibility of set-off or set-on, in contrast to the Goods and Services Tax (GST) framework. These regulations are designed to prevent the use of anonymous or fraudulent accounts in cryptocurrency transactions. Consequently, fraudsters have resorted to renting properties and creating rental agreements to alter the addresses on their Aadhaar cards. Using these modified local addresses, they open savings bank accounts to invest the illicit funds. They often disappear overnight, and when law enforcement requests address verification from Aadhaar, only the current address is provided, omitting any previous locations.

Cybercrime in India – Challenges: A significant limitation exists within the National Cyber Crime Reporting Portal (NCRP), which operates under www.cybercrime.gov.in. For instance, if individual A frauds individual B of ₹1 lakh, and B subsequently transfers ₹10,000 to ten different individuals, the NCRP may freeze the accounts of all ten beneficiaries. However, one beneficiary, C, may have received the funds legitimately for restaurant services, yet their account remains frozen. This situation has led to legal challenges for platforms like Wazir-X, which have been accused of handling funds that are deemed proceeds of crime.

Additionally, international digital payment frauds pose another challenge. For example, Chinese loan application scams often reroute funds to China through various currencies, which then appear as legitimate currency for the scam's accomplices in India. The recent digital arrest scam, where numerous Indians were held hostage in a cyber-crime crisis, also involved multinational transactions, with currencies being converted through cryptocurrency investments. The new criminal laws have addressed issues of territorial jurisdiction, as the term "India" has been removed from Section 1 of the Bharatiya Nyaya Sanhita, allowing for the prosecution of digital payment frauds and cybercrimes on a global scale, including offenses committed using cryptocurrency.

Solutions: The term "India" has been incorporated into Section 1 of the Bharatiya Nyaya Sanhita (BNS), enabling the government to address digital payment fraud and cybercrimes on a global scale, particularly those involving cryptocurrencies, Virtual Private Networks (VPNs), Tor Onion browsers, and activities on the dark web and deep web. Section 48 of the BNS stipulates that abetting an offense committed outside India is now punishable, a shift from the previous provisions of the Indian Penal Code (IPC). Furthermore, Section 208 of the BNS clarifies that offenses registered in India can also pertain to actions committed outside the country. Cyber-crimes are encompassed under Section 111, which addresses organized crimes, while economic offenses, including hawala transactions and mass marketing fraud, fall under the same category. The definition of theft, as outlined in Section 112 concerning petty organized crimes, now includes thefts such as card skimming, shoplifting, and automated teller machine theft.

In relation to forgery, Section 337 of the BNS addresses the creation of counterfeit documents or electronic records, including identity documents issued by the government, such as voter identity cards and Aadhaar cards. The definition of theft of movable property has been broadened to include data theft and online theft through hacking of bank accounts or mobile cloning. Are we adequately prepared to combat the threat of digital payment fraud? While progress has been made, it remains insufficient. With the establishment of the Indian Cyber Crime Coordination Centre (I4C) and the introduction of Cyber Economic and Narcotics (CEN) police stations in each district, a framework is now in place to tackle these issues. However, the CEN police stations currently lack the necessary cyber forensics tools for effective investigations. It is imperative that our investigative officers enhance their capabilities to keep pace with the evolving tactics of fraudsters. A dedicated recruitment initiative for cyber specialists is essential at this juncture. High-value fraud cases are addressed through a mechanism where the lien amount refers to funds that are temporarily held. The cyber police portal allows law enforcement officers to submit requests, but only those involved in the criminal justice system are authorized to file complaints. Currently, there is coordination among all banks and the National Crime Records Bureau (NCRB). For instance, if a victim's account is with the State Bank of India (SBI), a police officer can file a complaint in the cyber police portal to trace the beneficiary.

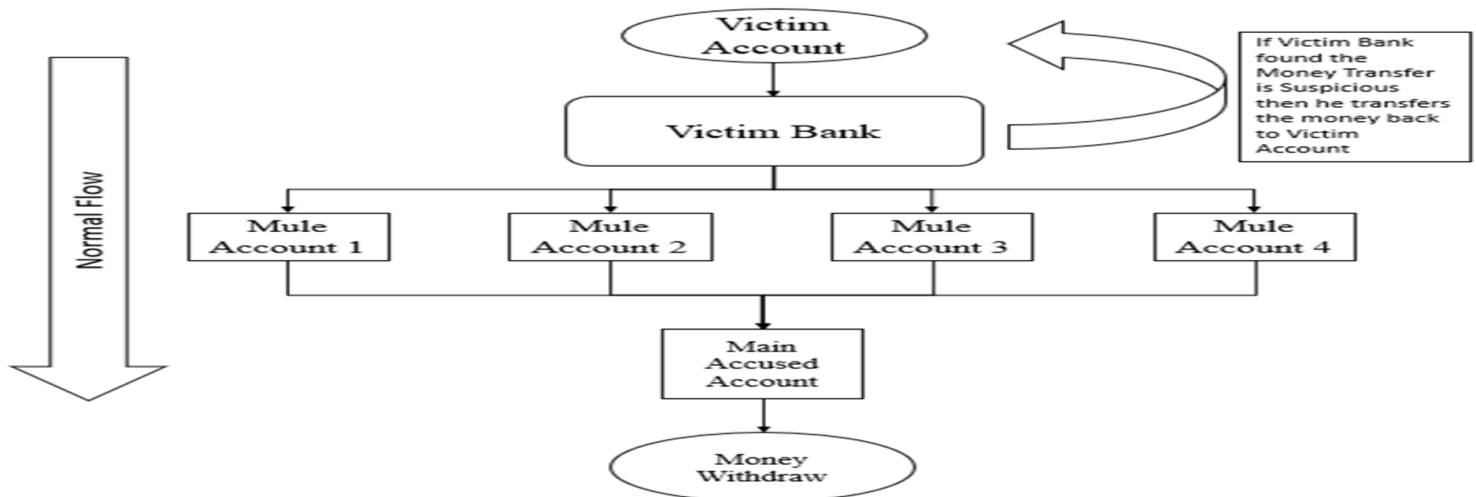
Most banks now have designated nodal officers responsible for managing payment-related issues. When a complaint arises regarding unauthorized debits or fraud, based on reports from law enforcement or the complainant, the next beneficiary is identified. If the funds have been utilized or transferred, this information is communicated to the relevant bank, complainant, or police officer. The integration of Artificial Intelligence is essential in tracing financial transactions,

determining the legitimacy of payments, and identifying potentially fraudulent activities, such as payments made for restaurant bills or purchases.

Banks operate customer care centres that handle such complaints promptly, available 24/7. Each bank has an incident manager stationed across the country, and two representatives from each bank are affiliated with the Indian Cyber Crime Coordination Centre. Furthermore, the all-India helpline number 1930 and the website www.cybercrime.gov.in have mapped nearly 14,000 police stations, ensuring that complaints can be directed to the appropriate local authorities.

The website www.cybercrime.gov.in or the helpline 1930 serves as a facilitative portal, directing complaints to either standard police stations or specialized Cyber, Economic, or Narcotics police stations. Each police station has designated state and district nodal officers responsible for addressing cyber-crimes and digital payment frauds. These nodal officers facilitate communication with relevant banks to trace KYC details and financial transactions. Upon receipt of a complaint, incident managers receive notifications in real-time.

For prompt resolution of grievances, the bank of the final beneficiary is authorized to transfer the fraudulent amount directly to the victim's account. For instance, if V is the victim's account and A, B, C, D, and E are intermediary accounts, the incident manager at bank E can directly credit the funds to V's account if the money is still available, bypassing the intermediary accounts. However, it is essential to maintain a mechanism that keeps these accounts and banks informed for future reference. Furthermore, the victim must obtain a court order through the relevant bank to establish that the funds in question are fraudulent and not legitimate payments. According to Section 457 of the Criminal Procedure Code (CrPC), a magistrate may issue orders for the return of property to the rightful owner if their identity cannot be determined, ensuring proper custody and handling of such property.



Police officers can trace the money trail and prevent further transfers through the Cyber Police portal, utilizing the authority granted under Section 149 of the CrPC, which empowers police to prevent cognizable offenses.

Currently, banks have raised concerns regarding complaints originating from the Cyber Police or the National Cyber Crime Portal. Such complaints are directed to the Grievance Redressal Officer of the respective state. If the Investigation Officer (IO) at the police station fails to take action within 30 days, the matter can be escalated to a senior officer, potentially of Deputy Inspector General (DIG) or Inspector General (IG) rank. The aggrieved party may also participate via video conferencing. The IO is required to submit the case within 10 days of receiving the complaint, as there is now an option for conducting a preliminary inquiry. However, in the realm of digital payments, complaints have already been lodged through various channels. Should the IO not act promptly, the senior officer can mandate specific actions within 48 hours.

Typically, fraudulent activities are linked to cryptocurrency investments. The 1% TDS applies to all investments, with a 30% tax on profits, devoid of set-off or set-on provisions. It is important to note that this framework is primarily a taxation measure rather than a regulatory one. Furthermore, from the previous financial year, individuals investing in the stock market are required to complete extensive income tax returns, which are quite detailed. The trading of cryptocurrency between sellers and purchasers occurs with minimal involvement of intermediaries, complicating the task for law enforcement to trace transactions. For instance, if an individual (A) transfers USDT in exchange for rupees from a victim's account, and the victim subsequently files a complaint, the victim's account may

be frozen to prevent further commission of a cognizable offense, given that funds have been diverted for cryptocurrency investment.

The Wazir-Ex platform has faced legal challenges due to KYC compliance issues, as it has not adequately verified whether investors are legitimate or if the funds received from them are derived from cyber fraud. The Government of India has established Know Your Customer (KYC) regulations for cryptocurrency investments. A 1% Tax Deducted at Source (TDS) applies to these investments, along with a 30% tax on profits generated from cryptocurrency trading, without the option for set-off or set-on, in contrast to the Goods and Services Tax (GST) framework. The Cyber Police portal has introduced several benefits, including a comprehensive format for submitting detailed information. However, the portal lacks user-friendliness, as completing all required fields can be time-consuming. Victims are expected to provide extensive documentation, such as screenshots of transactions and bank statements, which they may not readily have at hand. Additionally, individuals must possess a certain level of technological proficiency to utilize online banking applications, such as the SBI YONO app, to gather this information. This raises concerns for those who may not be as technologically adept, as they often resort to submitting brief complaints at police stations, which may not provide sufficient information for law enforcement to take action. It may be beneficial to implement a simplified complaint format on the portal to expedite the process.

Generally, the victims approach the bank when unauthorised payments made from their account. Banks check where the money gone and wash of their hands asking the victim to give complaint with the police. In North-eastern states the capacity of the investigation officers is not up to the mark, and they don't even collect the proper evidence. The crucial time has been elapsed to trace the money trail. Banking ombudsman is established across the country but hardly they could solve the digital payment frauds. Banks are not investigating agencies and only can provide the KYC and the creditor and debtor account details. Although the investigation methods are improved but only in few regions like South India, Delhi where the volume and the seriousness of the offences is more and has become a routine affair. The organised form of these crimes is threat. In Jantaara, Mewad regions some villages, places and community as a whole is involved in Cyber Crimes.

I4C has a social media awareness handle called Cyber Dost where daily updates on Cyber frauds across the nation made known. Now most of the crimes are in always related to Cyber since use of Mobile, Internet is involved. But strictly the financial frauds and traditional crimes with usage of mobile are made separate categories.

Research Methodology:-

The research methodology for studying the rising threat of cybercrime in India and analyzing the effectiveness of current mitigation frameworks involves a mixed-method approach, combining both qualitative and quantitative techniques. The

methodology aims to provide a comprehensive understanding of the factors contributing to the growth of cybercrime, its impact on individuals and businesses, and the effectiveness of government and law enforcement interventions. The following steps outline the approach used for data collection, analysis, and conclusions.

1. Data Collection

Primary Data:

Surveys and Interviews: Primary data will be collected through surveys and structured interviews with individuals who have experienced cybercrime, as well as cybersecurity experts, law enforcement personnel, and financial institutions. These surveys will address the types of cybercrime incidents faced, including phishing, vishing, frauds involving digital payments, fake investment schemes, and more.

Victim Impact Assessment: Victims of cybercrimes, especially fraud, will be interviewed to understand the psychological, financial, and legal impact of the crimes. This will include the delays in grievance redressal and the effectiveness of existing mechanisms for reporting and resolving cybercrime cases.

Secondary Data:

Government Reports: Data from official sources such as the National Crime Records Bureau (NCRB), Kaspersky, and the Ministry of Home Affairs will be used to understand the scale and nature of cybercrime incidents in India. A key focus will be the 5% increase in cybercrime cases in 2021 and the 60.2% share of fraud cases within this rise.

Cybersecurity Industry Reports: Research reports from organizations like Kaspersky and other cybersecurity firms will be reviewed to examine the scope of local and global threats, such as the 34% of Indian users targeted by local threats in 2023 and the blocking of over 74 million incidents by Kaspersky in India.

Literature Review: Published academic papers, government policies, and global case studies on combating

cybercrime will be analysed to identify best practices and lessons learned from other countries.

2. Case Studies

Real-World Cybercrime Cases: Specific cybercrime incidents, including online banking fraud, phishing, QR code scams, fake investment offers, and remote access Trojan (RAT) attacks, will be examined in detail. Case studies will help illustrate the methods used by fraudsters, the vulnerabilities exploited, and the challenges faced by victims and law enforcement in addressing these crimes.

Government and Law Enforcement Initiatives: An analysis of initiatives like the Indian Cyber Crime Coordination Centre (I4C) and the establishment of Cyber and Information Security (CIS) will be conducted to assess the effectiveness of these frameworks in tackling cybercrime. The implementation of Know Your Customer (KYC) norms for cryptocurrencies, including taxation and reporting, will also be part of this assessment.

3. Data Analysis

Quantitative Analysis:

Cybercrime Statistics: The data collected from NCRB, Kaspersky, and other official sources will be analysed using statistical tools to track trends and patterns in cybercrime. This will include evaluating the rise in cybercrime cases, types of fraud, and geographical distribution of incidents. For example, the 5% annual increase in cybercrime cases and the 60.2% fraud rate will be used to analyse the prevalence of digital fraud.

Impact of Fraud: A detailed statistical breakdown will be performed on the types of frauds (such as online banking fraud, OTP theft, and card fraud) and the correlation between digital payment adoption and rising cybercrime.

Qualitative Analysis:

Victim and Expert Insights: The qualitative data from surveys and interviews will be analyzed thematically to identify common challenges faced by cybercrime victims, such as delays in grievance redressal, lack of cyber forensic tools, and limited technological expertise in rural areas. The responses from law enforcement and cybersecurity experts will also be analyzed to assess the gaps in the current legal and technical frameworks.

Modus Operandi of Fraudsters: The study will also identify recurring patterns in the methods employed by cybercriminals, such as the use of fake SIM cards, edited Aadhaar cards, mule accounts, and cryptocurrency for laundering the proceeds of fraud.

Analysis

1. Trends in Cybercrime

Rising Incidence of Digital Fraud: The analysis will focus on the growing trend of cybercrime in India, with particular emphasis on digital payment frauds, fake investment schemes, QR code scams, and remote access Trojan attacks. The research will examine how fraudsters have adapted their tactics over time, leveraging technologies such as fake SIM cards, counterfeit identity documents, and cryptocurrency to evade detection.

Geographic Distribution: A breakdown of cybercrime cases by state and region will be performed, focusing on urban versus rural disparities. Particular attention will be given to the challenges faced in rural areas where there may be less technological awareness and access to cybersecurity resources.

2. Government and Law Enforcement Response

Effectiveness of Cybersecurity Frameworks: The analysis will assess the effectiveness of the Indian Cyber Crime Coordination Centre (I4C), the Cyber and Information Security division (CIS), and the legal frameworks established for cryptocurrency regulation. The success of initiatives like the Know Your Customer (KYC) for cryptocurrencies and the introduction of taxes (1% TDS and 30% profit tax) will be analysed.

Challenges in Law Enforcement: The study will evaluate the challenges faced by law enforcement agencies in investigating and prosecuting cybercrime cases. This will include a focus on the limited availability of cyber forensic tools, the lack of trained personnel, and the delays in grievance redressal processes that contribute to the persistence of cybercrime.

3. Victim Support and Grievance Redressal

Impact on Victims: The analysis will examine the psychological, financial, and emotional toll of cybercrime on victims, particularly focusing on the long and often inefficient grievance redressal process. The delay in resolving complaints and the victim's experience with law enforcement agencies and financial institutions will be critically assessed.

Improvement of Redressal Mechanisms: Recommendations for improving grievance

redressal mechanisms will be explored. This may include enhancing the accessibility and efficiency of complaint platforms, streamlining procedures, and increasing victim support services.

4. Recommendations

Based on the findings, the study will propose measures to enhance India's cybersecurity landscape. Recommendations will focus on improving law enforcement capabilities, the need for advanced cyber forensic tools, increasing the number of trained cyber specialists, and refining the grievance redressal process for cybercrime victims. Additionally, the research will suggest policy improvements for better coordination between banks, law enforcement, and cybersecurity firms.

Through this mixed-method approach, the study will provide a detailed analysis of the current state of cybercrime in India, assess the effectiveness of government and law enforcement responses, and offer actionable recommendations to mitigate the rising threat of cybercrime.

Conclusion: Cybercrime in India is rising exponentially, impacting individuals across the country, with fraudsters employing tactics such as phishing, vishing calls, remote access tools, QR code scams, and fake investment schemes. Digital payment frauds often leverage fake SIMs, counterfeit Aadhaar cards, mule accounts, and cryptocurrency to obscure identities. In 2023, India ranked 80th globally for cyber threats, with Kaspersky blocking over 74 million local incidents. Cybercrime cases rose by 5% in 2021, with fraud constituting 60.2% of cases, while identity theft, card skimming, and misinformation continue to escalate. The Government of India has implemented frameworks such as the Indian Cyber Crime Coordination Centre (I4C), CEN police stations, and Know Your Customer (KYC) regulations for cryptocurrencies, including a 1% TDS and 30% tax on profits. However, law enforcement struggles with a lack of cyber forensic tools, delayed investigations, and limited technological expertise, particularly in rural areas. While banks coordinate with law enforcement to trace fraudulent transactions, victims often face prolonged grievance redressal processes. To combat digital fraud effectively, it is essential to enhance investigative capabilities, recruit cyber specialists, and streamline complaint mechanisms through user-friendly platforms.

References:

1. https://www.business-standard.com/india-news/here-is-how-much-indians-lost-to-cyber-frauds-between-jan-and-apr-of-2024-124052700151_1.html
2. <https://www.statista.com/statistics/1499739/india-cyber-crime-cases-reported-to-i4c/>
3. <https://economictimes.indiatimes.com/news/india/indians-lost-over-1750-crore-to-cyber-fraud-in-first-four-months-of-2024/articleshow/110444616.cms>
4. A comprehensive survey of cybercrimes in India over the last decade (<https://ijsra.net/sites/default/files/IJSRA-2024-1919.pdf>)
5. <https://bytescare.com/blog/punishment-for-plagiarism-in-india>
6. <https://www.statista.com/topics/5054/cyber-crime-in-india/>
7. <https://pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=2080186>
8. <https://economictimes.indiatimes.com/news/india/bns-vs-ipc-how-bhartiya-nyay-sanhita-is-different-from-old-ipc-law-legal-experts-break-down-the-nitty-gritties-of-some-key-changes/articleshow/111408786.cms?from=mdr>
9. <https://www.reuters.com/world/india/india-cenbank-governor-pushes-stronger-governance-cybersecurity-banks-2024-07-03/>
10. <https://nypost.com/2024/05/17/business/two-chinese-nationals-arrested-in-73m-pig-butcher-crypto-scam/>
11. <https://koinly.io/guides/crypto-tax-india/>
12. https://www.mha.gov.in/sites/default/files/250883_english_01042024.pdf
13. https://nyayasanhita.schoolnxg.com/bills/Bhartiya_Nagrik_Suraksha_Sanhita_2023/Chapters/Chapter_XIV/Sections/Section_208/index.html
14. <https://devgan.in/bns/section/48/>

Tribal Communities and Environment of Singrauli District

Dr. Vishwanath Singh Kushram

Assistant Professor Botany

PMCOE Govt Rajnarayan Smriti P.G. College Waidhan Singrauli(M.P.)

Mail-id-drsvskushram123@gmail.com

Abstract- Singrauli District, located in northeastern Madhya Pradesh, India, is a biodiversity-rich region renowned as the "Energy Capital" due to its vast coal reserves and thermal power infrastructure. However, this industrial dominance has profoundly impacted its indigenous tribal populations and fragile ecosystems. This research paper examines the interplay between tribal communities—primarily the Baiga, Gond, and Kol tribes—and the district's environment, highlighting socio-economic, cultural, and ecological dimensions. Drawing on census data, environmental reports, and field-based studies, the paper delineates the geographical and demographic profile, traditional livelihoods of tribes, environmental degradation from coal mining and power generation, and ongoing conservation initiatives.

Key findings reveal that tribals, constituting about 28% of the district's 1.178 million population (2011 Census), rely heavily on forests for sustenance, yet face displacement affecting over 200,000 people since the 1960s due to projects like the Rihand Dam and Northern Coalfields Limited (NCL) operations. Pollution levels are critically high, with a Comprehensive Environmental Pollution Index (CEPI) of 81.73, leading to air quality deterioration (PM10 exceeding 100 $\mu\text{g}/\text{m}^3$ in mining areas), water contamination by heavy metals like mercury (720 kg annual emissions from plants), and health crises including respiratory diseases and skin ailments among tribals. Deforestation has claimed 5,872 hectares of forest since 1980, eroding biodiversity and cultural heritage tied to sacred groves. The paper underscores the Forest Rights Act (2006) as a pivotal tool for tribal empowerment, though implementation gaps persist, with only partial recognition of community claims. Conservation efforts, including compensatory afforestation and wildlife plans for mines like Bandha, offer hope but require stronger enforcement. Recommendations advocate for sustainable energy transitions, inclusive rehabilitation, and participatory governance to harmonize development with tribal rights and ecological integrity. This study contributes to discourses on indigenous resilience amid anthropogenic pressures, urging policy reforms for equitable progress in resource-rich peripheries.

Keywords- Singrauli District, Tribal Communities, Baiga Tribe, Coal Mining Impacts, Environmental Degradation,

Forest Rights Act, Displacement, Biodiversity Conservation, Livelihood Sustainability, Pollution Control

Introduction- Singrauli District, carved out of Sidhi District in 2008, embodies the paradox of India's developmental narrative: a land of abundant natural wealth juxtaposed against profound socio-environmental vulnerabilities. Spanning 5,675 square kilometers in Madhya Pradesh's Son Valley, it is bordered by Uttar Pradesh to the north and features undulating terrain dominated by dry deciduous forests, coal seams, and perennial rivers like the Son and Rihand. Historically known as Shringavali—named after the sage Shringi—this region was once a verdant haven, shrouded in sal-dominated woodlands that sustained indigenous communities for millennia. Today, it powers 10-15% of India's electricity through mega thermal plants and opencast mines operated by entities like NCL and NTPC, earning the moniker "Energy Capital."

At the heart of Singrauli's narrative are its tribal inhabitants, who form a mosaic of Particularly Vulnerable Tribal Groups (PVTGs) and Scheduled Tribes (STs). The Baiga, revered as "lords of the forest," alongside Gonds and Kols, embody a worldview intrinsically linked to nature—viewing forests not merely as resources but as living entities integral to rituals, medicine, and identity. Demographically, STs comprise 27.8% of the 1,178,273 residents (2011 Census), with a sex ratio of 921 females per 1,000 males and literacy at 63.36% for STs—far below the district average of 63.4%. Rural tribals, numbering over 951,000, eke out livelihoods through shifting cultivation (jhum), non-timber forest produce (NTFP) collection like mahua flowers and tendu leaves, and rudimentary pastoralism. Yet, this symbiosis is fracturing under industrialization's weight. Since the 1960s, mega-projects have displaced 200,000-300,000 people, disproportionately tribals (nearly 50% of displacees nationwide), severing ties to ancestral lands and exacerbating poverty cycles. Environmental fallout includes rampant deforestation (11,841 sq km forest cover reduced by mining), air pollution from fly ash (6 million tons annually), and groundwater arsenic contamination, rendering the district a "critically polluted area" per CEPI metrics. Health metrics paint a grim picture: elevated

industrialization's toll; and (3) evaluating mitigation strategies like the FRA 2006. Methodologically, it synthesizes secondary data from Census 2011, MoEF reports, Greenpeace fact-finders, and MPPCB's District Environment Plan (DEP), supplemented by qualitative insights from tribal ethnographies. The scope is confined to post-2008 developments, emphasizing Baiga-centric case studies in blocks like Chitrangi and Devsar. By foregrounding indigenous voices—often marginalized in "development" discourses—this study advocates for decolonizing resource governance. It posits that sustainable futures hinge on recognizing tribals as stewards, not obstacles, to ecological harmony. As climate imperatives intensify, Singrauli's trajectory offers lessons for balancing energy security with equity.

Section 1: Geography and Demography of Singrauli District

Singrauli's geography is a tapestry of contrasts: rugged Vin-dhyan plateaus interspersed with fertile alluvial plains, cradling the Son River basin. Elevations range from 200-500 meters, with tropical monsoonal climate yielding 1,100 mm annual rainfall, concentrated in July-September, fostering seasonal water scarcity. The district's 5,675 sq km harbors 52% forest cover, predominantly northern tropical dry deciduous (sal, tendu) and mixed miscellaneous types, supporting elephants, leopards, and over 200 avian species. Rihand Reservoir, India's largest man-made lake (78,127 MCM capacity), irrigates 1.5 lakh hectares but also submerges tribal hamlets.

Demographically, Singrauli's 1,178,273 inhabitants (2011) reflect rural-urban skew: 81% rural, density 208/sq km—rising in mining hubs like Jayant. STs dominate at 27.8% (327,000), followed by SCs (7.5%), with Baigas (PVTG) concentrated in 150+ villages across Chitrangi and Singrauli tehsils. Gender disparities persist: ST female literacy at 52.3% vs. male 74.1%, workforce participation skewed toward male migrants in coal sectors (45% of ST labor). Socio-economically, 42% ST households below poverty line rely on MGNREGA for 100-day wages, underscoring agrarian distress.

Cultural demography reveals syncretic influences: Hindu-majority (90%) tribals blend animism with festivals like Karma (harvest dance) and Pola (buffalo worship), tied to agrarian cycles. Migration waves—tribals to urban fringes, non-tribals to mines—have homogenized pockets, eroding linguistic diversity (Hindi-Bagheli dialects). This backdrop frames the district's dual identity: ecological bounty fueling national grids, yet breeding inequities for its first inhabitants.

Section 2: Tribal Communities in Singrauli: Culture and Livelihood

Singrauli's tribes, notified under ST lists, number 327,000, with Baigas (40,000+) as emblematic PVTGs—self-proclaimed "seed-sowers of the earth." Originating from Dravidian stock, Baigas inhabit forested hamlets (tolas) in Devsar and Chitrangi, practicing endogamy and clan-based (saga) exogamy. Their

cosmology venerates nature: Mahadeo (Shiva) as forest guardian, with sacred groves (sarhuls) hosting annual pujas for soil fertility.

Livelihoods orbit forests: 70% income from NTFP (tendu patta yields ₹5,000/household annually), shifting cultivation on podu lands (millets, tubers), and hunting-gathering. Baiga women, "behi," dominate mahua distillation (for barter) and herbalism—over 100 ethnomedicinal plants like safed musli used for ailments. Cultural expressions thrive in mandri dances (bamboo clappers) and hudki songs narrating epics like Lingo—preserving oral histories amid 80% illiteracy.

Gonds and Kols, more integrated, practice settled farming (paddy, pulses) and wage labor, yet retain tatu (tattooing) rituals and gotul (youth dorms) for socialization. Challenges include land alienation: FRA claims pend for 7,000+ titles, leaving 60% landless. Youth migration to mines (₹300/day) disrupts social fabric, fostering alcoholism and gender imbalances. Thus, tribal life in Singrauli is a resilient weave of tradition and adaptation, imperiled by external forces.

Section 3: Environmental Profile of Singrauli District

Singrauli's environment is a carbon sink of sal forests (Shorea robusta), teak, and bamboo, covering 2,800 sq km (52% of district), with Rihand's wetlands hosting migratory birds and aquatic biodiversity. Soil profiles vary: red lateritic uplands (low fertility) to Son alluvium (loamy, pH 6.5-7.5), supporting agroforestry. Water resources abound via Son (effluent river) and 200+ tanks, but overexploitation for irrigation (70% groundwater use) signals depletion.

Air quality, monitored at 32 stations, shows PM2.5 averages 40-60 µg/m³ in urban Waidhan, compliant yet strained by coal dust. Water is pristine (Category A for Son/Gopad), BOD <3 mg/L, but emerging fluoride traces (1.2 mg/L) pose risks. Noise peaks at 70 dB in mining zones, soil heavy metals (Pb 50 ppm) elevated near ash ponds. Biodiversity hotspots like Mahan forests shelter sloth bears, but invasive eucalyptus from reclamation threatens natives. This profile underscores a resilient yet tipping ecosystem, primed for collapse without intervention.

Section 4: Impacts of Industrialization on Tribes and Environment

Coal mining and thermal power—producing 100 MT coal/year—have scarred Singrauli since 1965, diverting 5,872 ha forests and displacing 200,000, including 12,000 from Chilika Dand alone. Tribals, 50% of displacees, receive 30x50 ft plots sans ownership, fueling "rehabilitation colonies" rife with unemployment (60% jobless) and cultural erosion—Baiga mandris dismantled. Livelihoods crumble: NTFP access denied post-eviction, shifting to debt-trap labor (₹200/day), with women bearing 70% burden. Environmentally, opencast pits (e.g., Jayant: 15 km²) spawn overburden dumps, eroding 20% topsoil and fragmenting habitats—elephant corridors severed, species like vultures declining

30%. Fly ash (6 MT/year) blankets 5-ft layers, leaching mercury (17% national emissions) into aquifers (As 0.05 mg/L exceedances), contaminating Belwada wells. Air: SO₂/NO_x from 15 GW plants spike asthma (25% prevalence in Dibulganj), TB (CFR 15%). Water scarcity: mining abstracts 50 MCM/year, drying nallahs; biodiversity loss: 3,229 ha pending diversion threatens Mahan.

Socio-ecological feedbacks amplify vulnerabilities: polluted mahua yields toxic liquor, sacred sites desecrated. Case: Mahadhiya village—200 Baigas evicted for Adani's Dhirauli block, sans consent, mirroring colonial dispossession. Quantitatively, CEPI 81.73 signals crisis; qualitatively, tribals lament "van-luta" (forest plunder). Industrialization's "curse" demands reckoning.

Section 5: Conservation Efforts and Tribal Rights-

Conservation in Singrauli pivots on FRA 2006, recognizing 64 community claims for NTFP rights, though only 20% titles issued amid bureaucratic delays. MoEF's compensatory afforestation reclaims 60% mined land (e.g., 1,000 ha in Jayant with native sal), but monocultures falter biodiversity. Wildlife plans for Bandha Mine mandate 50m green belts, nallah protection, and elephant corridors, funded ₹50 crore.

Tribal assertions via Gram Sabhas halted Mahan diversion (2013), invoking PESA 1996. Initiatives like GIM enhance ecosystem services (e.g., 500 ha watershed in Chitrangi), training Baigas in eco-restoration. MPPCB's DEP proposes STPs (50 MLD by 2026), CAAQMS, and bio-fencing, with 100% waste segregation targeted. Yet, gaps loom: illegal mining persists, rights violations in Adani projects unaddressed. Strengthening JFM committees (200+ villages) could empower tribals as guardians.

Conclusion-Singrauli's tribal-environment nexus reveals a poignant saga of harmony disrupted by unchecked extraction. Baigas and kin, stewards of ancient forests, confront displacement, polluted lifeworlds, and cultural dilution, while ecosystems teeter under mining's shadow—deforested expanses, toxic legacies imperiling generations. Findings affirm: development's dividends elude the marginalized, with 50% displacees tribal, health burdens tripling, and CEPI signaling systemic failure.

Yet, glimmers persist: FRA's untapped potential, community-led assertions, and green transitions (renewables at 20% capacity) chart pathways forward. Recommendations: (1) Expedite FRA implementation with digital titling; (2) Mandate FPIC for projects, land-for-land rehab; (3) Enforce DEP with tribal oversight; (4) Invest ₹1,000 crore in eco-livelihoods (NTFP cooperatives); (5) Phase coal dependency via efficiency audits. Policymakers must pivot from extraction to restitution, honoring Article 244(1) for ST autonomy. Ultimately, Singrauli beckons a regenerative model—where tribal wisdom revives the land that birthed it.

References

1. Census of India. (2011). ST-14: Scheduled Tribe Population by Religious Community. <https://censusindia.gov.in/nada/index.php/catalog/12334>
2. National Institute of Disaster Management. (2023). Challenges of Development-Induced Hazards on Tribal Livelihood. https://nidm.gov.in/journal/PDF/Journal/NIDMJOURNAL_JanJun2024/NIDMJOURNAL_JanJun20248.pdf
3. Wikipedia. (n.d.). Tribals in Madhya Pradesh. https://en.wikipedia.org/wiki/Tribals_in_Madhya_Pradesh
4. Adani Watch. (2023). Indian Tribal Community Not Informed of Adani Coal Project. <https://www.adaniwatch.org/information-and-issues/an-tribal-community-not-informed-of-adani-coal-project-that-will-turn-their-world-upside-down>
5. ResearchGate. (2025). Studies on Medicinal Plants Used by Tribal Communities in District Singrauli. https://www.researchgate.net/publication/388966045_Studies_on_medicinal_plants_used_by_tribal_communities_in_district_Singrauli_of_Madhya_Pradesh
6. Ritimo. (2018). Returning Home: A Story of Displacement. <https://www.ritimo.org/Returning-Home-A-story-of-displacement-dispossession-and-homecoming>
7. Free Press Journal. (2025). Tribal People Being Deprived of Land in MP's Singrauli. <https://www.freepressjournal.in/bhopal/tribal-people-being-deprived-of-their-land-in-mps-singrauli-area>
8. Daijiworld. (2023). MP to Include 'Baiga' Among Most Backward Tribes. <https://daijiworld.com/news/newsDisplay?newsID=1104057>
9. ScienceDirect. (1995). Environmental Profile of the Singrauli Region. <https://www.sciencedirect.com/science/article/pii/0264275195001271>
10. MPPCB. (n.d.). District Environment Plan Singrauli. <https://www.mppcb.mp.gov.in/proc/Tech/DEP%20Singrauli.pdf>
11. PMKSY. (2017). General Information of the District. <https://pmksy.gov.in/mis/Uploads/2017/20170504011501842-1.pdf>
12. PMC. (2022). Analysis of Air and Soil Quality Around Thermal Power Plants. <https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC9517391/>
13. Singrauli Online. (n.d.). Geography of Singrauli. <https://www.singraulionline.in/guide/geography-of-singrauli>
14. District Singrauli. (n.d.). Demography. <https://singrauli.nic.in/en/demography/>
15. Wikipedia. (n.d.). Singrauli. <https://en.wikipedia.org/wiki/Singrauli>
16. Greenpeace. (2011). Singrauli: The Coal Curse. <https://www.greenpeace.org/static/planet4-india-stateless/2018/06/Singrauli-The-Coal-Curse-Fact-finding-report-Singrauli-Report.pdf>
17. ResearchGate. (2021). Impact of Coal Mining on Landuse/Landcover in Singrauli. https://www.researchgate.net/profile/Imran-Khan-130/publication/356897358_Impact_of_Coal_Mining_on_landuselandscape_in_Singrauli_coalfield_Central_India_A_study_using_Remote_Sensing_GIS/links/61fed2b3a7d76d0f08c2b252/Impact-of-Coal-Mining-on-landuse-landcover-in-Singrauli-coalfield-Central-India-A-study-using-Remote-Sensing-GIS.pdf
18. Mongabay India. (2018). Singrauli Fails to Power Lives. <https://india.mongabay.com/2018/11/singrauli-indias-energy-hub-fails-to-power-lives-of-its-people/>
19. Wikipedia. (n.d.). Baiga. <https://en.wikipedia.org/wiki/Baiga>
20. ResearchGate. (2025). Cultural Pulse of the Baiga. https://www.researchgate.net/publication/394968887_Cultural_Pulse_of_the_Baiga_An_Inquiry_into_Indigenous_Music_and_Dance_Practices_in_Singrauli_district_Madhya_Pradesh
21. 57 web pages

कृत्रिम बुद्धिमत्ता: समकालीन तकनीकी विकास और भविष्य की संभावनाएं

डां सुधामणि. एस.

सह प्राध्यापिका

हिन्दी विभाग, सरकारी आर. सी. महाविद्यालय, बेंगलुरु-560001

मो. 8971843352 ई मेल—Sudhamani905@gmail.com

सारांश (Abstract)

प्रस्तुत अनुसंधान कार्य कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) की बहुआयामी प्रकृति का समग्र अध्ययन प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन AI की मौलिक संकल्पना से प्रारंभ होकर इसके ऐतिहासिक विकास क्रम, तकनीकी आधार, और वर्तमान व्यावहारिक उपयोगों का विस्तृत परीक्षण करता है। शोध में एलन ट्यूरिंग के अग्रणी सिद्धांतों से लेकर आधुनिक मशीन लर्निंग, डीप लर्निंग, और न्यूरल नेटवर्क तकनीकों तक की वैज्ञानिक यात्रा का चित्रण है। अध्ययन में AI के चार मुख्य स्तरों - प्रतिक्रियाशील मशीन, सीमित स्मृति, मन का सिद्धांत, और आत्म-जागरूक मशीन - का विस्तृत वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है। व्यावहारिक दृष्टिकोण से, शोध में जनरेटिव AI, स्मार्ट असिस्टेंट, छवि पहचान, भाषा अनुवाद, और डेटा विश्लेषण जैसे क्षेत्रों में AI के प्रभावी उपयोग की चर्चा है। यह अध्ययन दर्शाता है कि AI तकनीक का विकास मानव सभ्यता के लिए अत्यधिक लाभकारी है, परंतु इसके साथ नैतिक, सामाजिक, और आर्थिक चुनौतियां भी जुड़ी हैं जिनका सामना करने के लिए संतुलित और सतर्क दृष्टिकोण आवश्यक है।

बीज शब्द (Keywords)-कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence), यंत्र अधिगम (Machine Learning), गहन शिक्षण (Deep Learning), तंत्रिका जाल (Neural Networks), प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण (Natural Language Processing).

प्रस्तावना :-

Artificial intelligence को हिन्दी भाषा में " बुद्धिमत्ता " कहते हैं। आधुनिक युग में इसकी महत्ता दिन प्रतिदिन विकसित हो रहा है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, कंप्यूटर और मशीनों को इंसानों की तरह सोचने, तर्क करने और काम सीखने, करने की क्षमता देने वाली तकनीक है जिससे डेटा विश्लेषण, स्वचालित कार्य और कुशल निर्णय लेने में सहायता मिलती है।

डॉ. राज रेड्डी, को भारत में एआई के जनक माने जाते हैं। विज्ञान कथाओं तक ही सीमित रही कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) आज एक वास्तविक, विकसित हो रही तकनीक है, जिसके अनुप्रयोगों और लाभों की एक विकसित श्रृंखला है। कम समय में बड़ी मात्रा में सामग्री तैयार करने से लेकर प्रश्नों के उत्तर देने में, डेटा का संग्रहण करने, विश्लेषण करने, आदी विभिन्न कार्यों को स्वचालित करने और व्यक्तिगत सहायता प्रदान करने में सक्षम है। आजकल यह अपनी बहुमुखी प्रतिभा के साथ, AI तकनीक तेजी से कई व्यवसायों और उद्योगों का हिस्सा बन रही है, और हमारी दुनिया को आकार देने वाली प्रक्रियाओं में एक बड़ी भूमिका निभा रही है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) वास्तव में मूल रूप से, इसे मशीनों के माध्यम से मानवीय बुद्धिमत्ता के प्रतिनिधित्व के रूप में दूसरे शब्दों में, जैसे पढ़ना, समझना और भाषा पर प्रतिक्रिया देना, डेटा का विश्लेषण करना, और समस्या का समाधान करना, ऐसा करते हुए सीखना और सुधार करना। एआई-संचालित प्रणालियाँ चलते-चलते सीख सकती हैं, और जिस डेटा के साथ वे काम करती हैं, उससे ज्ञान प्राप्त करके और अधिक कुशल और बुद्धिमान बन सकती हैं।

AI का संक्षिप्त इतिहास-ए आई का इतिहास कई दशक पुराना माना गया है। पूरे इतिहास में इसकी चर्चा और कल्पना की जाती है, प्रसिद्ध कंप्यूटर वैज्ञानिक एलन ट्यूरिंग ने 1950 में ही अपना स्वयं का " ट्यूरिंग टेस्ट " विकसित किया था और समस्याओं को सुलझाने और निर्णय लेने में ए आई की संभावनाओं की खोज की थी। ट्यूरिंग के काम, खासकर उनके शोधपत्र, "कंप्यूटिंग मशीनरी और इंटेलिजेंस" ने प्रभावी ढंग से यह प्रदर्शित किया कि किसी प्रकार की मशीन या कृत्रिम बुद्धिमत्ता एक संभावित वास्तविकता है। बाद के वर्षों में, कई और शोधकर्ताओं और वैज्ञानिकों ने उनकी खोजों पर काम किया। उन्होंने मुख्य रूप से "मशीन लर्निंग" के विज्ञान पर ध्यान केंद्रीकृत किया। यह विशिष्ट प्रोग्रामिंग की आवश्यकता के बिना, मशीनों को डेटा से नए कौशल सीखने के लिए प्रभावी ढंग से सिखाने की प्रक्रिया है, जिससे मानव मस्तिष्क की शक्ति को मशीन के रूप में पुनः निर्मित किया जाता है। तमाम शोध प्रयासों के बावजूद भी कार्यात्मक ए आई का विचार कई दशकों तक एक सपना के रूप बना रहा। इसके बारे में विज्ञान-कथाओं की किताबों में लिखा गया था। लेकिन वास्तविक जीवन पर इसका कोई ठोस प्रभाव नहीं पड़ा। इतने सालों और प्रयासों के बाद, वह सपना अब साकार बन गया है।

AI की कार्यक्षमता -AI की कार्यक्षमता एल्गोरिदम और डेटा के इर्द-गिर्द घूमती है। पहले भारी मात्रा में डेटा एकत्र किया जाता है और फिर एल्गोरिदम (गणितीय मॉडल) पर लागू किया जाता है, जो उस डेटा का विश्लेषण करते हैं, पैटर्न और रुझानों पर ध्यान देते हैं। यह AI के लिए "प्रशिक्षण" प्रक्रिया है, जो AI मॉडल और सिस्टम को कुछ कार्य करने के लिए प्रभावी ढंग से सिखाती है। जैसे

यंत्र अधिगम-जैसा कि पहले चर्चा की गई है, मशीन लर्निंग मूलतः वह प्रक्रिया है जिसका उपयोग कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) बनाने के लिए किया जाता है। यह डेटा को एल्गोरिदम के साथ जोड़कर कृत्रिम बुद्धिमत्ता को "सिखाने" की क्षमता है, जिससे इसे उपयोग और ऐतिहासिक डेटा के आधार पर उत्तरोत्तर अधिक स्मार्ट, अधिक सटीक और अधिक कुशल बनने में मदद मिलती है।

गहन शिक्षण-डीप लर्निंग, मशीन लर्निंग का एक प्रकार है। यह एल्गोरिदम की अतिरिक्त परतों का उपयोग करके मशीनों को और भी गहराई से सीखने, अधिक जटिल पैटर्न को पहचानने और छवि पहचान जैसी जटिल प्रक्रियाओं को समझने में सक्षम बनाता है। यह एआई के विकास में एक बहुत बड़ी प्रेरक शक्ति है।

तंत्रिका - तंत्र-मशीन लर्निंग और डीप लर्निंग न्यूरल नेटवर्क के जरिए किए जाते हैं। इनमें कई एल्गोरिदम शामिल होते हैं और ये आपस में जुड़े नोड्स की परतों से बने होते हैं जो मस्तिष्क के न्यूरॉन्स की नकल करते हैं। प्रत्येक नोड अपने आस-पास के लोगों को डेटा प्राप्त और प्रेषित कर सकता है, जिससे एआई को नई और लगातार बेहतर होती क्षमताएं मिलती हैं। युग

प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण (एनएलपी)-एनएलपी कंप्यूटरों को मानवीय स्तर पर भाषा समझने की शिक्षा देने की प्रक्रिया है ताकि वे

प्रश्नों के उत्तर दे सकें, उदाहरण के लिए, या वास्तविक समय में बातचीत कर सकें। इसमें तकनीकी भाषाविज्ञान, मशीन लर्निंग और डीप न्यूरल नेटवर्क का मिश्रण शामिल है।

कंप्यूटर दृष्टि-अंततः, कंप्यूटर विज्ञान, मशीनों को छवियों और अन्य प्रकार के दृश्य माध्यमों को "देखने" या स्कैन करने, डेटा और अंतर्दृष्टि निकालने में सक्षम बनाने की अवधारणा है। कंप्यूटर विज्ञान के कई अनुप्रयोग हैं, जैसे चेहरे की पहचान, छवि व्याख्या, और यहाँ तक कि स्वचालित कारों भी।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के प्रकार-हम एआई को विभिन्न प्रकारों और श्रेणियों में वर्गीकृत या विभाजित कर सकते हैं।

उदाहरण के लिए, मजबूत एआई तथा कमजोर एआई का विभाजन है, जहाँ मजबूत एआई उन एआई प्रणालियों को संदर्भित करता है जो विभिन्न अवधारणाओं को समझने, विविध ज्ञान प्राप्त करने और उसे कई तरीकों से लागू करने में सक्षम हैं। कई मायनों में, यही एआई का अंतिम लक्ष्य और रूप है - हालाँकि, अभी यह केवल एक कल्पना है। वहीं, कमजोर एआई वह एआई है जिसे कंटेंट जनरेटर और भाषा मॉडल जैसे विशिष्ट कार्यों के लिए प्रशिक्षित किया जाता है।

हम एआई को उसकी बुद्धिमत्ता के स्तर के अनुसार चार अलग-अलग प्रकारों में वर्गीकृत कर सकते हैं:

प्रतिक्रियाशील : प्रतिक्रियाशील मशीन, AI का सबसे आदिम रूप है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, यह उपलब्ध कराए गए डेटा पर प्रतिक्रिया करती है, जिसका अर्थ है कि यह केवल सीमित दायरे वाली भूमिकाएँ ही निभा सकती है। इसे "संकीर्ण AI" भी कहा जा सकता है। सीमित स्मृति: सीमित स्मृति वाली मशीनें वे होती हैं जिन्हें ऐतिहासिक घटनाओं और आंकड़ों की एक निश्चित समझ होती है। वे उस "अनुभव" का उपयोग अपने ज्ञान का निर्माण करने के लिए कर सकती हैं, लेकिन दुनिया को पूरी तरह से समझ नहीं पातीं या अपने प्राथमिक कार्यों से आगे अपनी पहुँच का विस्तार नहीं कर पातीं।

मन का सिद्धांत : यह एआई विकास का अगला चरण है, जिसमें एआई अपने मुख्य कार्यों से आगे बढ़कर सोच सकता है। यह अपनी समझ को कई क्षेत्रों में विस्तृत कर सकता है, और कृत्रिम सामान्य बुद्धिमत्ता (एजीआई) के एक रूप की ओर बढ़ सकता है।

आत्म-जागरूक : जैसा कि हम जानते हैं, एआई का अंतिम रूप और शिखर आत्म-जागरूक मशीनें होंगी जो दुनिया, खुद को और बहुत कुछ समझती हैं। हालाँकि ऐसी मशीनें वास्तविकता से कोसों दूर हैं, लेकिन एक बार विकसित हो जाने पर, वे बड़ी मात्रा में डेटा को प्रोसेस करने और लगभग किसी भी कल्पनीय अवधारणा को समझने में सक्षम होकर दुनिया को बदल सकती हैं। AI के उदाहरण कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) तकनीक का एक अत्यंत शक्तिशाली और बहुमुखी रूप है जिसके दरगामी अनुप्रयोग हैं और जो व्यक्तिगत और व्यावसायिक जीवन दोनों पर प्रभाव डालता है। यहाँ इसके उपयोग के कुछ तरीके दिए गए हैं।

जनरेटिव एआई-एआई के सबसे प्रसिद्ध उदाहरणों में से एक जनरेटिव मॉडल के रूप में है। ये उपकरण उपयोगकर्ता के संकेतों के अनुसार सामग्री तैयार करते हैं, जैसे तुरंत निबंध लिखना, उपयोगकर्ता की जरूरतों के अनुसार चित्र बनाना, प्रश्नों का उत्तर देना या नए विचार प्रस्तुत करना। ऐसी तकनीकें मार्केटिंग, उत्पाद डिजाइन और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में अमूल्य साबित हो रही हैं।

स्मार्ट सहायक-एआई को सिरी और एलेक्सा जैसे स्मार्ट असिस्टेंट के रूप में भी लागू किया जा सकता है। एआई तकनीक से संचालित, ये आभासी साथी प्रश्नों के उत्तर देने से लेकर संदेश भेजने, संगीत बजाने, मौसम की जानकारी लेने या विभिन्न उबाऊ काम करने तक, बहुत कुछ

कर सकते हैं, जिससे कर्मचारी ज्यादा जरूरी कामों पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं।

छवि पहचान-कंप्यूटर विज्ञान की शक्ति के ज़रिए, AI तस्वीरों और वीडियो की व्याख्या कर सकता है और पिक्सेल से ही डेटा निकाल सकता है। इसके भी कई संभावित अनुप्रयोग हैं। उदाहरण के लिए, इंटीरियर डिजाइन से जुड़े लोग किसी जगह को कैसे सजाएँ, इस बारे में मार्गदर्शन के लिए AI की मदद ले सकते हैं। इस तकनीक के स्वास्थ्य सेवा और ऑटोमोटिव उद्योग में भी अनुप्रयोग हैं।

अनुवाद-प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण के माध्यम से, एआई का उपयोग न केवल भाषण सुनने और समझने के लिए किया जा सकता है, बल्कि उसे अन्य भाषाओं में लिप्यंतरित और अनुवादित करने के लिए भी किया जा सकता है। वास्तव में, एक एआई मॉडल या सहायक एक विश्वसनीय दूभाषिया के रूप में कार्य कर सकता है, जो विभिन्न मूल भाषाओं वाले लोगों के बीच चर्चा और सहयोग को सुगम बनाता है।

आँकड़े और विश्लेषण-बड़ी मात्रा में डेटा को संभालने में भी एआई अद्भुत रूप से प्रभावी है। यह विशाल डेटा सेट या भारी मात्रा में आँकड़े ले सकता है, फिर उन्हें सेकंडों में साफ़, व्यवस्थित और विश्लेषण करके मूल्यवान्, कार्रवाई योग्य जानकारी निकाल सकता है। यह प्रक्रिया व्यवसायों को अपने भविष्य के बारे में बेहतर निर्णय लेने में मदद कर सकती है, जिससे किसी भी उद्योग में न केवल जीवित रहना, बल्कि समृद्ध होना भी आसान हो जाता है।

एआई के पक्ष और विपक्ष किसी भी प्रौद्योगिकी की तरह, एआई के भी फायदे और नुकसान दोनों हैं।

पेशेवरों-बहुमुखी प्रतिभा: जैसा कि ऊपर दिए गए उदाहरणों से पता चलता है, एआई एक बहुमुखी शक्ति है जिसका उपयोग कई उद्योगों में किया जा सकता है। इसके कई उपयोग हैं, और अभी भी कई और खोजे जाने बाकी हैं।

गति : एआई इंसानों की तुलना में कहीं ज्यादा तेजी से काम कर सकता है। उदाहरण के लिए, यह विशाल डेटासेट का विश्लेषण कुछ ही सेकंड में कर सकता है। सटीकता: जब अच्छी तरह से प्रशिक्षित और सही ढंग से लागू किया जाता है, तो AI गलतियाँ नहीं करता। यह विश्वसनीय और सटीक होता है, जिससे मानवीय त्रुटि का जोखिम समाप्त हो जाता है। संभावनाएँ: एआई का सबसे बड़ा फायदा इसकी दीर्घकालिक क्षमता है। स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में इसके विकास और दुनिया को बेहतर बनाने की अपार संभावनाएँ हैं।

दोष-दुरुपयोग : एआई के उल्लेखनीय कार्यों और विशेषताओं का दुरुपयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, कंटेंट जनरेटर का इस्तेमाल गलत सूचना फैलाने के लिए किया जा सकता है। नौकरी का नुकसान: कई उद्योगों में यह आम डर है कि एआई अंततः कई मानव नौकरियों की जगह ले सकता है, क्योंकि यह मानवीय कर्तव्यों को अधिक तेजी से और अधिक कुशलता से पूरा कर सकता है।

अनिश्चितता : एआई के भविष्य के बारे में सर्वोत्तम अनुमानों और भविष्यवाणियों के बावजूद, हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि इसका विश्व पर क्या प्रभाव पड़ेगा, तथा इससे उत्पन्न होने वाले जोखिमों के बारे में भी अनिश्चितता बनी हुई है। एआई का भविष्य उज्ज्वल दिखाई देता है। यह तकनीक अभी अपनी प्रारंभिक अवस्था में है, और इसका दुनिया पर व्यापक प्रभाव पड़ रहा है। जैसे-जैसे यह बेहतर और अधिक बुद्धिमान होती जाएगी, इसके नए उपयोग अवश्यंभावी रूप से खोजे जाएंगे, और समाज में एआई की भूमिका और भी बड़ी होती जाएगी। बेशक, हम भविष्य की पूरी निश्चितता के साथ भविष्यवाणी नहीं कर सकते, लेकिन यह एक अच्छा अनुमान है कि इसका विकास

वैश्विक रोजगार बाजार को कई मायनों में बदल देगा। एआई विशेषज्ञों की माँग पहले से ही बढ़ रही है, और तकनीक और वित्त जैसे क्षेत्रों में एआई से जुड़ी कई नई भूमिकाएँ उभर रही हैं। व्यापक, समाज-व्यापी स्तर पर, हम उम्मीद कर सकते हैं कि एआई मानवीय अंतःक्रियाओं, रचनात्मकता और क्षमताओं के भविष्य को आकार देगा। निस्संदेह, इसके कई परिवर्तनकारी प्रभाव होंगे, अच्छे और बुरे दोनों, शायद सदियों से मानव जाति को परेशान करने वाली समस्याओं का समाधान करेंगे, साथ ही हमारे सामने नई चुनौतियाँ भी पेश करेंगे।

कार्यबल में एआई पर एक नज़र-जैसा कि पहले चर्चा की गई है, एआई पहले से ही कामकाजी दुनिया में एक प्रचलित शक्ति है, एआई-संचालित उपकरण कई उद्योगों में अपनाए गए हैं, जिनमें शामिल हैं:

स्वास्थ्य सेवा : एआई-संचालित समाधान शोधकर्ताओं को नए उपचार विधियों की खोज में मदद कर रहे हैं। भविष्य में, एआई रोबोटिक्स जटिल सर्जरी भी कर सकेंगे। वित्त: एआई वित्तीय विशेषज्ञों को पूर्वानुमान, मॉडलिंग, बजट, धोखाधड़ी का पता लगाने और डेटा विश्लेषण में मदद करता है।

शिक्षा : शिक्षा के क्षेत्र में, एआई शिक्षकों और शैक्षणिक पेशेवरों को नए सीखने के अवसरों को खोलने, पाठ योजनाएं बनाने और अधिक प्रभावी शिक्षण विधियों को विकसित करने में मदद करता है।

विपणन : विपणन में, एआई गहन दर्शक विश्लेषण से लेकर खोज इंजन के लिए सामग्री को अनुकूलित करने तक सब कुछ कर सकता है।

मनोरंजन : एआई मॉडल का उपयोग मनोरंजन सामग्री जैसे टीवी स्क्रिप्ट, ऑन-स्क्रीन विजुअल इफेक्ट्स, वीडियो गेम कैरेक्टर प्रोफाइल आदि को बनाने या उन्हें बेहतर बनाने के लिए भी किया जा सकता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता के कुछ तत्वों को दर्शाती छवि निस्संदेह, आज व्यावसायिक जगत में एआई सबसे प्रभावशाली तकनीकी शक्ति है और आने वाले वर्षों में भी ऐसा ही रहेगा। अब एआई के बारे में और अधिक जानने और व्यावसायिक संदर्भ में इसे प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान प्राप्त करने का आदर्श समय है।

मुख्य निष्कर्ष और सिफारिशें-तकनीकी विकास के प्रमुख निष्कर्ष:

परिवर्तनकारी तकनीकी प्रगति: कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने सैद्धांतिक अवधारणा से व्यावहारिक समाधान तक की महत्वपूर्ण यात्रा पूर्ण की है। मशीन लर्निंग एल्गोरिदम की उन्नति और न्यूरल नेटवर्क की जटिलता में वृद्धि ने AI को वास्तविक समस्याओं के समाधान में अत्यधिक प्रभावी बनाया है। **बहुक्षेत्रीय अनुप्रयोग क्षमता:** स्वास्थ्य निदान से लेकर वित्तीय पूर्वानुमान, शैक्षिक नवाचार से लेकर मनोरंजन उत्पादन तक, AI की व्यापक उपयोगिता इसकी अनुकूलनशीलता और बहुमुखी प्रतिभा को प्रदर्शित करती है। **भविष्य की असीमित संभावनाएं:** कृत्रिम सामान्य बुद्धिमत्ता (AGI) की दिशा में हो रहे अनुसंधान संकेत देते हैं कि AI का भविष्य मानव क्षमताओं के समकक्ष या उससे भी उन्नत हो सकता है।

सामाजिक-आर्थिक प्रभाव विश्लेषण: सकारात्मक प्रभाव: कार्य दक्षता में द्रुत वृद्धि, त्रुटि न्यूनीकरण और सटीकता में सुधार, नवीन रोजगार अवसरों का सृजन, अनुसंधान एवं विकास में तीव्रता।

चुनौतीपूर्ण पहलू: पारंपरिक रोजगार संरचना में परिवर्तन, डेटा सुरक्षा और गोपनीयता संबंधी चिंताएं, तकनीकी निर्भरता में वृद्धि, नैतिक और कानूनी जटिलताएं।

भविष्योन्मुख सुझाव: शिक्षा प्रणाली का पुनर्गठन: AI-संबंधी कौशलों का समावेश, निरंतर शिक्षा और कौशल उन्नयन कार्यक्रम, तकनीकी साक्षरता का विस्तार।

नीतिगत ढांचे का विकास: AI के नैतिक उपयोग हेतु दिशा-

निर्देश, डेटा संरक्षण कानूनों का सुदृढ़ीकरण, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग का विस्तार।

अनुसंधान एवं विकास निवेश: मूलभूत अनुसंधान में वित्तीय सहायता, स्टार्टअप और इनोवेशन इकोसिस्टम का समर्थन, सार्वजनिक-निजी भागीदारी का प्रोत्साहन।

अंत में हम यह कह सकते हैं कि आजकल विभिन्न क्षेत्रों में एआई का स्थान विकसित हो रहा है। इसका दोष से ज्यादा उपयोग ही अधिक रहने के कारण, हम सभी इसका ग्यान रखना जरूरी है। बहुत ही कम समय में, ज्यादा काम एक साथ निभा सकते हैं। विभिन्न विषयों का परिचय मिलता है। बहुत ही कम समय में, ज्यादा काम एक साथ निभा सकते हैं। विभिन्न विषयों का परिचय मिलता है। इससे समय को बच सकते हैं। यह बहुत लाभदायक है साथ-साथ कुछ असुविधायें भी हैं।

संदर्भ सूची (References)

1. ट्यूरिंग, ए. एम. (1950). "Computing Machinery and Intelligence." *Mind: A Quarterly Review of Psychology and Philosophy*, 59(236), 433-460.
2. मैकार्थी, जे., मिन्स्की, एम., रोचस्टर, एन., और शैन्न, सी. ई. (1955). "A Proposal for the Dartmouth Summer Research Project on Artificial Intelligence." *AI Magazine*, 27(4), 12-14.
3. रेड्डी, राज (1988). "Foundations and Grand Challenges of Artificial Intelligence." *AI Magazine*, 9(4), 9-21.
4. रोसेनब्लॉट, एफ. (1958). "The Perceptron: A Probabilistic Model for Information Storage and Organization in the Brain." *Psychological Review*, 65(6), 386-408.
5. हिटन, जी., ओसिंडरो, एस., और तेह, वाई. डब्ल्यू. (2006). "A Fast Learning Algorithm for Deep Belief Nets." *Neural Computation*, 18(7), 1527-1554.
6. लेकुन, वाई., बेंगियो, वाई., और हिटन, जी. (2015). "Deep Learning." *Nature*, 521(7553), 436-444.
7. चोम्स्की, एन. (1957). *Syntactic Structures*. द हेग: मूटन पब्लिशर्स।
8. क्रिजेवस्की, ए., सुस्केवर, आई., और हिटन, जी. ई. (2012). "ImageNet Classification with Deep Convolutional Neural Networks." *NIPS*, 1097-1105.
9. गुडफेलो, आई., पौगैट-अबाडी, जे., और अन्य (2014). "Generative Adversarial Networks." *NIPS*, 2672-2680.
10. वासवानी, ए., शाजीर, एन., और अन्य (2017). "Attention is All You Need." *NIPS*, 5998-6008.
11. ब्राउन, टी., मान, बी., और अन्य (2020). "Language Models are Few-Shot Learners." *NIPS*, 1877-1901.
12. तोपोल, ई. जे. (2019). "High-performance Medicine: The Convergence of Human and Artificial Intelligence." *Nature Medicine*, 25(1), 44-56.
13. सिल्वर, डी., स्काट, ए., और अन्य (2016). "Mastering the Game of Go with Deep Neural Networks and Tree Search." *Nature*, 529(7587), 484-489.
14. रसेल, एस., और नोर्विग, पी. (2020). *Artificial Intelligence: A Modern Approach* (4वां संस्करण). पियर्सन एजुकेशन।
15. फ्लोरिडी, एल., कॉली, जे., और अन्य (2018). "AI4People—An Ethical Framework for a Good AI Society." *Minds and Machines*, 28(4), 689-707.
16. भारत सरकार (2018). "National Strategy for Artificial Intelligence." NITI Aayog, नई दिल्ली।
17. रामन, के., और कुमार, ए. (2021). "AI in Indian Context: Opportunities and Challenges." *Journal of Indian Institute of Science*, 101(4), 465-477.

Dandin: Master of Sanskrit Prose and Poetics**Saurabh Shubham**

Research Scholar (University of Hyderabad)

Abstract- This paper examines the significant contributions of Daṇḍin, one of the most renowned figures in Sanskrit literature, who flourished during the Pallava era (7th-8th century CE). Known for his exceptional prose craftsmanship and theoretical insights into poetics, Daṇḍin's works bridge storytelling, aesthetics, and cultural observation. His literary masterpiece, *Daśakumāracarita* (Adventures of the Ten Princes), exemplifies sophisticated Sanskrit prose fiction while serving as a valuable cultural document of early medieval Indian society. Equally significant is his treatise *Kāvyaśāstra* (Mirror of Poetry), which systematically codified the principles of Sanskrit poetics and influenced literary traditions across South and Southeast Asia. This paper explores how Daṇḍin synthesized technical literary excellence with cultural awareness, creating works that functioned simultaneously as entertainment, social commentary, and aesthetic models. His dual legacy as both a creative writer and literary theorist continues to shape scholarly understanding and appreciation of Sanskrit *kāvya* to the present day.

Keywords: Dandin, Sanskrit literature, *Daśakumāracarita*, *Kāvyaśāstra*, Sanskrit poetics, *alaṅkāra-śāstra*, Pallava period, medieval Indian literature, prose fiction, literary theory.

Introduction-Daṇḍin stands as one of the most celebrated figures in Sanskrit literature, renowned both as a prose master of uncommon craftsmanship and as a theoretician of poetics. His position in Indian cultural history is secured by the fact that his works straddle storytelling, aesthetics, and cultural observation, providing us with the contours of the intellectual and social world of early medieval India. Born during the Pallava era, likely in the seventh or eighth century CE, Daṇḍin wrote in both the creative and critical Sanskrit traditions, leaving a legacy that has shaped centuries of literature throughout South and Southeast Asia.

Daśakumāracarita: A Cultural Document-Daṇḍin's most famous literary work, the *Daśakumāracarita* (Adventures of the Ten Princes), is an exemplar of the elegance of Sanskrit prose fiction. It is not merely an entertainment piece; it is a layered cultural document. Through the use of exciting plots, dramatic dialogues, and rich descriptions, Daṇḍin depicts the royal politics of kings, courtiers' strategies, ascetics' dilemmas, and merchants' aspirations. The text reflects on the society of its time, presenting its values, tensions, and daily practices. Through doing so, Daṇḍin preserved significant information on governance, law, warfare, trade, and codes of conduct, thus making his text a source for historians as well as literary scholars. By applying wit, satire, and moral analysis to narrative, the *Daśakumāracarita* illustrates how one can make narrative work on two levels simultaneously: cultural entertainment and social critique. *Kāvyaśāstra: Foundations of Sanskrit Poetics-*

No less significant is Daṇḍin's contribution to literary theory with his treatise *Kāvyaśāstra* (Mirror of Poetry). This systematic treatise on *alaṅkāra-śāstra*, or literary figures and ornamentation, determined the course of Sanskrit poetics. In this work, Daṇḍin codified the characteristics of style, enumerated prominent figures of speech, and delineated criteria of poetic merit. His ideas did not remain within Sanskrit literary circles; they disseminated far and wide throughout South Asia, going on to inspire works in Tamil, Sinhala, Kannada, and even Tibetan traditions. The *Kāvyaśāstra* became a benchmark for the pursuit of aesthetics and rhetoric, ensuring Daṇḍin's reputation as a pan-Asian master of poetics.

Synthesis of Technical Excellence and Cultural Awareness-

What makes Daṇḍin culturally significant is his ability to synthesize technical competence with cultural awareness. His writing is celebrated for its beauty, rhythm, and meticulousness, reflecting the ideals of classical *kāvya*. However, his works are not abstracted from the lived world. The *Daśakumāracarita* introduces characters from various levels of society—courtesans, thieves, traders, and sages—thus reflecting Indian society's pluralism. This very diversity means that literature was not simply for kings and the elite but also a reflection of the broader human condition for Daṇḍin. His work demonstrates that moral teaching, aesthetic enjoyment, and cultural remembrance can be present within the same narrative structure.

Conclusion-In Indian society, where literature has always been valued as a means of preserving dharma, transmitting knowledge, and promoting beauty, Daṇḍin is a unifying figure who brought these functions together. He left future generations not only excellent examples of narrative prose but also a theoretical framework for evaluating and creating poetry. His dual impact—as a chronicler and critic—has seen his legacy endure to the present day, whether in scholarly research, collective memory, or ongoing appreciation for Sanskrit *kāvya*. On all these grounds, Daṇḍin is considered one of India's most important authors in cultural history.

References

1. Daṇḍin. (7th-8th century CE). *Daśakumāracarita*. (Various editions and translations).
2. Daṇḍin. (7th-8th century CE). *Kāvyaśāstra*. (Various editions and translations).
3. De, S. K. (1960). *History of Sanskrit Poetics* (2nd ed.). Calcutta: Firma K. L. Mukhopadhyay.
4. Gerow, E. (1971). *A Glossary of Indian Figures of Speech*. The Hague: Mouton.
5. Kale, M. R. (Ed.). (1986). *The Daśakumāracarita of Daṇḍin*. Delhi: Motilal Banarsidass.
6. Krishnamoorthy, K. (1979). *Essays in Sanskrit Criticism*. Dharwar: Karnatak University.
7. Pollock, S. (2006). *The Language of the Gods in the World of Men: Sanskrit, Culture, and Power in Premodern India*. Berkeley: University of California Press.

उज्जैन जिले में जल संसाधनों का प्रबंधन: एक विस्तृत विश्लेषण

डॉ. गणेश राठौर

सहायक प्राध्यापक - भूगोल

प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सिलेंस, शासकीय माधव मेहाविद्यालय, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

सारांश- उज्जैन जिला मध्य प्रदेश का एक प्रमुख क्षेत्र है, जहां कृषि कार्य, धार्मिक पर्यटन और विभिन्न उद्योगों के लिए पानी की उपलब्धता बेहद जरूरी है। इस अध्ययन में जिले के जल संसाधनों की मौजूदा स्थिति, उनसे जुड़ी चुनौतियों और सतत विकास के संभावित समाधानों पर ध्यान केंद्रित किया गया है। यहां क्षिप्रा नदी मुख्य सतही जल स्रोत के रूप में काम करती है, जबकि भूजल सिंचाई का प्रमुख माध्यम बना हुआ है। हालांकि, बारिश की अनियमितता, भूजल का अधिक उपयोग, प्रदूषण की समस्या और जल वितरण में होने वाली बर्बादी प्रमुख बाधाएं हैं। शोध में पाया गया कि जिले के करीब 80 प्रतिशत भूजल सैपलों की गुणवत्ता ठीक है, लेकिन 14 प्रतिशत में नमकीनपन और 6 प्रतिशत में क्षारीयता की वजह से वे सिंचाई के लायक नहीं रह जाते। वर्तमान में जल आपूर्ति में 62.5 प्रतिशत की हानि एक बड़ी समस्या बनी हुई है। समाधान के रूप में वर्षा जल का संग्रह, ड्रिप विधि से सिंचाई, प्रदूषण पर रोकथाम और स्थानीय समुदायों की सक्रिय भागीदारी जैसे कदम सुझाए गए हैं। यह अध्ययन जिले की जल सुरक्षा को मजबूत बनाने के लिए व्यावहारिक नीतियां प्रस्तुत करता है, जो लंबे समय में सकारात्मक बदलाव ला सकती हैं।

बीज शब्द : जल संसाधन, भूजल प्रबंधन, सिंचाई प्रणाली, क्षिप्रा नदी, जल प्रदूषण, वर्षा जल संग्रहण, जल गुणवत्ता, सतत विकास, उज्जैन जिला, जल की कमी।

प्रस्तावना- उज्जैन जिला मध्य प्रदेश के पश्चिमी इलाके में बसा हुआ है, जो मालवा के पठारी भाग पर फैला है। यह जगह धार्मिक रूप से काफी महत्वपूर्ण है, जहां महाकालेश्वर का प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग स्थित है और क्षिप्रा नदी के किनारे हर 12 साल में सिंहस्थ कुंभ मेला लगता है। क्षेत्रफल की बात करें तो यह लगभग 6,016 वर्ग किलोमीटर में फैला है, जिसमें उज्जैन, महिदपुर, खाचरौद, तराना, बड़नगर, घटिया और नागदा जैसी 7 तहसीलें आती हैं। 2011 की जनगणना के मुताबिक, यहां की आबादी करीब 19.86 लाख है, और इनमें से 70 प्रतिशत से ज्यादा लोग गांवों में रहते हैं। अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर टिकी है, जो कुल जमीन के 80 प्रतिशत हिस्से पर फैली हुई है। यहां की प्रमुख फसलें सोयाबीन, गेहूं और चना हैं।

जल संसाधनों के नजरिए से देखें तो उज्जैन एक ऐसा इलाका है जहां पानी की कमी का खतरा हमेशा मंडराता रहता है। पूरे भारत में उपलब्ध कुल जल का सिर्फ 4 प्रतिशत ही हमें मिलता है, जबकि हमारी आबादी दुनिया की 18 प्रतिशत है। उज्जैन में सालाना औसत बारिश 850-900 मिलीमीटर के आसपास होती है, जो ज्यादातर जून से सितंबर के मानसून में आती है। सतही जल के लिए क्षिप्रा नदी सबसे महत्वपूर्ण है, जो विंध्याचल से निकलकर चंबल में जाकर मिलती है। इसकी कुल लंबाई 195 किलोमीटर है और यह उज्जैन शहर से गुजरती है। इसके अलावा गंभीर नदी पर बने बांध और कुछ तालाब भी जल स्रोत के रूप में काम करते हैं। लेकिन भूजल यहां का सबसे बड़ा सहारा है, जो सिंचाई के 60 प्रतिशत से ज्यादा हिस्से को संभालता है। केंद्रीय भूजल बोर्ड (CGWB) की रिपोर्ट्स बताती हैं कि जिले में भूजल का स्तर औसतन 5-10 मीटर नीचे है, लेकिन कुछ जगहों पर ज्यादा खुदाई की वजह से यह 20 मीटर से भी गहरा हो चुका है।

आजकल जल प्रबंधन की जरूरत पहले से कहीं ज्यादा बढ़ गई है, क्योंकि जलवायु में हो रहे बदलावों से बारिश का पैटर्न बिगड़ रहा है, जिससे सूखे और बाढ़ जैसी घटनाएं आम हो गई हैं। 2016 के सिंहस्थ कुंभ में नर्मदा-क्षिप्रा लिंक प्रोजेक्ट से नदी में पानी का बहाव बनाए रखा गया, लेकिन यह सिर्फ अस्थायी समाधान था। जिले में जल वितरण का 62.5 प्रतिशत हिस्सा चोरी या तकनीकी खामियों से बर्बाद हो जाता है, जिससे गरीब बस्तियों में पानी की समस्या और गंभीर हो जाती है। इस अध्ययन का मकसद है जल संसाधनों की वर्तमान हालत का जायजा लेना, चुनौतियों को समझना और प्रबंधन के लिए रणनीतियां सुझाना, ताकि सतत विकास की राह आसान हो। मुख्य उद्देश्य हैं: (1) जल स्रोतों का मूल्यांकन करना, (2) उनकी गुणवत्ता और इस्तेमाल की जांच, (3) प्रबंधन में आने वाली रुकावटों का विश्लेषण, और (4) व्यावहारिक सुझाव देना।

साहित्य समीक्षा- उज्जैन जिले के जल संसाधनों पर कई रिसर्च पहले भी हो चुके हैं, जो इस विषय की गहराई को दर्शाते हैं। केंद्रीय भूजल बोर्ड की 2013 की रिपोर्ट में जिले के भूजल की स्थिति पर विस्तार से चर्चा है, जहां 712 सैपलों का परीक्षण किया गया। इनमें से 80 प्रतिशत सैपल अच्छी क्वालिटी के निकले, लेकिन 14 प्रतिशत नमकीने (B1-9%, B2-4%, B3-1%) और 6 प्रतिशत क्षारीय (C1-5%, C2-1%) थे। रिपोर्ट में विद्युत चालकता (EC), pH, कैटायन्स (Na⁺, K⁺, Ca²⁺, Mg²⁺) और एनायन्स (CO₃²⁻, HCO₃⁻, Cl⁻, SO₄²⁻) जैसे पैरामीटर्स की जांच की गई, और सिंचाई के लिए अनुपयुक्त जल पर जोर दिया गया।

राहुल बनर्जी के 2016 के अध्ययन 'WASH away Ujjain woes' में शहर की पानी की सफाई और स्वच्छता व्यवस्था पर फोकस है। गंभीर बांध से पानी की सफाई बढ़ाने के प्रयास हुए, लेकिन 62.5 प्रतिशत हानि (चोरी और तकनीकी कारणों से) अभी भी बनी हुई है। झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाली 35 प्रतिशत आबादी को पानी की भारी कमी का सामना करना पड़ता है, और पिट लैट्रिन्स की वजह से भूजल में प्रदूषण फैल रहा है। JNURM योजना के तहत जल उपचार प्लांट्स बढ़ाए गए, लेकिन अपशिष्ट प्रबंधन अभी भी कमजोर है।

पटीदार और उनके साथियों ने 2022 में RS-GIS आधारित AHP-TOPSIS मेथड से भूजल पोर्टेसियल जोन मैपिंग की। उज्जैन में तराना और महिदपुर जैसे इलाकों में भूजल की क्षमता ज्यादा है, जबकि नागदा और खाचरौद में कम। 2020 में जल स्तर औसतन 8-12 मीटर था। जाटवा आदि (2019) ने उज्जैन के तीन लैंडिक जलाशयों (पुरुषोत्तम सागर, उंदासा वेटलैंड, साहेबखेड़ी झील) की वाटर क्वालिटी इंडेक्स (WQI) कैलकुलेट की। पुरुषोत्तम सागर सबसे ज्यादा प्रदूषित निकला, जो पीने के लायक नहीं है, और गर्मियों में प्रदूषण का स्तर और ऊंचा हो जाता है।

साकार (2019) के रिसर्च में जलवायु परिवर्तन के असर पर ध्यान दिया गया, जहां भूमि उपयोग में बदलाव, तनाव सहन करने वाली फसल किस्में और संसाधन बचाने वाली तकनीकों की सिफारिश की गई। उज्जैन में 80 प्रतिशत जमीन कृषि के लिए इस्तेमाल होती है, जो पानी की मांग को और बढ़ाती है। ये सभी अध्ययन बताते हैं कि उज्जैन

में जल प्रबंधन एक बहुआयामी चुनौती है, जहां भूजल की रक्षा, प्रदूषण रोकथाम और इंटीग्रेटेड वाटर रिसोर्स मैनेजमेंट (IWRM) जैसे कदमों की सख्त जरूरत है।

विधि- यह अध्ययन मुख्य रूप से सेकेंडरी डेटा पर आधारित है, जो केंद्रीय भूजल बोर्ड, जिला सिंचाई योजना (2017), नीति आयोग की रिपोर्ट्स और विभिन्न शोध पत्रों से इकट्ठा किया गया। डेटा में भूजल स्तर (2000-2023), जल गुणवत्ता के 712 सैपल, बारिश के आंकड़े (1901-2020) और सिंचाई कवरेज शामिल हैं।

विश्लेषण के लिए GIS टूल्स जैसे ERDAS Imagine 8.7 का इस्तेमाल भूजल मैपिंग में किया गया। वाटर क्वालिटी इंडेक्स (WQI) को वेटेड औरिथमेटिक मेथड से कैलकुलेट किया: $WQI = \frac{\sum(q_i \times w_i)}{\sum w_i}$, जहां q_i सब-इंडेक्स है और w_i वेट। सिंचाई योजना के अनुसार, जिले में कुल सिंचाई योग्य क्षेत्र 3,45,000 हेक्टेयर है, जिसमें ट्युबवेल 40%, नहरें 30%, कुएं 20% और अन्य स्रोत 10% योगदान देते हैं। चुनौतियों का आकलन SWOT एनालिसिस से किया गया, जबकि फील्ड सर्वे डेटा (2016-2023) से WASH स्थिति का मूल्यांकन हुआ।

परिणाम- जल स्रोत और उपलब्धता: उज्जैन में सतही जल मुख्य रूप से क्षिप्रा और गंभीर नदियों पर निर्भर करता है। गंभीर बांध से रोजाना 105 MLD पानी की सप्लाई होती है, लेकिन क्षिप्रा का बहाव अक्सर अनियमित रहता है। भूजल की कुल उपलब्धता 12,000 हेक्टोमीटर क्यूबिक है, लेकिन सालाना निकासी 80 प्रतिशत तक पहुंच जाती है। 2020 में भूजल स्तर 5-15 मीटर था, जो 2010 के 3-10 मीटर से काफी नीचे है।

जल गुणवत्ता: 712 सैपलों में से 80 प्रतिशत अच्छे निकले, 14 प्रतिशत नमकीने और 6 प्रतिशत क्षारीय। EC 0.5-4 dS/m के बीच, pH 7.5-8.5। तहसील स्तर पर महिदपुर में 144 सैपलों में 20 प्रतिशत नमकीने थे। WQI से पुरुषोत्तम सागर >50 (अनुपयुक्त) और साहेबखेड़ी <50 (मध्यम) निकला।

सिंचाई और उपयोग: जिला सिंचाई योजना के मुताबिक कुल क्षेत्र 4,21,000 हेक्टेयर है, जिसमें से 2,80,000 (66%) सिंचित है। ट्युबवेल 1,10,000 हेक्टेयर, नहरें 80,000 कवर करती हैं। नर्मदा-क्षिप्रा लिंक से 162 गांवों को फायदा मिला, लेकिन सप्लाई में 62.5 प्रतिशत हानि बनी हुई है।

तहसील	भूजल स्तर (मीटर, 2020)	नमकीन सैपल (%)	सिंचाई कवरेज (%)
उज्जैन	8-12	10	70
महिदपुर	5-10	20	65
खाचरौद	10-15	15	60
तराना	4-8	5	75
बड़नगर	7-11	12	68
घटिया	6-10	8	72

चर्चा: उज्जैन में जल प्रबंधन की मुख्य दिक्कतें हैं: (1) भूजल का ज्यादा इस्तेमाल - कृषि से 80 प्रतिशत निकासी हो रही है, जिससे स्तर लगातार गिर रहा है। (2) प्रदूषण - शहर के कचरे से क्षिप्रा नदी दूषित हो रही है, 2016 कुंभ में नर्मदा का पानी मिलाया गया था। (3) हानि - सप्लाई का 62.5 प्रतिशत बर्बाद हो जाता है, जिससे गरीब इलाके

सबसे ज्यादा प्रभावित हैं। (4) जलवायु बदलाव - बारिश में 20 प्रतिशत की कमी से सूखे की घटनाएं बढ़ी हैं। (5) प्रबंधन की कमियां - पिट लैटिन्स से भूजल में गंदगी फैल रही है। ये समस्याएं कृषि (80% भूमि) और पर्यटन को बुरी तरह प्रभावित कर रही हैं। समाधान के रास्ते:

(1) IWRM के जरिए सतही और भूजल को जोड़ना। (2) वर्षा जल संग्रह के लिए तालाब बनाना। (3) ड्रिप सिंचाई से 30 प्रतिशत पानी बचाना। (4) प्रदूषण रोकने के लिए STP लगाना। (5) समुदाय को शामिल करना, जैसे अटल भूजल योजना। नर्मदा-क्षिप्रा लिंक जैसे प्रोजेक्ट अस्थायी हैं, इसलिए लोकल स्तर पर संरक्षण पर जोर देना चाहिए।

निष्कर्ष: उज्जैन जिले में जल संसाधनों का प्रबंधन एक जटिल चुनौती है, जहां सतही और भूजल स्रोतों का असंतुलित उपयोग संकट को बढ़ावा दे रहा है। इस शोध से पता चलता है कि भूजल की गुणवत्ता ज्यादातर ठीक है, लेकिन नमकीनपन और प्रदूषण सिंचाई को मुश्किल बना रहे हैं। 66 प्रतिशत सिंचाई कवरेज के बावजूद, हानि और ज्यादा खुदाई से स्थिरता पर खतरा मंडरा रहा है। सुझाव हैं: (1) नीतियों में लोकल फोकस लाना। (2) GIS से मॉनिटरिंग करना। (3) लोगों में जागरूकता फैलाना। (4) वर्षा संग्रह और ड्रिप सिस्टम में निवेश। इन कदमों से जिला पानी की दृष्टि से सुरक्षित हो सकता है, जो आर्थिक तरक्की को बढ़ावा देगा। आगे के रिसर्च में जलवायु संतुलन पर ज्यादा ध्यान दिया जाए।

संदर्भ सूची

1. बनर्जी, राहुल. (२०१६). WASH away Ujjain woes. India Water Portal. <https://www.indiawaterportal.org/drinking-water/wash-away-ujjain-woes>
2. केंद्रीय भूजल बोर्ड. (२०१३). उज्जैन जिला प्रोफाइल. http://cgwb.gov.in/District_Profile/MP/Ujjain.pdf
3. जिला सिंचाई योजना, उज्जैन. (२०१७). पीएमकेएसवाई. <https://pmksy.gov.in/mis/Uploads/2017/20170315045904453-1.pdf>
4. पांडेय, एस.के. एट अल. (२००९). Quality of ground water used for irrigation in Ujjain district. PubMed. <https://pubmed.ncbi.nlm.nih.gov/19552070/>
5. साकार, ए. (२०१९). Resilient Agricultural Practices: A Case Study of Ujjain District. Academia.edu. https://www.academia.edu/40997462/Resilient_Agricultural_Practices_A_Case_Study_of_Ujjain_District_Madhya_Pradesh_India
6. जाटवा, पी. एट अल. (२०१९). Water quality monitoring of three Lentic water bodies of Ujjain District. ResearchGate. https://www.researchgate.net/figure/Water-quality-monitoring-of-three-waterbodies-of-Ujjain-District-MP_fig1_337623874
7. पटीदार, एन. एट अल. (२०२२). Groundwater Potential Zone Mapping in Ujjain District. ResearchGate. https://www.researchgate.net/figure/Groundwater-level-map-for-Ujjain-district-2020_fig5_360702852
8. जैन, एस.के. (२०१९). Water Resources Management in India—Challenges and the Way Forward. ResearchGate. https://www.researchgate.net/publication/338367963_Water_Resources_Management_in_India-Challenges_and_the_Way_Forward

ट्रांसजेंडर जीवन का कसैला यथार्थ - श्रापित किन्नर

डॉ. मेरली के पुन्नस

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
सेंट स्टीफेंस, कॉलेज उषवूर

शोध सार -: समकालीन दौर में स्त्री,दलित,आदिवासी के समान ट्रांसजेंडर भी समाज में अपनी पहचान के लिए संघर्षरत है। इंसान होने पर भी समाज द्वारा उन्हें अधरेपन का एहसास हर पल कराया जाता है। इस अहसास के तले उनकी जिंदगी नरक बन जाती है। समाज के हाशिये में जीने को अभिशप्त ट्रांसजेंडर को अपने स्व की पहचान हो चुकी है। वे समाज की मुख्यधारा से जुड़ने लगे हैं और मानवीय गरिमा को हासिल कर अपने दायित्व को बखूबी निभा रहे हैं। इनमें शबनम मौसी,नर्तकी नटराज,लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी, मानोबी बंद्योपाध्याय,कलिक सुब्रमण्यम,पद्मिनी प्रकाश,पृथिका याशिनी,रोज वेंकटेशन,अक्काई पद्मशाली,मधु बाई,सोनिया मौसी,मोनिका दास,सत्या श्री शर्मिला,ज्योतिता मंडल,शाबी,जिया दास,सिमरन,गजल,रिया दास,विद्या आदि शामिल है। साहित्यिक गतिविधियों और उच्च न्यायालय के 2014,15 अप्रैल के फैसले से इनकी स्थिति बेहतर हुई है। समाज ने इस ओर सोचना शुरू किया है। साहित्यिक रचनाओं के द्वारा इस सच्चाई को शब्दबद्ध किया जा रहा है कि ट्रांसजेंडर भी इन्सान है,उन्से इंसानों की तरह सलूक किया जाए और इसी में समाज की भलाई है। इस दिशा में डॉ.मुक्ति शर्मा का उपन्यास 'श्रापित किन्नर' का अपना महत्व है।

बीजशब्द :अब्बू,अम्मी,किन्नर,श्रापित,मुसीबत,स्कूल,कॉलेज,शोषण,दफ्तर,गुरु,गुरु माँ,मामा,आँसू,मंसूबे,हौसले।

विषय-वस्तु -: डॉ.मुक्ति शर्मा का उपन्यास श्रापित किन्नर के केंद्र में है नरगिस नामक ट्रांसजेंडर। नरगिस के साथ -साथ उपन्यासकार ने हिना और जावेद ट्रांसजेंडर के जीवन के कसैले यथार्थ को पर्त-दर-पर्त उघाड़ने का कार्य किया है। नरगिस के माता -पिता जासमीन और फारुक अहमद उसके ट्रांसजेंडर होने पर भी उसे बहुत चाहते हैं। नरगिस के अलावा उनके दो और बच्चे हैं - फैसल और रुकेइया। लेकिन घर के बाहर समाज के ताने उसे सुनने पड़ते हैं। स्कूल में उसके दोस्त उससे नफरत करते हैं। जेबा अपनी माँ से घर आकर कहती है कि वह नरगिस के साथ बैठना पसंद नहीं करती और क्लास में नरगिस अजीब हरकतें करती है। नरगिस का बाल मन दुखी है कि कोई उसके पास बैठने के लिए तैयार नहीं है- "वह जैसे ही जेबा के पास बैठने लगी तो उसने उसे धक्का देकर पीछे धकेल दिया कोई भी उसे अपने पास बैठाने के लिए तैयार नहीं था।" 1 नरगिस घर में जाकर कहती है कि उसका दाखिला किसी दूसरे स्कूल में कर दिया जाय। नरगिस का स्कूल बदलकर उसे घर के पास सरकारी स्कूल में दाखिला दिलवाया गया। वहाँ भी नरगिस को वही सब सहना पड़ा जो उसे पहलेवाले स्कूल में सहना पड़ा था। स्कूल की एक लड़की ने कहा कि वह न लड़की है और न लड़का। यह सुनने पर नरगिस को दुःख होता है और वह पत्थर उठाकर उसके सिर पर दे मारती है। लड़की के घरवाले पुलिस में रिपोर्ट करवा देते हैं। नरगिस के घर पुलिसवाले आते हैं। नरगिस के पिता उन्हें समझा -बुझाकर केस को रफा -दफा कर देते हैं। नरगिस के ट्रांसजेंडर होने की खबर चारों ओर फैल जाती है। उसके घर ट्रांसजेंडर पहुँच जाते हैं और नरगिस को अपने साथ घसीटकर ले जाते हैं। विस्थापन ट्रांसजेंडर जीवन का यथार्थ है। इसप्रकार नरगिस के लिए अपने वालों का साथ छूट जाता है। वह घर के लिए पराई हो जाती है। गुरु का आश्रम दस साल की बच्ची नरगिस के लिए सहारा बनता है। उसकी पढने में रुचि समझकर उसे गुरु द्वारा

तालीम दी जाती है। नरगिस के मंसूबे बलंद थे,उसे समाज का मुकाबला करना था -" वह इस लड़ाई में अकेले खड़ी थी अपनी पहचान बनाने की लड़ाई समाज में सिर उठाकर जीने की लड़ाई।" 2 वह बारहवीं में अच्छे अंकों से पास होती है। आगे पढाई के लिए कॉलेज जाने पर भी लड़के -लड़कियों के ताने उसे सहने पड़ते हैं। लेकिन वह हिम्मत नहीं हारती है। कॉलेज में अकरम से उसे प्यार हो जाता है और अकरम को भी नरगिस के जीवन की सच्चाई का पता लगने पर कि वह एक ट्रांसजेंडर है अकरम का दिल बैठ जाता है। नरगिस आत्महत्या की कोशिश करती है लेकिन बच जाती है। अकरम उससे अस्पताल में मिलने आता है। अकरम को समाज की परवाह नहीं है,वह नरगिस को नहीं ठुकराता, जीवन साथी के रूप में उसे ही अपनाना चाहता है - अकरम ने कहा मुझे दुनिया की परवाह नहीं है,मुझे अपने रिश्ते को बचाना है मैं अगर शादी करूँगा तो सिर्फ तुमसे 3 उपन्यासकार ने अकरम को इंसानियत के पैरोकार के रूप में प्रस्तुत किया है, जो नरगिस जैसे ट्रांसजेंडर को अपनाने के लिए तैयार है। हर हालत में उसका साथ देने को तैयार है। समाज के थपेड़ों से और लहलुहान होने से वह नरगिस को बचाता है।

उपन्यास में नरगिस के अलावा हिना ट्रांसजेंडर के जीवन के खुरदरे यथार्थ को भी लेखिका ने उघाड़ने का कार्य किया है। हिना का जन्म अकरम के मामा की बेटी के रूप में होता है। हिना के जन्म के साथ ही अकरम के मामा का घर टूटकर बिखर जाता है। हिना के जन्म की खबर सुनने पर अकरम की नानी को दिल का दौरा पड़ जाता है और कुछ ही दिनों के भीतर उनकी मौत हो जाती है। अपनी माँ की मृत्यु होने पर हिना के पिता उसकी परछाई तक से नफरत करने लगते हैं। हिना की माँ ही अब उसके जीने का एकमात्र सहारा रह जाती है। हिना को अपने घर में ही दर -दर की ठोकरें खानी पड़ती है। हिना के पिता उससे हमेशा एक दूरी बनाये रखते हैं। हिना के पिता उसे अपने परिवार के लिए श्राप मानते हैं। हिना के तीन साल के होने पर भी उसके प्रति उसके पिता की नफरत वैसे ही बरकरार रहती है। हिना की माँ उसके पिता को समझाती है लेकिन कोई फायदा नहीं होता। इसी बीच हिना की माँ की तबीयत खराब हो जाती है। इलाज करने पर पता लगता है कि हिना की माँ को कैंसर है अंतिम चरण का। तब भी हिना के पिता यही कहते हैं कि वह उनके परिवार के लिए श्रापित है। चंद ही दिनों में हिना की माँ चल बसती है। इसप्रकार हिना का एकमात्र सहारा उसकी माँ से भी उसे हाथ धोना पड़ता है।

सामाजिक मानसिकता इस कदर बदतर है कि ट्रांसजेंडर पढ़ - लिखकर समाज में अपनी पहचान हासिल करना चाहें तो भी उनके रास्ते पर कांटें बिछा दिए जाते हैं,उनका अपमान किया जाता है। नरगिस को नौकरी मिलने पर पहले दिन उसके आफिस के शर्मा उसका मजाक उड़ाते हुए आफिस के पाठक जी से कहते हैं कि - "पता है यह किन्नर है इसको किन्नरों के साथ देखा था जब हमारे मुहल्ले में लड़का पैदा हुआ था ! ओहो अब किन्नर आफिस में भी काम करेंगे चलो अच्छा है इसी बहाने हम भी मौज मस्ती करेंगे !" 4 मैनेजर द्वारा उसके साथ बदसलूक किये जाने पर वह उन्हें मुहतोड़ जवाब देती है कि उसे नौकरी नहीं चाहिए वह उन किन्नरों की तरह नहीं है जो पैसे के लिए लोगों को

उसकी अपनी पहचान है। वह अकरम की पत्नी है। वह पढ़ी - लिखी किन्नर है अनपढ़ नहीं जो समाज की पैरों की जूती बन कर रह जाये। वह ऐसा कहकर नौकरी छोड़कर चली जाती है। इस प्रकार इन्हें दुत्कारा जाता है। इनकी पहचान को तहस - नहस किया जाता है। वे समाज में मात्र उपहास के पात्र बना दिए जाते हैं। लेकिन नरगिस चिन्दियों में टूटकर नहीं बिखरती बल्कि उसके मंसूबे बुलंद है और वह अपनी ज़िंदगी की राह में आगे बढ़ती है। वह राजनीति में जाना चाहती है और राजनीति में फैले शोषण और भ्रष्टाचार का सफाया करना चाहती है। अकरम नरगिस का हाथ मांगने उसके घर पहुँचता है और सारी सच्चाई बयान करता है। अपने घरवालों की परवाह किये बिना अकरम नरगिस को अपनी जीवनसंगिनी बनाने में कामियाब होता है। दोनों की शादी हो जाती है। अकरम का प्यार नरगिस को जीने की प्रेरणा देता है। वे दोनों समाज के बनाये लीक से हटकर सोचते और अपने जीवन का बसर करते हैं। अकरम उसके लिए सहारा बनता है। अब नरगिस के घरवाले भी उसका साथ देते हैं। अकरम के घर में नरगिस को सास के ताने सुनने पड़ते हैं, लेकिन अकरम का साथ नरगिस को सब कुछ झेलने की हिम्मत देता है। अकरम की मामी के मरने पर मामा ने दूसरी शादी कर ली। हिना के साथ सौतेली माँ का व्यवहार बहुत बुरा था। अकरम के मामा अपनी दुनिया में मस्त थे, उन्हें हिना की कोई परवाह नहीं थी। घर के हालात के कारण हिना को स्कूल छोड़ना पड़ा। हिना के पिता हमेशा उसे ताने देते हैं कि -“श्रापित मेरे घर को निगल गई ! चली जा यहाँ से, कहाँ जाऊँ ? मुझे नहीं पता ! चादर के अंदर मुँह छिपाकर रोने लगी उसे माँ की बहुत याद आ रही थी। माँ उसकी आँखों में आँसू नहीं आने देती थी।”⁵ हिना की मुसीबतें देखकर अकरम उसे गोद ले लेता है और अपने घर ले आता है। अकरम की माँ उसपर टूट पड़ती है, लेकिन अकरम इसकी परवाह नहीं करता। इसी बीच नरगिस एच. आई.वी. की शिकार हो जाती है और शहर के अस्पताल में उसका उपचार चलता है। अकरम के घर पर न रहने पर हिना को आश्रमवाले उठा ले जाते हैं। हिना आश्रम में जहर खाकर मरने की कोशिश करती है, लेकिन बच जाती है। हिना की भर्ती स्कूल में की जाती है। वहाँ सब उससे दूरी बनाये रखते हैं। नरगिस का सहारा उसके लिए प्रेरणा बनता है। वह डॉक्टर की पढ़ाई के लिए लन्दन चली जाती है और डॉक्टर बनकर लौटती है। वह अपना सम्पूर्ण जीवन लोक सेवा के लिए लगा देती है। जनता उसे स्वीकारते हैं, उसका आदर करते हैं। वह समाज की जड़ताओं को तोड़ती है। वह गरीबों के लिए मददगार बनती है। उसके द्वारा एक संस्था चलायी जाती है जिसके द्वारा किन्नरों से जुड़ी हर समस्या का हल निकाला जाता है। उसे आज बहुत लोगों का साथ मिला है। वह अपनी लड़ाई खुद लड़ रही है। उसने अपने कार्यों के द्वारा यह साबित कर दिया है कि वह समाज के लिए श्रापित नहीं बल्कि वरदान है, जो उसे अपनाने से कतराते हैं। वे कितने मुर्ख हैं। हिना ने अपना रास्ता खुद तय किया है। आज उसे अपना जीवन सार्थक लगता है।

उपन्यास में लेखिका ने जावेद नामक ट्रांसजेंडर के जीवन की सचाईयों को भी उद्घाटित करने का कार्य किया है। जास्मिन, नरगिस की माँ को याद है कि उसकी कश्मीर वाली सहेली के घर ट्रांसजेंडर पैदा हुआ था। वे लोग गरीब थे और मजदूरी करके अपना गुजारा करते थे। स्कूल में बच्चे उसका मजाक उड़ाते हैं। उसके रहते दूसरे बच्चे स्कूल आने से कतराने लगे। इस प्रकार जावेद की पढ़ाई छूट गयी। आगे स्कूल के प्रधानाचार्या मैम की बहन के घर नौकरी करने लगता है और पिता की मृत्यु के बाद अपने घर की देख -भाल करता है।

निष्कर्ष :- उपन्यास में लेखिका ने नरगिस, हिना, जावेद जैसे ट्रांसजेंडर की पीड़ा को पर्त-दर-पर्त उघाड़ने का कार्य किया है। समाज द्वारा उन्हें नेस्तानाबूज करने पर भी वे अपनी पहचान को बनाने में कामयाब होते

हैं। ट्रांसजेंडर के प्रति समाज की मानसिकता में बदलाव आया है। अकरम जैसे लोग अपने जीवन- साथी के रूप में नरगिस जैसे ट्रांसजेंडर को अपनाने लगे हैं। यह वास्तव में ट्रांसजेंडरों के प्रति समाज के सकारात्मक रवैया का ही परिणाम है। शिक्षा हासिल कर ट्रांसजेंडर भी समाज की मुख्यधारा से जुड़ने लगे हैं। नरगिस और हिना जैसे पात्र ज़िल्लत भरी ज़िंदगी जीने को तैयार नहीं होते, समाज के बनाये लीक से हटकर अपना जीवन बसर करते हैं। संघर्ष करते हुए समाज में अपने लिए जगह बनाते हैं। संघर्ष उनके जीवन की दास्तान है। वे टूटकर चिन्दियों में बिखरने की बजाय बुलंद मनसूबे के साथ अपने जीवन की राह में आगे बढ़ने लगे हैं। अब तो परिवारवाले भी उन्हें अपनाने लगे हैं। इस सोच से उनकी स्थिति में बदलाव आया है। इस बदलाव ने उनके हौसले को और बुलंद किया है जिससे वे समाज में अपनी पहचान अखितयार करने में सफल हुए हैं। आगामी दिनों में भी ऐसे सकारात्मक बदलाव उनके लिए सुनहरे भविष्य का निर्माण करने में अहम भूमिका निभा पायेंगे।

संदर्भ सूची :-

1. डॉ. मुक्ति शर्मा - श्रापित किन्नर-पृ:9
2. डॉ. मुक्ति शर्मा - श्रापित किन्नर-पृ:17 - 18
3. डॉ. मुक्ति शर्मा - श्रापित किन्नर-पृ:23
4. डॉ. मुक्ति शर्मा - श्रापित किन्नर-पृ:42
5. डॉ. मुक्ति शर्मा - श्रापित किन्नर-पृ:48

महिला शिक्षा एवं डिजिटलीकरण

श्री रवि शंकर जोशी

शोधार्थी

एल. एस. एम. परिसर पिथौरागढ़

e-mail- ravishankerjoshilght@gmail.com

पूनम राय

शोधार्थी

राजकीय महाविद्यालय बनबसा, चंपावत

सारांश - शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है, किंतु महिला शिक्षा का महत्व और भी गहरा है क्योंकि महिला शिक्षित होने पर केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि पूरा परिवार और समाज शिक्षित होता है। भारत में महिला शिक्षा का विकास एक निरंतर संघर्ष और पुनर्जागरण की कहानी है। वैदिक काल की विदुषी से लेकर आधुनिक काल की डिजिटल शिक्षार्थी तक, यह यात्रा सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों और नीतिगत हस्तक्षेपों से होकर गुजरी है। आज डिजिटलीकरण ने इसे नई ऊंचाइयाँ प्रदान की हैं, जिससे महिलाएँ न केवल शिक्षा प्राप्त कर रही हैं, बल्कि समाज और राष्ट्र के विकास में सक्रिय भागीदारी भी निभा रही हैं। डिजिटलीकरण और महिला शिक्षा का अंतर्संबंध सकारात्मक एवं परिवर्तनकारी है। यह महिलाओं को न केवल ज्ञानार्जन का अवसर देता है, बल्कि उन्हें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से सशक्त भी बनाता है। यद्यपि चुनौतियाँ मौजूद हैं, परंतु सरकारी नीतियों, सामाजिक जागरूकता और डिजिटल साक्षरता अभियानों के माध्यम से इन्हें दूर किया जा सकता है। इस प्रकार डिजिटलीकरण महिला शिक्षा के माध्यम से समाज में नवीन सामाजिक संरचना और लैंगिक समानता की दिशा में मार्ग प्रशस्त करता है। आज मोबाइल फोन, इंटरनेट, स्मार्टफोन ऐप्स और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म ने महिलाओं की शिक्षा को नए आयाम प्रदान किए हैं। डिजिटलीकरण ने महिला शिक्षा को समय, दूरी और संसाधनों की सीमाओं से मुक्त कर दिया है।

प्रस्तुत शोध में हम यह जानने का प्रयास करेंगे की भारतीय परिपेक्ष में डिजिटलीकरण किस प्रकार प्रारंभ हुआ और महिला शिक्षा के क्षेत्र में डिजिटलीकरण की उपयोगिता को समझने का प्रयास करेंगे की डिजिटलीकरण द्वारा महिलाएँ किस प्रकार अपने कौशल और अपने ज्ञान को बढ़ा रही हैं डिजिटलीकरण ने न केवल महिला शिक्षा को नए अवसर दिए हैं, बल्कि उनके कौशल विकास और उद्यमिता को भी सशक्त बनाया है। और यह भी जानेंगे की डिजिटल साधनों द्वारा किस प्रकार वह अपने लिए नए रोजगार के अवसर सृजित कर रही हैं आधुनिक समाज में महिलाएँ केवल शिक्षा तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे डिजिटल साधनों का उपयोग करके स्वावलंबन और आर्थिक स्वतंत्रता की दिशा में तेजी से अग्रसर हो रही हैं।

मुख्य शब्द- महिला शिक्षा, डिजिटलीकरण, कौशल विकास, भारत में डिजिटलीकरण, स्वरोजगार

प्रस्तावना- शिक्षा मानव समाज के विकास की आधारशिला है। महिलाओं के लिए शिक्षा केवल ज्ञानार्जन का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सशक्तिकरण का माध्यम भी है। पारंपरिक समाज में महिलाओं की शिक्षा लंबे समय तक उपेक्षित रही, किंतु स्वतंत्रता के पश्चात शिक्षा के प्रसार के लिए अनेक योजनाएँ चलाई गईं। 21वीं सदी में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) और डिजिटलीकरण ने शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन किए। आज

महिलाएँ डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से शिक्षा प्राप्त कर रही हैं, ऑनलाइन प्रशिक्षण ले रही हैं, और अपने कौशल को निखारकर आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ रही हैं। शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है, किंतु महिला शिक्षा का महत्व और भी गहरा है क्योंकि महिला शिक्षित होने पर केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि पूरा परिवार और समाज शिक्षित होता है। भारत जैसे विकासशील देश में महिला शिक्षा लंबे समय तक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कारणों से बाधित रही। 21वीं सदी में डिजिटलीकरण (Digitalization) ने शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रांति ला दी है। आज मोबाइल फोन, इंटरनेट, स्मार्टफोन ऐप्स और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म ने महिलाओं की शिक्षा को नए आयाम प्रदान किए हैं। डिजिटलीकरण ने महिला शिक्षा को समय, दूरी और संसाधनों की सीमाओं से मुक्त कर दिया है।

भारत में डिजिटलीकरण का उद्भव और विकास--भारत में डिजिटलीकरण का विकास कई चरणों में हुआ है। यह केवल तकनीकी प्रक्रिया नहीं थी, बल्कि प्रशासनिक सुधार, शिक्षा का आधुनिकीकरण, और समाज के डिजिटल रूपांतरण से जुड़ा हुआ है।

प्रारंभिक चरण (1960-1990)-1960-70 के दशक में कंप्यूटर का आगमन मुख्य रूप से सरकारी संस्थानों और बड़े उद्योगों तक सीमित था। 1976 में National Informatics Centre (NIC) की स्थापना हुई, जिसने सरकारी विभागों में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग की नींव रखी। 1988 में राष्ट्रीय उपग्रह आधारित टेली संचार व्यवस्था के माध्यम से संचार नेटवर्क मजबूत हुआ।³

आईटी क्रांति और उदारीकरण (1990-2000)

1991 की आर्थिक उदारीकरण नीति के बाद भारत में आईटी सेक्टर का तेजी से विकास हुआ। सॉफ्टवेयर उद्योग और BPO (Business Process Outsourcing) सेवाएँ वैश्विक स्तर पर भारत की पहचान बनीं। 1998 में आईटी एक्ट 2000 का प्रारूप तैयार हुआ, जिसने डिजिटल लेन-देन को कानूनी मान्यता दी।⁵

ई-गवर्नेंस और इंटरनेट प्रसार (2000-2010)-2006 में राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना (NeGP) शुरू की गई, जिसका उद्देश्य सरकारी सेवाओं को डिजिटल माध्यम से आम जनता तक पहुंचाना था।⁶ इसी समय आधार परियोजना (UIDAI, 2009) की शुरुआत हुई, जिसने भारत में डिजिटल पहचान प्रणाली की नींव रखी।⁷ इंटरनेट और मोबाइल सेवाओं के प्रसार से पहली बार ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों में डिजिटल पहुंच संभव हुई।⁸

डिजिटल इंडिया और तीव्र प्रसार (2015-2019)

डिजिटल इंडिया भारत सरकार की एक महत्वाकांक्षी पहल है, जिसका उद्घाटन 1 जुलाई 2015 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा किया गया, और इसका लक्ष्य भारत को एक डिजिटली सशक्त समाज और ज्ञानआधारित अर्थव्यवस्था में परिवर्तित करना है।⁹ इसके तीन मुख्य लक्ष्य थे-

- हर नागरिक तक डिजिटल अवसर संचयन पहुंचाना।

- सरकारी सेवाओं को ऑनलाइन करना।
- डिजिटल साक्षरता और ई-भागीदारी को बढ़ावा देना।
- BHIM UPI, डिजिटल पेमेंट सिस्टम, आधार-लिंकड सेवाएँ, ई-शिक्षा; (SWAYAM, DIKSHA) इसी दौर की देन हैं।¹⁰

कोविड-19 महामारी और डिजिटल शिक्षा का विस्फोट (2020 के बाद) लॉकडाउन के दौरान ऑनलाइन शिक्षा, वर्क फ्रॉम होम, टेलीमेडिसिन और ई-गवर्नेंस जीवन का हिस्सा बन गए।¹¹ Zoom, Google Meet, Microsoft Teams जैसे प्लेटफॉर्मों पर शैक्षिक और सामाजिक गतिविधियाँ संचालित हुईं महिलाओं और छात्राओं के लिए यह समय डिजिटल शिक्षा और कौशल विकास का मील का पत्थर साबित हुआ।¹²

वर्तमान परिप्रेक्ष्य (2021-वर्तमान)-भारत आज दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा इंटरनेट उपभोक्ता देश है।¹³ 5G नेटवर्क, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, क्लाउड कंप्यूटिंग और ब्लॉकचेन जैसी तकनीकें शिक्षा, स्वास्थ्य और व्यवसाय में उपयोग की जा रही हैं।¹⁴ डिजिटल इंडिया के अंतर्गत PMGDISHA स्टार्टअप इंडिया, डिजिटल पेमेंट्स, ऑनलाइन एजुकेशन प्लेटफॉर्म ने महिलाओं और युवाओं को आगे बढ़ने का अवसर दिया है।¹⁵

वर्तमान समय में डिजिटल तकनीक ने महिला शिक्षा को नए आयाम दिए हैं। डिजिटल संसाधनों के माध्यम से महिलाएं अब घर बैठे ही शिक्षा प्राप्त कर सकती हैं, अपने कौशल को बढ़ा सकती हैं, और रोजगार के अवसरों के लिए तैयार हो सकती हैं।

महिला शिक्षा एवं डिजिटलीकरण का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य-महिला शिक्षा और डिजिटलीकरण की यात्रा समानांतर रूप से सामाजिक परिवर्तन और तकनीकी प्रगति के साथ विकसित हुई है। वैदिक काल में महिलाओं को शिक्षा का अधिकार प्राप्त था, किंतु मध्यकाल में सामाजिक-धार्मिक कारणों से महिलाओं की शिक्षा लगभग समाप्त हो गई। 19वीं सदी में राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले जैसे समाज सुधारकों के प्रयासों से महिला शिक्षा का पुनर्जागरण प्रारंभ हुआ। स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान में शिक्षा को मौलिक अधिकार का दर्जा देने की दिशा में क्रमिक प्रयास हुए। प्रारंभ में शिक्षा को केवल अनुच्छेद 45 के तहत राज्य के नीति निर्देशक तत्व के रूप में रखा गया था, किंतु 86वें संविधान संशोधन अधिनियम (2002) के माध्यम से अनुच्छेद 21A जोड़ा गया, जिसने 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए शिक्षा को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता प्रदान की। 161990 के दशक के बाद भारत में उदारीकरण और सूचना प्रौद्योगिकी (IT) क्रांति ने शिक्षा को नई दिशा दी। कंप्यूटर, इंटरनेट और ई-गवर्नेंस की अवधारणा ने शिक्षा क्षेत्र को डिजिटल आधार प्रदान किया। इसके बाद राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2005) और राष्ट्रीय ज्ञान नेटवर्क (2009) जैसी पहलों ने विश्वविद्यालयों एवं शोध संस्थानों को डिजिटल प्लेटफॉर्म से जोड़ा और उच्च शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन लाए। महिला शिक्षा पर इसका सीधा प्रभाव तब दिखाई देने लगा, जब SWAYAM, NPTEL, MOOCs, IGNOU, DIKSHA Portal, PG Path-shala जैसे ऑनलाइन माध्यमों ने घर बैठे शिक्षा उपलब्ध कराई। इससे महिलाओं की उच्च शिक्षा, कौशल-विकास और जीवनभर सीखने के अवसरों का विस्तार हुआ। UNESCO (2021) की रिपोर्ट के अनुसार, डिजिटल शिक्षण पहले, विशेषकर MOOCs महिलाओं और हाशिए पर खड़े समूहों तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।¹⁷ 2015 में 'डिजिटल इंडिया अभियान' की शुरुआत ने शिक्षा में डिजिटलीकरण को एक संगठित और व्यापक स्वरूप प्रदान किया। इसके तहत ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में इंटरनेट, डिजिटल अवसंरचना और ऑनलाइन शिक्षा प्लेटफॉर्म का प्रसार हुआ। ऑक्टो. 19 महामारी (2020-22) ने इस प्रक्रिया को और तेज कर दिया। पारंपरिक कक्षाओं के स्थान पर डिजिटल शिक्षा ने मुख्य भूमिका निभाई। ऑनलाइन कक्षाओं,

वर्चुअल कॉन्फ्रेंस और वेबिनार के माध्यम से महिलाओं ने अपनी शिक्षा और कौशल दोनों को निरंतर विकसित किया। इस अवधि में महिला शिक्षा में डिजिटलीकरण का प्रभाव वैश्विक स्तर पर एक शोधनीय और दस्तावेजीकृत परिघटना बन गया।

भारत में महिला शिक्षा का ऐतिहासिक विकास-भारत में महिला शिक्षा का इतिहास सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक परिवर्तनों के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है। समय के साथ इसकी संरचना में उतार-चढ़ाव आते रहे, जिनका विवरण निम्न प्रकार है:

वैदिक काल-वैदिक काल को महिला शिक्षा का स्वर्ण युग कहा जा सकता है। इस समय महिलाएं श्रुति, स्मृति, वेद एवं उपनिषदों का अध्ययन करती थीं। गर्गी, मैत्रेयी और लोपामुद्रा जैसी विदुषियों का उल्लेख शास्त्रार्थ और दार्शनिक विमर्शों में मिलता है। इस काल में शिक्षा को सामाजिक और धार्मिक कर्तव्य का अंग माना जाता था।¹⁸

उत्तरवैदिक और मध्यकाल-उत्तरवैदिक काल में धीरे-धीरे महिलाओं की शैक्षिक स्थिति कमजोर होने लगी। मध्यकालीन भारत, विशेषकर मुस्लिम शासन काल में, पर्दा प्रथा, बाल विवाह और सामाजिक रूढ़िवादिता के कारण महिला शिक्षा लगभग समाप्त हो गई। महिलाएं गृहस्थ जीवन तक सीमित कर दी गईं। 19वीं सदी में सामाजिक सुधार आंदोलनों ने महिला शिक्षा को पुनर्जीवित किया। राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, दयानंद सरस्वती, महात्मा ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले जैसे सुधारकों ने स्त्रियों के लिए विद्यालय खोले और शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम माना। मिशनरी संस्थानों ने भी महिला शिक्षा में महत्वपूर्ण योगदान दिया।²⁰

स्वतंत्रता संग्राम और स्वतंत्रता पश्चात-स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महिला शिक्षा राष्ट्रवादी आंदोलन से जुड़ गई। महात्मा गांधी ने स्त्री-शिक्षा को आत्मनिर्भरता और राष्ट्रनिर्माण का आधार माना। स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान ने महिलाओं को समान शैक्षिक अधिकार दिए। अनुच्छेद 15 ने लैंगिक समानता की गारंटी दी, जबकि अनुच्छेद 45 ने प्राथमिक शिक्षा को राज्य का दायित्व बनाया। वर्ष 2002 में अनुच्छेद 211 के तहत 6-14 वर्ष की आयु तक निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान किया गया।²¹

समकालीन काल (डिजिटल युग)-21वीं सदी में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) और डिजिटलीकरण ने महिला शिक्षा को नई दिशा दी। डिजिटल इंडिया अभियान (2015) के अंतर्गत SWAYAM, DIKSHA, MOOCs, IGNOU और Unacademy जैसे प्लेटफॉर्मों ने महिलाओं को घर बैठे उच्च शिक्षा और कौशल विकास के अवसर प्रदान किए। कोविड -19 महामारी (2020) के दौरान ऑनलाइन शिक्षा ही मुख्य साधन बन गई, जिसने महिला शिक्षा को नई गति दी।²² इस प्रकार, यह कालक्रम दर्शाता है कि महिला शिक्षा और डिजिटलीकरण का संगम केवल तकनीकी उपलब्धि नहीं, बल्कि एक सामाजिक क्रांति है जिसने महिलाओं को शैक्षिक, आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त बनाया है।

डिजिटलीकरण और महिला शिक्षा का अंतर्संबंध-भारत में शिक्षा के क्षेत्र में हो रहे डिजिटलीकरण ने महिला शिक्षा को नई दिशा और गति प्रदान की है। डिजिटलीकरण ने महिलाओं की शिक्षा के क्षेत्र में गहरा प्रभाव डाला है। विश्व स्तर पर देखा जाए तो डिजिटल प्लेटफॉर्मों ने शिक्षा तक पहुंच का विस्तार किया है और विशेष रूप से उन महिलाओं को अवसर प्रदान किया है, जो परंपरागत शिक्षा प्रणाली में कई सामाजिक, आर्थिक व भौगोलिक बाधाओं के कारण पिछड़ जाती थीं।²³ सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने महिलाओं के लिए ज्ञान-संसाधनों की पहुंच, शिक्षा की लचीलापन और आत्मनिर्भरता की संभावनाओं को बढ़ाया है।

1. पहुंच (Accessibility)-ग्रामीण एवं दूरस्थ क्षेत्रों की महिलाएं अब

डिजिटल माध्यमों से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त कर रही हैं। ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म जैसे SWAYAM, NPTEL, DIKSHA, MOOCs और IGNOU ने महिलाओं के लिए उच्च शिक्षा एवं कौशल विकास के नए अवसर खोले हैं। स्मार्टफोन और इंटरनेट की उपलब्धता ने घर बैठे शिक्षा को संभव बनाया, जिससे विवाह, पारिवारिक जिम्मेदारियों या आर्थिक कठिनाइयों के कारण शिक्षा से वंचित महिलाएँ भी आगे बढ़ पा रही हैं।²⁴

2. लचीलापन - डिजिटलीकरण ने समय और स्थान की बाधाओं को कम किया है। महिलाएँ घरेलू कार्य और शिक्षा के बीच संतुलन स्थापित कर सकती हैं। ऑनलाइन कोर्स, वेबिनार और डिजिटल कक्षाओं ने उन्हें आजीवन सीखने (Lifelong Learning) की सुविधा दी है।

3. आर्थिक सशक्तिकरण - डिजिटल शिक्षा के माध्यम से महिलाएँ न केवल शैक्षिक डिग्री, बल्कि कौशल आधारित प्रशिक्षण भी प्राप्त कर रही हैं, जैसे कि डिजिटल मार्केटिंग, कंप्यूटर प्रोग्रामिंग, ऑनलाइन उद्यमिता, ई-गवर्नेंस और डिजिटल पेमेंट सिस्टम का ज्ञान। यह सीधे-सीधे महिलाओं को रोजगार एवं आत्मनिर्भरता की दिशा में अग्रसर करता है।

4. लैंगिक समानता और सामाजिक परिवर्तन - डिजिटलीकरण ने महिलाओं को पुरुषों के समकक्ष शिक्षा प्राप्त करने का अवसर दिया। डिजिटल शिक्षा से प्राप्त ज्ञान महिलाओं को सामाजिक निर्णय-प्रक्रिया, राजनीति और उद्यमिता में सक्रिय भागीदारी के लिए तैयार करता है। इससे पारंपरिक लैंगिक भूमिकाओं में परिवर्तन आता है और समाज अधिक समावेशी एवं समानतामूलक बनता।

5. कौशल विकास और सामाजिक सशक्तिकरण - डिजिटल प्लेटफॉर्मों ने महिलाओं को भाषाई दक्षता, कंप्यूटर ज्ञान और व्यावसायिक कौशल विकसित करने में मदद की। महिला स्वयं सहायता समूह ने डिजिटल माध्यमों से अपने उत्पादों का विपणन किया और आर्थिक रूप से सशक्त हुईं।²⁵

भारत में महिला शिक्षा हेतु डिजिटलीकरण से संबंधित नीतियाँ एवं कार्यक्रम - भारत सरकार ने शिक्षा में डिजिटलीकरण को प्रोत्साहित करते हुए महिला शिक्षा के लिए कई नीतिगत कदम उठाए हैं। इन पहलों का उद्देश्य केवल शिक्षा तक पहुँच बढ़ाना ही नहीं है, बल्कि गुणवत्ता, समानता और समावेशन सुनिश्चित करना भी है। डिजिटल शिक्षा से महिलाओं को घर बैठे शिक्षा प्राप्त करने, कौशल विकास करने और सामाजिक-आर्थिक रूप से सशक्त होने के अवसर प्राप्त हुए हैं।

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 - राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षा के डिजिटलीकरण पर विशेष बल दिया है। इसमें डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर, ऑनलाइन प्लेटफॉर्म और ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज के माध्यम से शिक्षा को अधिक सुलभ और समावेशी बनाने का प्रयास किया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार, महिलाओं और वंचित वर्गों को डिजिटल शिक्षा द्वारा उच्च शिक्षा और कौशल विकास में आगे बढ़ाने पर विशेष जोर है।²⁶

2. डिजिटल इंडिया कार्यक्रम (2015) - भारत सरकार का डिजिटल इंडिया कार्यक्रम (2015) एक महत्वपूर्ण पहल है, जिसका लक्ष्य देश के हर नागरिक को इंटरनेट और डिजिटल सेवाओं तक पहुँच प्रदान करना है। महिला शिक्षा के संदर्भ में, यह कार्यक्रम ई-लर्निंग, ई-गवर्नेंस, और डिजिटल साक्षरता के नए अवसर खोलता है। PMGDISHA, Pradhan Mantri Gramin Digital Saksharta Abhiyan जैसी पहलों ने ग्रामीण महिलाओं को कंप्यूटर और स्मार्टफोन के उपयोग में दक्ष बनाया, जिससे वे डिजिटल शिक्षा और ऑनलाइन सेवाओं तक पहुँच पा सकी।

3- SWAYAM & MOOCs - SWAYAM (Study Webs of Active-Learning for Young Aspiring Minds) भारत सरकार का राष्ट्रीय Massive Open Online Course प्लेटफॉर्म है। इसका उद्देश्य सभी वर्गों, विशेषकर महिलाओं को निःशुल्क उच्च शिक्षा सामग्री उपलब्ध कराना है। महिलाएँ यहाँ से इंजीनियरिंग, प्रबंधन, कला,

विज्ञान, कानून और कौशल विकास से जुड़े पाठ्यक्रम कर सकती हैं। इससे न केवल गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की पहुँच बढ़ी, बल्कि महिलाओं को रोजगार एवं आत्मनिर्भरता के अवसर भी मिले।

4. NPTEL (National Programme on Technology Enhanced Learning) - NPTEL, IITs और IISc की संयुक्त पहल है, जो विज्ञान, इंजीनियरिंग और प्रबंधन के ऑनलाइन कोर्स उपलब्ध कराती है। यह महिलाओं को तकनीकी शिक्षा में भागीदारी बढ़ाने और डिजिटल कौशल विकसित करने का अवसर देती है।²⁷

5. DIKSHA (Digital Infrastructure for Knowledge Sharing) - शिक्षा मंत्रालय द्वारा विकसित DIKSHA Portal स्कूल स्तर की शिक्षा और शिक्षक प्रशिक्षण के लिए है। ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों की महिला छात्राओं और शिक्षिकाओं के लिए यह अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसमें ई-बुक्स, डिजिटल पाठ्य सामग्री, और प्रशिक्षण मॉड्यूल उपलब्ध हैं। इससे ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा में भागीदारी और बच्चों की शिक्षा में उनकी सक्रिय भूमिका बढ़ी है।²⁸

6. IGNOU और मुक्त विश्वविद्यालय प्रणाली

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय और राज्य मुक्त विश्वविद्यालयों ने ओपन एंड डिस्टेंस लर्निंग (ODL) प्रणाली को डिजिटल माध्यमों से जोड़कर महिलाओं को लचीला शिक्षा विकल्प प्रदान किया। यह विवाहित महिलाओं, गृहिणियों और कार्यरत महिलाओं के लिए विशेष रूप से सहायक है, क्योंकि वे घर और काम की जिम्मेदारियों के साथ शिक्षा प्राप्त कर सकती हैं।²⁹

7. e-PG Pathshala - e-PG Pathshala उच्च शिक्षा के स्नातकोत्तर स्तर के लिए डिजाइन किया गया डिजिटल प्लेटफॉर्म है। इसमें Arts, Science, Commerce, Humanities से संबंधित ई-कंटेंट और वीडियो लेक्चर उपलब्ध हैं। महिलाओं की उच्च शिक्षा और शोध में भागीदारी को बढ़ावा देने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है।³⁰

8. अन्य पहलें - e-Sakshar Bharat, वयस्क महिलाओं के लिए डिजिटल साक्षरता अभियान। Mahila E-Learning Initiatives, महिला उद्यमिता, वित्तीय साक्षरता और डिजिटल कौशल पर आधारित ऑनलाइन पहलें। निजी प्लेटफॉर्म: महिलाओं को वैश्विक स्तर पर सीखने, नई भाषाएँ सीखने, और उद्यमिता कौशल विकसित करने का अवसर प्रदान करते हैं।

महिला स्वयं सहायता समूह: ऑनलाइन प्रशिक्षण और मार्केटिंग के माध्यम से स्थानीय महिला उद्यमिता को बढ़ावा मिल रहा है। भारत सरकार की डिजिटल शिक्षा संबंधी नीतियों और कार्यक्रमों ने महिला शिक्षा को नई दिशा दी है। जहाँ SWAYAM और NPTEL ने उच्च शिक्षा में भागीदारी बढ़ाई है, वहीं DIKSHA और PMGDISHA ने ग्रामीण महिलाओं तक डिजिटल शिक्षा की पहुँच सुनिश्चित की है। हालाँकि, अभी भी डिजिटल डिवाइड, इंटरनेट कनेक्टिविटी की कमी और सामाजिक-पारिवारिक अवरोध जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं। फिर भी यह स्पष्ट है कि डिजिटल शिक्षा ने महिलाओं के आत्मविश्वास, रोजगार योग्यता और सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण में ठोस योगदान दिया है।

महिला शिक्षा पर डिजिटलीकरण का प्रभाव
शैक्षिक प्रभाव - नई भाषाएँ सीखना, तकनीकी कौशल और व्यावसायिक शिक्षा। उच्च शिक्षा और प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी घर बैठे संभव। शिक्षा में निरंतरता बनी रहती है, भले ही सामाजिक या पारिवारिक बाधाएँ हों।

आर्थिक और व्यावसायिक प्रभाव - डिजिटल मार्केटिंग, फ्रीलांसिंग और स्वरोजगार के अवसर। SHG और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के माध्यम से महिला उद्यमिता।

सामाजिक और मानसिक प्रभाव

• आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास में वृद्धि

- परिवार और समाज में निर्णय क्षमता बढ़ी।
- डिजिटल साक्षरता और नेटवर्किंग के माध्यम से सामाजिक जुड़ाव।
- डिजिटलीकरण ने महिला शिक्षा को सुलभ, लचीला और रोजगार-केंद्रित बनाया है। इससे महिलाएं शैक्षिक, आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त बन रही हैं।

डिजिटलीकरण और महिला कौशल विकास/उद्यमिता - डिजिटलीकरण ने न केवल महिला शिक्षा को नए अवसर दिए हैं, बल्कि उनके कौशल विकास और उद्यमिता को भी सशक्त बनाया है। आधुनिक समाज में महिलाएं केवल शिक्षा तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे डिजिटल साधनों का उपयोग करके स्वावलंबन और आर्थिक स्वतंत्रता की दिशा में तेजी से अग्रसर हो रही हैं। विश्व बैंक (2025) की रिपोर्ट से संकेत मिलता है कि डिजिटल लर्निंग प्लेटफॉर्म और लक्षित डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों ने दक्षिण एशिया में महिलाओं की शैक्षिक स्थिति और कौशल-आधारित शिक्षा के अवसरों को बढ़ाने में सकारात्मक भूमिका निभाई है। जब महिलाओं को निरंतर और संरचित डिजिटल पहुंच दी जाती है तो उनके आत्म-विश्वास, रोजगार-योग्यता और सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण में सुधार होता है।³¹ स्मिथा ने बताया कि डिजिटल साक्षरता, महिलाओं और समाज के अन्य लोगों को मुश्किल परिस्थितियों में सार्थक काम के लिए डिजिटल टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल करने की क्षमता बढ़ाती है। डिजिटल साक्षर महिलाएं कंप्यूटर से संबंधित डिवाइस चला सकती हैं और देश के विकास में मदद कर सकती हैं। लेकिन डिजिटल इंडिया के विकास में एक बड़ी बाधा कुशल कार्यबल की कमी है, जिसे महिलाएं पूरा कर सकती हैं। इसलिए, डिजिटल इंडिया और स्किल इंडिया के बीच एक एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता है ताकि कार्यक्रम बनाए जा सकें और प्रशिक्षण दिया जा सके। निजी क्षेत्र की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। उन्हें डिजिटल इंडिया कार्यक्रम के हिस्से के रूप में बुनियादी ढांचा विकसित करने, सेवाएं प्रदान करने और डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।³²

महिला कौशल विकास में डिजिटलीकरण की भूमिका

ऑनलाइन कौशल प्रशिक्षण:- SWAYAM, NPTEL, Coursera और Udeemy जैसे प्लेटफॉर्म महिलाओं को आईटी, डिजिटल मार्केटिंग, ग्राफिक डिजाइनिंग, प्रोग्रामिंग, भाषा शिक्षा, और बिजनेस मैनेजमेंट जैसे कौशल सिखा रहे हैं। प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना के अंतर्गत महिलाओं को डिजिटल तकनीकों से जोड़कर व्यावसायिक शिक्षा दी जा रही है।

भाषा और संवाद कौशल-महिलाएं Duolingo, Hello English] vkSj British Council Apps जैसे प्लेटफॉर्म से नई भाषाएं सीख रही हैं, जो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर रोजगार और उद्यमिता के अवसर प्रदान करता है।

डिजिटल साक्षरता-ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं को PMGDISHA के तहत इंटरनेट, ईमेल, ऑनलाइन बैंकिंग, डिजिटल पेमेंट और ई-गवर्नेंस की ट्रेनिंग दी गई। महिला उद्यमिता में डिजिटलीकरण की भूमिका **ऑनलाइन मार्केटप्लेस और ई-कॉमर्स-महिलाएं** अपने उत्पादों को। Amazon, Flipkart, Meesho] और Government e-Marketplace पर बेच रही हैं। ग्रामीण महिलाओं के स्वयं सहायता समूह स्थानीय हस्तशिल्प, खाद्य उत्पाद और कपड़े डिजिटल माध्यम से राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय बाजार तक पहुंचा रहे हैं।

सोशल मीडिया आधारित उद्यमिता:- महिलाएं Facebook, Instagram, WhatsApp Business के माध्यम से छोटे व्यवसाय चला रही हैं, जिससे कम लागत में व्यापक बाजार तक पहुंच मिल रही है।

फिनटेक और डिजिटल पेमेंटस:- Paytm, Google Pay, PhonePe और BHIM UPI जैसे प्लेटफॉर्म महिलाओं को सुरक्षित और सरल लेन-देन की सुविधा देते हैं, जिससे वे आत्मनिर्भर व्यवसाय कर पा रही हैं।

ऑनलाइन नेटवर्किंग और कॉन्फ्रेंस:- महिलाएं Zoom, Google Meet vkSj Microsoft Teams जैसे प्लेटफॉर्म पर वेबिनार और

वर्चुअल कॉन्फ्रेंस में भाग लेकर वैश्विक स्तर पर अपने विचार और प्रोजेक्ट प्रस्तुत कर रही हैं।

डिजिटलीकरण, महिला शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन- डिजिटलीकरण केवल तकनीकी प्रगति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक क्रांति का माध्यम भी बन चुका है।

ज्ञान और अवसर की समानता:- डिजिटल प्लेटफॉर्मों ने ग्रामीण और शहरी, गरीब और अमीर सभी महिलाओं के लिए शिक्षा की समान संभावनाएं प्रदान कीं, जिससे सामाजिक असमानताओं में कमी आई है।

आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास:- ऑनलाइन शिक्षा और डिजिटल स्किल्स से महिलाओं में स्वावलंबन और आत्मविश्वास बढ़ा है, जो उन्हें परिवार और समाज में निर्णय-प्रक्रिया का हिस्सा बनने में मदद करता है।

सांस्कृतिक अवरोधों का हास:- ऑनलाइन शिक्षा और ई-लर्निंग ने घर बैठे शिक्षा का विकल्प देकर सामाजिक व सांस्कृतिक बाधाओं को काफी हद तक कम किया है।

लैंगिक समानता और समाज में महिलाओं की भागीदारी:- डिजिटल शिक्षा ने महिलाओं को पुरुषों के बराबर अवसर दिए, जिससे लैंगिक समानता को बल मिला और महिलाएं आर्थिक और सामाजिक निर्णयों में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं।

नई पीढ़ी पर प्रभाव:- महिलाएं जब डिजिटल माध्यम से शिक्षित होती हैं, तो वे अपने बच्चों को भी डिजिटल साक्षर बनाती हैं, जिससे समाज में डिजिटल संस्कृति का विकास होता है।

रोजगार के अवसर बढ़े:- महिलाएं ऑनलाइन काम करके अतिरिक्त आमदनी कर रही हैं।

सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि: शिक्षा और उद्यमिता से महिलाएं समाज में सम्मानित स्थान प्राप्त कर रही हैं।

ग्रामीण विकास: डिजिटलीकरण से महिलाएं स्वयं सहायता समूह बनाकर स्थानीय विकास की धुरी बन रही हैं। एम. के. गणेशन और सी. वेथिरजन के अनुसार, डिजिटल युग में महिलाओं के बेहतर सामाजिक कौशल एक बड़ा लाभ साबित होते हैं, और यह तब और भी महत्वपूर्ण हो जाता है जब सामाजिक कौशल के साथ उच्च शिक्षा और डिजिटल परिवर्तन की अच्छी समझ भी हो। सूचना प्रौद्योगिकी महिलाओं के लिए भेदभाव खत्म करने, पूर्ण समानता, खुशहाली और अपने जीवन की गुणवत्ता और अपने समुदाय के भविष्य को प्रभावित करने वाले फैसलों में भागीदारी के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है। इंटरनेट ने महिलाओं को उत्पादों और सेवाओं की विविधता, रेंज और गुणवत्ता, उनकी प्रचार-प्रसार और मार्केटिंग के बारे में जानकारी हासिल करने में मदद की। जानकारी के एक साधन के रूप में उपयोग होने के अलावा, सूचना प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग ने महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए नए रास्ते भी खोले हैं।³³

ऑनलाइन कॉन्फ्रेंस और डिजिटल शिक्षा में महिला सहभागिता- महिलाओं द्वारा ऑनलाइन शिक्षा में भागीदारी-महिलाएं अब विभिन्न डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से शिक्षा, प्रशिक्षण और कार्यशालाओं में भाग ले रही हैं। ऑनलाइन कॉन्फ्रेंस, वेबिनार और वर्चुअल सेमिनार जैसे Zoom, Google Meet और Microsoft Teams का उपयोग महिलाओं द्वारा किया जा रहा है। इन सत्रों में विषय शामिल हैं: महिला उद्यमिता, स्वास्थ्य, वित्तीय साक्षरता, शिक्षा और कौशल विकास।

लाभ:- शिक्षा में समय और स्थान की स्वतंत्रता सीखने और ज्ञान साझा करने का अवसर, नेटवर्किंग और सामाजिक संपर्क दृ अन्य महिला उद्यमियों, शिक्षकों और विशेषज्ञों से जुड़ने का अवसर। इस प्रक्रिया से महिलाओं का सशक्तिकरण बढ़ता है, और उनके निर्णय

लेने की क्षमता एवं आत्मनिर्भरता में सुधार होता है। स्वयं सहायता समूह और डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग SHG महिलाओं को सामूहिक रूप से कार्य करने और डिजिटल कौशल के माध्यम से अपने उत्पादों को विकसित करने में सक्षम बनाते हैं।

नए उत्पाद: हस्तशिल्प, सिलाई, खाद्य उत्पाद, जैविक उत्पाद, घरेलू वस्त्र आदि

डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग: Amazon, Flipkart, Meesho, IndiaMart, Facebook, WhatsApp Business कई महिला स्वयं सहायता समूह डिजिटल माध्यमों का उपयोग करके ऑर्गेनिक उत्पाद, हस्तशिल्प, बेकरी और वस्त्र उद्योग को राष्ट्रीय स्तर पर पहुंचा चुके हैं। शहरी क्षेत्रों की महिलाएँ स्टार्ट-अप चला रही हैं, वहीं ग्रामीण महिलाएँ डिजिटल मार्केटिंग और ऑनलाइन शिक्षा से जुड़कर अपने जीवन-स्तर को सुधार रही हैं।

उत्पाद बिक्री और सशक्तिकरण- महिलाएँ अब घर बैठे उच्च शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त कर सकती हैं। इससे उनकी ज्ञान क्षमता बढ़ती है और वे अपने उत्पाद या व्यवसाय को डिजिटल दुनिया से जोड़ने में सक्षम होती हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग महिलाओं को अपने उत्पाद को न केवल स्थानीय बल्कि राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर बेचने की क्षमता देता है। डिजिटल प्लेटफॉर्म और SHG के माध्यम से महिलाओं का उत्पाद राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजार में पहुंचता है। इससे आर्थिक सशक्तिकरण, सामाजिक सशक्तिकरण और व्यक्तिगत विकास सुनिश्चित होता है। महिलाएँ शिक्षा से शुरू होकर SHG गठन और डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से सीधे आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त बनती हैं, जो समग्र सशक्तिकरण की प्रक्रिया को सुदृढ़ करता है।

निष्कर्ष- इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि डिजिटलीकरण ने भारत में महिला शिक्षा, कौशल विकास और सामाजिक-सामाजिक सहभागिता में महत्वपूर्ण और स्थायी परिवर्तन लाया है। डिजिटल प्लेटफॉर्म और प्लज आधारित पहलों ने महिलाओं को पारंपरिक शैक्षिक बाधाओं, सामाजिक और भौगोलिक सीमाओं से मुक्त करते हुए घर बैठे उच्च शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और कौशल विकास के अवसर प्रदान किए हैं। विशेष रूप से sSWAYAM, NPTEL, DIKSHA, MOOCs, IG-NOU और PMGDISHA जैसी पहलें महिलाओं की शिक्षा, डिजिटल साक्षरता और व्यावसायिक योग्यता को बढ़ावा देने में प्रभावी साबित हुई हैं। डिजिटल माध्यमों के कारण महिलाएँ ऑनलाइन कॉन्फ्रेंस, वेबिनार और वर्चुअल कार्यशालाओं में भाग लेकर अपने ज्ञान और नेटवर्क को वैश्विक स्तर तक विस्तृत कर रही हैं। महिला स्वयं सहायता समूह और डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से आर्थिक उद्यमिता और स्वरोजगार के अवसर भी बढ़े हैं। ई-कॉमर्स, सोशल मीडिया और डिजिटल भुगतान के साधनों ने महिलाओं को वित्तीय स्वतंत्रता, स्थायी आय और व्यवसायिक निर्णय क्षमता प्रदान की है। इस प्रकार, डिजिटलीकरण ने न केवल महिला शिक्षा को सुलभ और लचीला बनाया है, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और व्यक्तिगत सशक्तिकरण में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। सामाजिक स्तर पर, डिजिटलीकरण ने लैंगिक समानता, पारिवारिक और सामुदायिक सहभागिता, तथा नई पीढ़ी में डिजिटल संस्कृति के प्रसार को प्रेरित किया है। परिणामस्वरूप, महिलाएँ अब शिक्षा, कौशल और उद्यमिता के माध्यम से स्वावलंबी और समाज में सक्रिय भूमिका निभाने वाली घटक बन गई हैं। अंततः, यह अध्ययन दर्शाता है कि डिजिटलीकरण केवल तकनीकी परिवर्तन नहीं बल्कि एक सामाजिक और आर्थिक क्रांति का माध्यम बन चुका है, जिसने महिला शिक्षा और सशक्तिकरण के क्षेत्र में दीर्घकालीन और स्थायी प्रभाव सुनिश्चित किया है।

भविष्य की संभावनाएँ- डिजिटल साक्षरता का विस्तार: ग्रामीण और

पिछड़े क्षेत्रों की महिलाओं तक डिजिटल शिक्षा पहुंचाना।
भाषाई विविधता में ई-लर्निंग सामग्री: अधिक भारतीय भाषाओं में डिजिटल पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराना।

कौशल विकास और रोजगार: डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से रोजगार और उद्यमिता के नए अवसर प्रदान करना।

सुरक्षा और साइबर कानून: ऑनलाइन उत्पादन और साइबर अपराध से सुरक्षा सुनिश्चित करना।

वैश्विक सहभागिता: महिलाओं को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा, शोध और उद्यमिता में जोड़ना। डिजिटलीकरण और महिला शिक्षा का समन्वय भारत को एक समावेशी, ज्ञान-आधारित और लैंगिक समानता युक्त समाज की ओर अग्रसर कर रहा है। यदि तकनीकी अवसंरचना, डिजिटल साक्षरता और सामाजिक समर्थन को और सशक्त किया जाए, तो महिलाएँ केवल शिक्षा में ही नहीं, बल्कि राष्ट्र निर्माण के प्रत्येक क्षेत्र में केंद्रीय भूमिका निभा सकती हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

- 1.OECD. (2019). Going Digital: Shaping Policies, Improving Lives. Paris: OECD Publishing.
- 2.National Informatics Centre. (2023). About NIC. Government of India
- 3.Department of Space. (1988). INSAT system: An overview. Government of India.
- 4.Dossani, R., & Kenney, M. (2007). The next wave of globalization: Relocating service provision to India. World Development, 35(5), 772-791.
- 5.Government of India. (2000). Information Technology Act, 2000. Ministry of Law, Justice and Company Affairs.
- 6.MeitY. (2006). National e-Governance Plan. Ministry of Electronics and Information Technology.
- 7.UIDAI. (2010). Aadhaar: Creating a unique identity. Unique Identification Authority of India.
- 8.TRAI. (2010). Telecom sector performance indicators. Telecom Regulatory Authority of India.
- 9.MeitY. (2015). Digital India programme. Government of India.
- 10.NITI Aayog. (2018). Strategy for New India @ 75. Government of India.
- 11.UNESCO. (2020). COVID-19 response: Education in emergencies. United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization
- 12.World Bank. (2021). Remote learning during COVID-19: Lessons from South Asia. World Bank.
- 13.TRAI. (2023). The Indian telecom sector: A statistical report. Telecom Regulatory Authority of India.
- 14.NASSCOM. (2022). Future of technology in India. NASSCOM Insights.
- 15.MeitY. (2023). Annual report 2022-23. Ministry of Electronics and Information Technology.
- 16.Law Library of Congress. Constitutional right to an education: India. The Library of Congress. Retrieved September 16, 2025.
- 17.UNESCO IIEP. (2021). Harnessing the power of digital learning in India. UNESCO International Institute for Educational Planning.
- 18.Altakar, A. S. (1959). The position of women in Hindu civilization. Delhi: Motilal Banarsidass.
- 19.Chakravarti, U. (2003). Gendering caste through a feminist lens. Calcutta: Stree.
- 20.Forbes, G. (1996). Women in modern India. Cambridge University Press.
- 21.Government of India. (1950/2002). The Constitution of India. Ministry of Law and Justice.
- 22.UNESCO. (2021). When schools shut: Gendered impacts of COVID-19 school closures. UNESCO
- 23.UNESCO. (2019). Leveraging ICT to achieve education 2030. UNESCO
- 24.Ministry of Human Resource Development (MHRD). (2017). SWAYAM: Study Webs of Active-Learning for Young Aspiring Minds. Government of India.
- 25.World Bank. (2025). What works to advance women's digital literacy? A review of good practices and programs. World Bank
- 26.Ministry of Education. (2020). National Education Policy 2020. Government of India.
- 27.NPTEL. (2018). Annual Report 2017-18. National Programme on Technology Enhanced Learning.
- 28.Ministry of Education. (2021). DIKSHA: Digital infrastructure for knowledge sharing. Government of India.
- 29.IGNOU. (2020). Annual Report 2019-20. Indira Gandhi National Open University.
- 30.UGC. (2018). e-PG Pathshala: A Gateway to All PG Courses. University Grants Commission.
- 31.World Bank. (2025). What works to advance women's digital literacy? A review of good practices and programs. Washington, DC: World Bank Group.
- 32.Smitha, H. S., Empowerment of women through digital literacy strategies: New challenges. IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS), 21-23. IOSR Journals.
- 33.M. K. Ganeshan and C. Vethirajan, "Digital Skills to Enhance Women's Empowerment in India," Scopia International Journal for Science, Commerce & Arts, vol. 01, no. 02, 2020.

आदिवासी संस्कृति पर मुख्यधारा संस्कृति का प्रभाव

अभिषेक कुमार मीना

शोधार्थी

हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय

भारत अपनी आजादी के पचहत्तर वर्ष पूरे कर चुका है इस उपलक्ष्य में सरकारी तौर पर स्वतंत्रता के "अमृत महोत्सव" का आयोजन पूरे उत्साह के साथ संपूर्ण भारतवर्ष में किया जा रहा है। एक लोकतांत्रिक राष्ट्र राज्य होने के कारण देश की सभी इकाइयों को जाति, धर्म, वर्ग, वर्ण और नस्ल के तहखानों से बाहर निकल कर सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक/ राजनीतिक और सांस्कृतिक स्तर पर समानता स्वतंत्रता व बंधुत्व की भावना को एंटरटेन करने का पूरा अधिकार है। आज स्वतंत्रता के पचहत्तर वर्षों बाद भी हम देश के एक ऐसे समूह के बारे में बात करने जा रहे हैं जिसे संविधान में अनुसूचित जनजाति के नाम से वर्गीकृत किया गया है। अनुसूचित जनजाति एक संवैधानिक शब्द है जिसके माध्यम से सरकारी योजनाओं और अधिकारों को लक्षित किया जाता है। संविधान निर्माण के समय संविधान सभा में आदिवासी नेता जयपाल सिंह मुंडा ने अनुसूचित जनजाति के समानांतर आदिवासी पद के उपयोग पर जोर दिया। आदिवासी पद के संदर्भ में आदिवासी चिंतक गंगा सहाय मीणा कहते हैं कि अनुसूचित जनजाति केवल आरक्षण या नौकरियों में हिस्सेदारी के संदर्भ में प्रासंगिक हो सकता है आदिवासी एकता और संघर्षों की परंपरा का बोध नहीं करा पाता।

आदिवासी शब्द उस चेतना का प्रतीक है जिसकी मदद से उन्होंने अपने दुख दर्द को समझा और जो उन्हें मुक्ति की राह में आगे बढ़ा रही है। आदिवासी पद में एक आंदोलन धर्मिता है जो जनजाति में नहीं है

भारत के औपनिवेशिक दासता से मुक्ति के संघर्ष में जितनी भागीदारी गैर आदिवासी समाजों की थी उतनी ही भागीदारी इस देश के आदिवासी समुदायों की भी थी। राष्ट्र के सांस्कृतिक रचना में इन आदिवासियों का केवल योगदान ही नहीं अपितु मातृभूमि की रक्षा में इनका सर्वस्व त्याग भी बहुत बड़ा है। अंग्रेजों के शासन के विरुद्ध विद्रोह करके मातृभूमि को दासता से मुक्त करने के लिए बिरसा मुंडा, सिद्धू कानू, तिलका मांझी जैसे आदिवासी वीरों ने अपनी जान दे दी।

औपनिवेशिक दासता से मुक्ति का संघर्ष समूचे भारतवर्ष का था जिसमें देश के हर वर्ग व वर्ण के लोग शामिल थे लेकिन ऐसा क्या हुआ कि देश के अन्य वर्गों ने जितनी तेजी से विकास किया उतनी तेजी से आदिवासी समाज में विकास नहीं हो सका। 2011 की जनगणना के अनुसार देश की कुल आबादी में अनुसूचित जनजातियों का हिस्सा 8.6% यानी 10.45 करोड़ है। अनुसूचित: जनजातियों की आबादी का लगभग 92% हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। यह जनजातियां पूरे देश में बड़े पैमाने पर वन और पहाड़ी इलाकों में फैली हुई हैं संविधान में इन जनजातियों के विकास व संरक्षण के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं। अनुच्छेद 15 [4], 16[4], 275[1], 330, 332, 325, 340, व 342 के साथ साथ अनुसूची 5 व अनुसूची 6 में इनके अधिकारों व हितों को ध्यान में रखते हुए संवैधानिक संरक्षण दिया गया है। लेकिन इतने सारे संवैधानिक प्रावधान होते हुए भी एक आंकड़े के अनुसार पिछले 50 सालों में 2.5 करोड़ लोग विस्थापित हुए जिनमें 90 लाख आदिवासी हैं। विभिन्न किस्म की : आपदाओं, अभाव, अंतर जनजातीय संघर्षों और अदालत के आदेशों की वजह से बताया जा रहा है कि फिलहाल 10 लाख से अधिक लोगों के सिर पर विस्थापन का खतरा मंडरा रहा है वे अपने ही देश में लगातार शरणार्थी बन रहे हैं।

औपनिवेशिक सत्ता की समाप्ति और देश का स्वतंत्र होना आदिवासी समाज के लिए भी उत्साहजनक था। अन्य देशवासियों की तरह: आदिवासियों ने भी सोचा अंग्रेजों के जाने के बाद अबुआ दिमुम, अबुआ राज (हमारा देश हमारा राज) आएगा लेकिन इस देश की संसद और बुद्धिजीवियों के पास वह दृष्टि व संवेदनशील इच्छाशक्ति नहीं थी कि आदिवासियों के हितों को आगे बढ़ाने वाले संवैधानिक प्रावधानों को लागू करते। आजादी के बाद देश की बागडोर जिन हाथों में सौंपी गई वे लोग पूंजीवादी व साम्राज्यवादी संचे में ढले लोग थे। स्वतंत्र भारत का पूरा प्रशासनिक ढांचा औपनिवेशिक संस्कारों और नीतियों से प्रसिद्ध था। उनकी नजरों में यह आदिवासी लोग नंग धड़ंग, अशिक्षित, गंवार, कुपोषित, जंगली और भोले-भाले ही लगे। यही कारण है कि आजादी के 75 वर्षों बाद भी आदिवासी अपने हक अधिकार के लिए उसी तरह संघर्ष कर रहे हैं जैसा संघर्ष अंग्रेजी शासन में करते थे। वर्तमान में आदिवासी समाज जिन क्षेत्रों में निवास करते हैं वे भौगोलिक क्षेत्र खनिज संपदा और प्राकृतिक संसाधनों से पूरे भारत में सबसे अधिक संपन्न है। मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक "झारखंड उड़ीसा, छत्तीसगढ़, बिहार राजस्थान के साथ-साथ पूर्वोत्तर भारत के असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम जैसे राज्य हैं जहाँ सबसे अधिक आदिवासी समाज के लोग रहते हैं। इन राज्यों में कोयला, मैग्नीज, तांबा, जस्ता, बॉक्साइट, युरेनियम व पेट्रोलियम जैसे खनिज उत्पादन के भंडारण हैं। पीआईबी की वार्षिक आर्थिक रिपोर्ट 2022 के अनुसार उड़ीसा खनिज उत्पादन में प्रथम स्थान पर है। उसके बाद छत्तीसगढ़, केरल, राजस्थान, झारखंड का नाम आता है।

वही छत्तीसगढ़ राज्य कोयला उत्पादन में प्रथम स्थान पर है। वित्तीय वर्ष 2020-21 में छत्तीसगढ़ राज्य का लगभग 27% राजस्व खनिजों से प्राप्त हुआ है। कोयला उत्पादन में अग्रणी होने के कारण छत्तीसगढ़ बिजली उत्पादन का प्रमुख केंद्र है। भारत का पठार क्षेत्र उत्तर पूर्वी भारत जिसमें छोटानागपुर, उड़ीसा का पठार, छत्तीसगढ़ के क्षेत्र शामिल है। लौह अयस्क, कोयला, बक्साइट व अभ्रक सहित अन्य खनिजों की एक विस्तृत श्रृंखला है। उत्तर पश्चिम में राजस्थान के धारवाड़ शैलो में कापर व जिंक की बहुलता है। राजस्थान बलुआ पत्थर, ग्रेनाइट, संगमरमर के साथ-साथ जिप्सम व अपने नमक के विशाल भंडार के लिए भी प्रसिद्ध है। मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़ हीरा उत्पादन में शीर्ष राज्य हैं। सबसे अधिक चांदी का उत्पादक राज्य राजस्थान है। मैग्नीज व तांबा में मध्य प्रदेश अग्रणी है। असम का डिब्रूगढ़ पेट्रोलियम पदार्थ का प्रमुख केंद्र है।

इतने सारे खनिज संपदा से संपन्न होने के बाद भी यह राज्य स्वास्थ्य, शिक्षा और गरीबी के दर्द से कराह रहे हैं। विस्थापन और बेरोजगारी इन राज्यों की सबसे बड़ी समस्या है। राज्य स्वास्थ्य सूचकांक 2019-20 की रिपोर्ट में सबसे नीचे के पायदान पर उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और राजस्थान राज्य शामिल है [दसरी और बहुआयामी गरीबी सूचकांक के अनुसार बिहार, झारखंड, उत्तरप्रदेश देश के सबसे गरीब राज्यों के रूप में सामने आए हैं। मानव विकास सूचकांक जो स्वास्थ्य शिक्षा व आय को ध्यान में रखकर जारी किया जाता है, में सबसे खराब स्थिति बिहार : उत्तर प्रदेश, झारखंड व मध्य

प्रदेश की है। केरल पहले स्थान पर है। स्कूली शिक्षा गुणवत्ता सूचकांक जो नीति आयोग जारी करता है, में सबसे खराब स्थिति उत्तर प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, पंजाब, बिहार, झारखंड व मध्य प्रदेश है। यहां तक की प्रति व्यक्ति आय के मामले में भी बिहार व उत्तर प्रदेश सबसे निचले पायदान पर हैं।

दुनिया की छठी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था का दर्जा भारत ने हासिल तो कर लिया है लेकिन आज भी देश का एक वर्ग ऐसा है जो हाशिए पर है। इस वर्ग के अंतर्गत वे आदिवासी आते हैं जो सुदूर इलाकों में अपना जीवन यापन कर रहे हैं और अनेक समस्याओं को झेल रहे हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार आदिवासी समाज का 80% से अधिक श्रमबत प्राथमिक क्षेत्र में कार्यरत है। उनकी साक्षरता दर औसत साक्षरता दर से 14% कम है। भारत की औसत जनसंख्या वृद्धि दर 17.7 की तुलना में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या वृद्धि दर 23.7% की दर से बढ़ रही। हालांकि लिंगानुपात के मामले में अनुसूचित जनजातियों की स्थिति सामान्य लिंगानुपात से बेहतर है। ऐसा नहीं है कि आदिवासी बहुलता वाले राज्य केवल खनिज संपदा से ही संपन्न नहीं है बल्कि प्राकृतिक संपदा से भी संपन्न है। 1865 के पूर्व भारत के आदिवासी समाज के अधीन देश के लगभग आधे जंगल, जमीन का स्वामित्व था जो 1927 के भारतीय वन अधिनियम के लागू होते होते केवल 35% रह गया वनों के संरक्षण के नाम पर आदिवासियों को जंगलों से भगाया गया लेकिन 1988 में राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार देश में कम से कम 35% भौगोलिक क्षेत्रफल पर वन होना चाहिए था परंतु 2021 के भारत वन सर्वेक्षण के अनुसार केवल 24.62 क्षेत्र पर ही उपस्थित हैं उसमें भी सबसे अधिक वन उन क्षेत्र में है जहां आदिवासी जनसंख्या अधिक है।* ऊपर दिए गए आंकड़ों के विश्लेषण से एक बात उभरकर सामने आती है कि खनिज व प्राकृतिक संसाधनों से संपन्न होने के बाद भी वे राज्य जहां आदिवासी समाज अधिक संख्या में है शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, कृपोषण और विस्थापन जैसी समस्याओं से तुलनात्मक रूप से अधिक पीड़ित है। इन तथ्यों के मद्देनजर मेरा ध्यान आजादी के पूर्व भारत की दशा की ओर जाता है। आज स्वतंत्र भारत की सरकार एवं प्रशासनिक महकमा पूंजीपतियों के सहयोग से इन प्रदेशों के साथ ठीक उसी प्रकार का व्यवहार कर रही है जैसा व्यवहार अंग्रेजों ने परतंत्र भारत के साथ किया था

अंग्रेजों के आने से पहले भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता था ब्रिटेन की औद्योगिक क्रांति ने उसकी अर्थव्यवस्था तथा भारत के साथ उसके आर्थिक संबंधों को पूरी तरह बदल कर रख दिया इसके कारण तीव्र आर्थिक विकास हुआ जो ब्रिटेन तथा यूरोप, सोवियत संघ, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया और जापान के उच्च जीवन स्तर का आधार है। इस के संदर्भ में जो सुलीवन की टिप्पणी ध्यान देने लायक है "हमारी प्रणाली बहुत कुछ स्पेन की तरह काम करती है जो गंगा के तटों से सभी अच्छी चीजें सोकर टेम्स के तटों पर निचोड़ छोड़ देती है।" आजादी के बाद औपनिवेशिक शासकों द्वारा दिए गए प्रशिक्षण, ज्ञान व अनुभव से प्रभावित नया शासक वर्ग आदिवासियों के साथ भी वही औपनिवेशिक रवैया जारी रखे रहा विकास की परियोजनाओं के नाम पर उनके जंगलों को खाली कराया जाता रहा। बड़े-बड़े डैम, नदी घाटी परियोजनाओं तथा कल कारखाने, अभ्यारण आदि बनाने के लिए आदिवासियों की जमीनें (जो उनका घर था) अधिग्रहित की जाने लगी। झूठे वादों और मुआवजे के नाम पर उनको ठगा गया। कल तक: जो जमीनों के मालिक थे अब वे नौकर बना दिए गए। चुनी हुई सरकारों का रवैया भी साम्राज्यवादी ब्रिटिश शासकों की तरह रहा। आदिवासी बहुल इलाकों की जमीन हड़पने के लिए निर्वाचित सरकार व पूंजीपतियों ने

मिलकर ऐसी आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक स्थितियां पैदा की जिसमें संसाधनों को हड़पने में सुविधा हो। आदिवासी अपने संरक्षण के लिए न्यायालयों की ओर गए लेकिन उन्हें निराशा ही हाथ लगी। यही कारण है कि आजादी के कुछ सालों बाद आदिवासी समाज का मोहमंग हो गया। 70 के दशक के आते-आते यह मोह भंग एक विद्रोह में बदल गया और 1967 में नक्सलवादी की घटना घटित हुई। 1975 में आपातकाल भी लागू हुआ। इसी दौरान कई आदिवासी विस्थापन विरोधी आंदोलनों में जेल, जंगल और जमीन को लेकर विद्रोह पूरे उत्तर भारत और पूर्व भारत में फैल गया। उसको दबाने के लिए सरकारों ने सलवा जूडूम से लेकर ग्रीन हंट जैसी खूनी नरसंहार करके आदिवासी विद्रोह को दबा दिया। इसी उथल-पुथल के बीच हिंदी के प्रमुख कवि धूमिल लिखते हैं - एक ही संविधान के नीचे भूख से रिरियती हथेली का नाम दया है और भूख में तनी हुई मुट्ठी का नाम नक्सलवादी है। 60 के दशक के उदारवादी नीतियों ने नव साम्राज्यवादी युग के रास्ते को वैश्विक स्तर पर खोल दिया। इन नीतियों ने आदिवासी अस्मिता व अस्तित्व के ऊपर बड़े सवाल खड़े कर दिए। कथित विकास के नाम पर केवल जंगलों को ही नहीं उजाड़ा जा रहा है बल्कि पूरी आदिवासी सभ्यता व संस्कृति को कुचला जा रहा है। आजादी बाद के नीति निर्धारकों ने कभी यह समझा ही नहीं कि आदिवासी समाज का जंगलों से संबंध सहजीवी का है। इनके लिए कानून तो बनाए गए लेकिन कभी उनका पालन ईमानदारी से नहीं किया गया। सरकारें आत्मनिर्भर होने का और बनने का दावा हर दिन कर रही हैं लेकिन आदिवासी इलाकों में सड़कों, इमारतों, कारखानों, माल जैसी तथाकथित विकास यह परियोजनाओं के निर्माण की जिम्मेदारी किसी वैश्विक कंपनी को दे देती हैं। संवैधानिक संरक्षण होने के बाद भी इस देश की संसद ने आदिवासियों के साथ सामंती व्यवहार बनाए रखा है। आदिवासी समाज को असभ्य, जंगली और पिछड़ा समझने का उनका पौराणिक औपनिवेशिक [ब्राह्मणवादी] इष्टिकोण आजादी के बाद खुलकर सामने आया है। आदिवासियों के विस्थापन व विनाश के नींव पर खड़ी विकास की यात्रा ने इस देश के प्रथम: नागरिक के पूरी संस्कृति और सभ्यता को उखाड़ फेंका है। प्रकृति संरक्षण और बड़े-बड़े राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय आयोजनों की आड़ में पूरी पृथ्वी के आदिवासी समुदायों को ठगा जा रहा है। एयरकंडीशन कमरों में बैठे लोग अपने घरों की छतों, बालकनी में गमले लगाकर एक ओर पर्यावरण बचाने की मुहिम चला रहे हैं तो वहीं दूसरी ओर संसद में जंगलों को काटकर तथाकथित विकास की नई नई परियोजनाओं के लिए नीतियां बना रहे हैं। यही कारण है कि वह राज्य जो प्रकृति व खनिज संपदा से संपन्न है भुखमरी और गरीबी की स्थिति में है और इन राज्यों से संसाधनों का दोहन कर महानगरों की रौनक बढ़ाई जा रही है।

वनोपज का अधिकार, जंगल पर, जमीन के अंदर खनिजों के अधिकारों आदि मुद्दों को जबरन समाधान के बदले विवादास्पद बनाया गया है और अधिकांश नियम कानून को व्यवसाय के हितों के अनुकूल बनाने की प्रक्रिया चलाई जाती है जिसके कारण आदिवासी भारत में: कहीं न कहीं आंदोलनरत रहते हैं।

एक लोकतांत्रिक राष्ट्र राज्य होने के नाते इस देश के सांसद और बुद्धिजीवियों की नैतिक जिम्मेदारी है कि देश के इतनी बड़ी आबादी के अधिकारों और हितों को ध्यान में रखकर कानून बनाएं। अगर कारखाने, बांध व डैम बनाने जरूरी है तो यह भी जरूरी है कि वहां से विस्थापित आदिवासी लोगों के शिक्षा, स्वास्थ्य व जीवन यापन के लिए उचित मूलभूत आवश्यकताओं को मुहैया कराया जाए। विस्थापन और अवैध खनन से आदिवासियों की जमीनों को बचाना हम सब का

सामाहिक दायित्व है ,क्योंकि आदिवासियों का पर्यावरण से सहजीवी संबंध है जो पूरी मानवता व सृष्टि के लिए हितकर है। हाल के उत्तराखंड के चमोली जिले के जोशीमठ में होने वाली घटनाओं को देखकर हमें सीख लेने की जरूरत है। जितना जरूरी प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण है उतना ही जरूरी उन प्राकृतिक स्थलों पर रहने वाले लोगों के संरक्षण की भी जरूरत है क्योंकि ये प्राकृतिक स्थल उन्हीं लोगों की बंदोबस्त सुरक्षित है।

संदर्भ -

1. गंगा सहाय मीणा, आदिवासी चिंतन की भूमिका, पृष्ठ संख्या(22), अनन्य प्रकाशन, दिल्ली 2019
2. रमणिका गुप्ता, आदिवासी कौन, पृष्ठ संख्या (25) रमणिका फाउंडेशन, 2018
3. कुरुक्षेत्र/पत्रिका) पृष्ठ संख्या 5, सितंबर 2022 सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
4. वागर्थ (पत्रिका) अप्रैल 2022 पृष्ठ संख्या 5 भारतीय ज्ञान पीठ, नई दिल्ली
5. विपिन चंद्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, 2018
6. धूमिल, सांसद से सड़क तक, पृष्ठ संख्या (127), राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली जनगणना संबंधी जानकारी india.gov.in भारत सरकार के राष्ट्रीय पोर्टल से ली गई है। अन्य आंकड़ों संबंधी जानकारी pib.gov.in भारत सरकार के राष्ट्रीय पोर्टल से ली गई है।

A potential medical strategy treating hypothyroidism is the combination of herbal medicine and conventional medical therapies

Ashutosh Pathak^{1*}, Priya Rai², Nilesh Kumar Upadhyay³

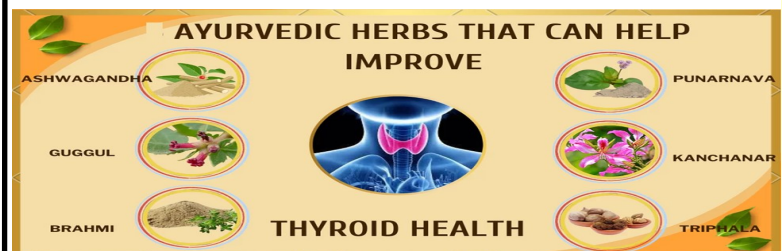
¹Institute of Pharmacy, Dr. Shakuntala Misra National Rehabilitation University, Mohan Rd, Sarosa Bharosa, Lucknow, Uttar Pradesh India – 226017.

²Dr M. C. Saxena College of Pharmacy, 171 Barawankala, Mall Road, IIM Road, Dubagga, Lucknow, Uttar Pradesh 226101

³Shri Vishwanath college of pharmacy, Kalan,

Abstract-Thyroid problems are among the most prevalent and difficult endocrine illnesses that we face globally. Goitre/iodine deficiency, Hashimoto's thyroiditis, hypothyroidism, hyperthyroidism, also thyroid malignancy are among the major thyroid conditions because of its varied clinical appearance, hypothyroidism is possibly the most difficult of them to diagnose. A lack of the thyroid hormones triiodothyronine (T3) and thyroxine (T4) in the body is the cause of hypothyroidism. The condition known as mild or subclinical hypothyroidism occurs when blood thyroid-stimulating hormone (TSH) stages are slightly high but peripheral thyroid hormone equals remain outside the normal range. There is currently little information on the through investigational, pharmacologic, otherwise preclinical forms of proof that using herbal and Ayurvedic medications to treat hypothyroidism is effective. This manuscript's scope includes the effectiveness of herbal medications or traditional Ayurvedic treatments in reducing the pathophysiological symptoms of hypothyroidism.

Graphical Abstract



Keywords: hypothyroidism, thyrotropin, triiodothyronine T3, thyroxine T4, thyroid diseases.

Introduction

Hypothyroidism, which is caused by low thyroid hormone levels. Nearby remain two core categories of hypothyroidism: primary along with secondary (occasionally acknowledged as per essential) hypothyroidism. Thyroid hormone production is insufficient in primary hypothyroidism[1]. Hypothyroidism is caused by faulty pituitary or hypothalamic activity,

but the less frequent secondary or central hypothyroidism happens when the thyroid gland works correctly. Morbidity and mortality are increased when hypothyroidism is left untreated [2]. Lack of iodine in the diet is the most prevalent cause of hypothyroidism worldwide, but in the United States, the most common cause is autoimmune thyroid disease, often known as Hashimoto thyroiditis. Hypothyroidism can manifest in a variety of ways, ranging from an asymptomatic patient whose illness is only detected by regular blood work to the severe manifestation of myxoedema coma. Treatment with herbs has gained attention recently as a possible supplement to traditional treatments for hyperthyroidism. Botanicals like *Withania somniferous* (ashwagandha), *Commiphora mukul* (guggul), and *Fucus vesiculosus* (bladderwrack) have long been used in conventional practices like Ayurveda, which is based on Traditional Chinese Medicine (TCM), and natural healthcare to promote thyroid health and improve metabolic function. Although early research points to potential advantages of several herbs in regulating the function of the thyroid, concerns about their effectiveness, safety, and modes of action when combined with conventional pharmaceutical therapies still exist [3-5].

Anatomy -In the anterior neck, directly under the laryngeal prominence (Adam's apple), lies the thyroid gland, a ductless alveolar gland. With two lobes around the trachea and joined in the centre by an isthmus, it resembles a butterfly. Typically, the thyroid gland cannot be felt. Its lymphatic system is abundant, and its superior and inferior thyroid arteries supply it with blood. Its superior, middle, and inferior thyroid veins drain it [6].

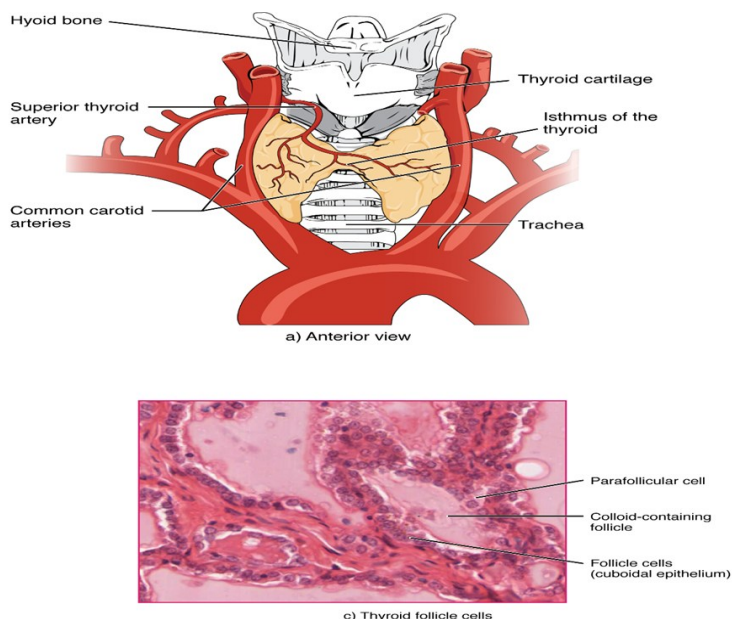


Fig. 1 The gland that houses the thyroid may be found in the neck, where it encircles the trachea.

The pituitary gland's trophic hormone, also known as thyroid-stimulating hormone (TSH), stimulates the production and release of thyroid hormone. TSH production is regulated by the thyroid hormones' negative feedback, which alters the pituitary's reaction to the hypothalamic hormone thyrotrophin-releasing hormone (TRH) [7]. T3, which is generated when iodothyronine deiodinase acts on T4 in the anterior pituitary's thyrotrope cells, is the main mediator of this feedback. Dopamine, somatostatin, and glucocorticoids all suppress the release of TSH. This may have some relevance to the thyroid hormone disruptions that can occur in non-thyroidal sickness, although its physiological importance is unknown (see p. 160). As a result of the feedback processes, thyroid stimulating hormone concentrations in plasma are kept constant [8].

Etiology -Worldwide, the most frequent cause of hypothyroidism is iodine deficiency. However, the most prevalent aetiology in iodine-sufficient nations, such as the USA and Australia, is autoimmune thyroid illnesses (the most common of these being Hashimoto thyroiditis). There is a chance that autoimmune thyroid illness is inherited. Similar to many other autoimmune diseases, it is more prone to coexist with diseases of other organ systems [9]. The degree to which environmental variables contribute to the development of autoimmune thyroid illnesses is unknown, however they may include infections, excessive iodine consumption, or adverse drug reactions [10].

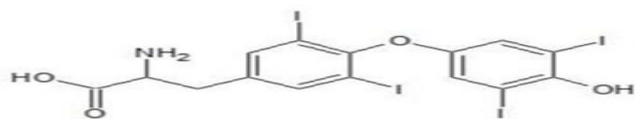
Methods and Materials - An evidence-based study was created by compiling research articles from a variety of offline and online peer-reviewed journals and databases, including PubMed, MedlinePlus, Sodhganga, Google Scholar, and others, that contained data on the pharmacological activities and preclinical efficacy of chemically induced hypothyroidism in mammals. The Charaka Samhita and Sushruta Samhita, two traditional Ayurvedic classics, were also examined in order to get insightful inferences from the classical data [11-15].

Traditional Ayurvedic treatment of hypothyroidism

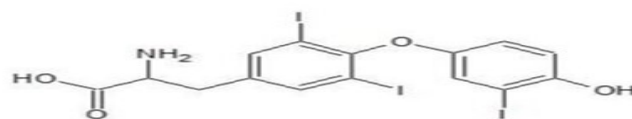
According to Ayurveda, the thyroid gland is a Lymphatic channel (rasabaha srotas). A comprehensive approach to the mind, behaviour, body, and environment is used in the treatment. In order to balance tridoshas and transition to rasayana (rejuvenative) therapy, its primary goal is to unclog the body's obstructed channels before beginning any oral therapy⁸. One of the fundamental principles, known as "Saamanya Vishesh Siddhanta," states that similar conditions exacerbate the disease condition, while dissimilar conditions alleviate it. This treatment methodology aids in the reduction of kapha through the use of kapha-inhibiting drugs, the elevation of

dhatugata (tissue level), or pitta, through the use of pitta-enhancing drugs, and the reduction of meda (fat) through the use of meda Neutralising drugs. All of these techniques aid in the restoration of the body's equilibrium and metabolic activity, which were changed when kapha blocked the channels[16].

Thyroid Hormones

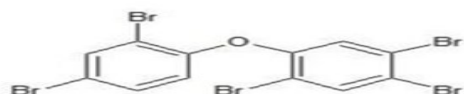


Thyroxine (T4)

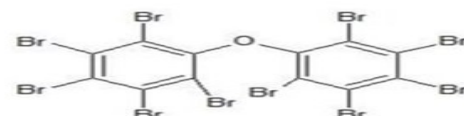


Triiodothyronine (T3)

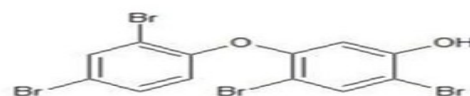
PBDEs and a PBDE metabolite



2,2',4,4',5-pentabromodiphenyl ether (BDE-99)



decabromodiphenyl ether (BDE-209)



3-hydroxy-2,2',4,4'-tetrabromodiphenyl ether (3-OH-BDE-47)

Starting through the thyroid gland's absorption of iodide and ending with the iodination of tyrosine residues in the protein thyroglobulin (Fig. 2)

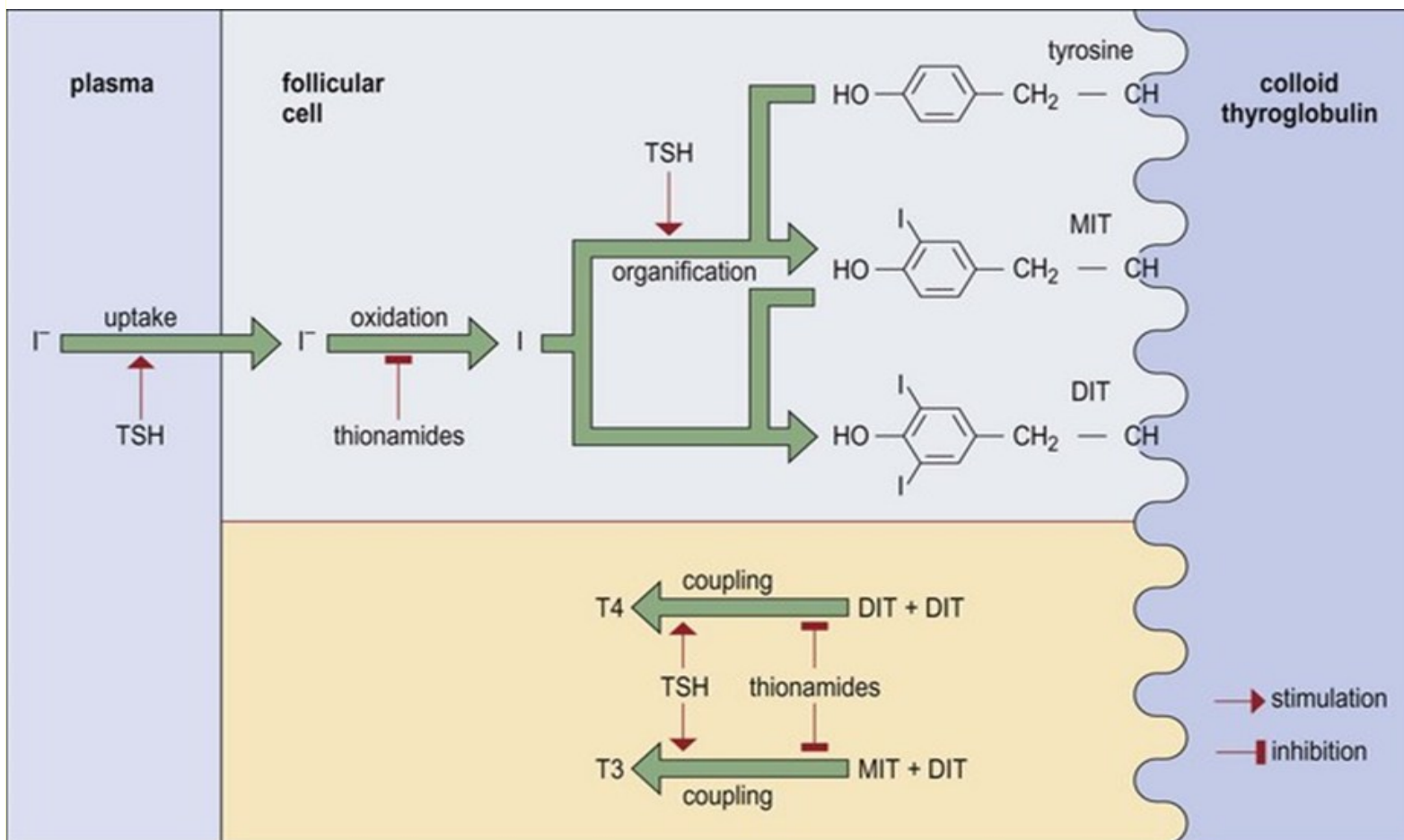


Fig. 3 production of hormones produced by the thyroid. Tyrosine amino acid residues, which are an essential component of the thyroglobulin polypeptide, are involved in the hydrogenation along with condensing processes.

S. N.	Botanical Name/Family	Common Name	Used part	Action	Pharmacological Activity
1	<i>Nigella sativa</i> L. Ranunculaceae	Kalonji	Seeds	Thyroid stimulating hormone (TSH) and antithyroid peroxidase (anti-TPO) antibody levels in the blood dropped as serum T3 levels rose ¹⁰ .	Antioxidant Activity, Antimicrobial/Antibacterial Activity, Antiviral Activity, Antiparasitic, Anticancer Activity, Anti-Inflammatory and Immunomodulatory Activity, Cardioprotective and Antihypertensive Activity, Antidiabetic Activity.
2	<i>Morus alba</i> Moraceae	Shahtoot	Leaf	It cured goitre.	Analgesic, Anthelmintic, Antibacterial, Anti-Rheumatic, Diuretic, Hypotensive, Hypoglycaemia, Purgative, Restorative, Sedative Tonic, Blood Stimulant.
3	<i>Bauhinia purpurea</i> Fabaceae	Kaniar	Bark	It reduced cholesterol levels and increased thyroid hormone levels.	cardiac activity, antifungal, wound healing, antidiabetic, antiulcer, antioxidant, antinociceptive, hepatoprotective, nephroprotective, antidiarrhoeal, anti-inflammatory, antipyretic, analgesic, antimalarial, gastro protective and cytoprotective activity.
4	<i>Bacopa monnieri</i> Scrophulariaceae	Brahmi	Whole plant	It increased T3 and T4, decreased oxidative stress, and enhanced focus and memory.	Antibacterial, Anti-Fungal, Anti-Cancer, Anti-Oxidant, Anti-Inflammatory, Antihyperglycemic, Anti-Depressant, Anti-Epileptic, Memory Enhancer, Anti-Ulcer, Hepatoprotective, Anti-Hypertensive.
5	<i>Commiphora mukul</i> Burseraceae	Guggulu	Oleorasin	It increased the T3 and T4 ratios and enhanced thyroid histology.	Arthritis, Anti-hyper lipidemic, Anti-diabetic, Anti-helminthic activity, Anti-neoplastic activity.
6	<i>Withania somnifera</i> Solanaceae	Ashwagandha	Root	It reduced oxidative stress, increased thyroid hormone levels, and decreased cortisol.	Antimicrobial and antifungal activities, Pesticidal and larvicidal activities, Anti-inflammatory, cytotoxic activities, hepatoprotective activities, Immunomodulatory activity, Cardioprotective activity.
7	<i>Moringa oleifera</i> Moringaceae	Shigru	Roots, seeds, leaf	Thyroid hormone levels were elevated.	Anti-cancer Activity, Anti-diabetic activities, Cardioprotective Activity, Neuroprotective Activity, Immunomodulatory Activity, Hepatoprotective Activity, Anti-hypertensive Activity, Anti-Asthmatic Activity
8	<i>Achyranthes aspera</i> Amaranthaceae	Apamarga	Whole plant	It decreased oxidative stress and increased glucose and thyroid hormones.	Anti-inflammatory, Antioxidant, Antimicrobial Activity, Antidiabetic Effects, Analgesic Properties, Hepatoprotective Activity
9	<i>Bauhinia variegata</i> Fabaceae	Kachanara	Bark	It improved thyroid histology, lowered cholesterol, raised blood thyroid hormone levels, and decreased neck oedema.	Anticancer, antioxidant, hypolipidemic, antimicrobial, anti-inflammatory, nephroprotective, antiulcer, immunomodulating, wound healing effect.
10	<i>Mangifera indica</i> Anacardiaceae	Mango	Fruit peel	It decreased oxidative stress and increased thyroid hormone levels.	antibacterial, anti-tumours, antispasmodic, antipyretic, antidiarrheal, antiallergic, immunomodulation, hypolipidemic, anti-microbial, hepatoprotective, gastroprotective.

Medicinal Plants for Treatment of Hypothyroidism- Gotu Kola (*Centella asiatica*) The traditional Chinese medicinal plant, *Centella asiatica*, commonly known as *Centella asiatica* (L.) or Gotu kola, is used to cure a range of diseases in China and Southeast Asia. The active components of the plant have been the subject of several animal and cell investigations. It includes a number of pentacyclic triterpenoids, such as Asiatic side, brahmoside, and madecassic acid, as well as additional compounds including centellose, centelloside, and madecassoside. Triterpenes, primarily asiatic acid, Asiatic side, madecassoside, and madecassic acid, are the major chemical components which gives pharmacological effect [23].

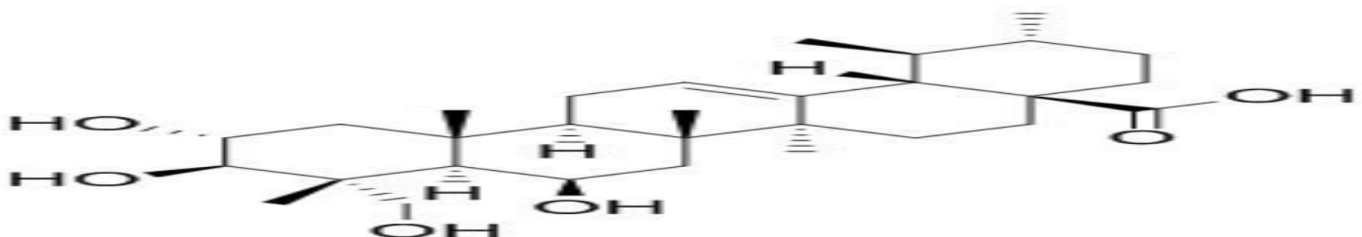


Fig. 4 Chemical Structure of Madecassic acid

The gotu kola leaf is widely used to treat hypothyroidism. Asiatic side, asiatic acid, Brahmo side, and brahmic acid, sometimes known as madecassoside acid (Figure 7), are all found in it. It's more likely that the plant has the ability in increasing synthesis of T4. Also, it is utilized to boost energy and stamina by regulating the neurological system. As a result of the herbs' energizing action, T4 synthesis is enhanced or stimulated. The tincture of gotu leaf is commonly used to treat hypothyroidism [24].

Ashwagandha (*Withania Somnifera*)-Ashwagandha, often known as Indian ginseng or winter cherry, is a saponin glycoside found in the Solanaceae family of plants. Pharmacological research has shown that ashwagandha's plant preparation possesses anti-inflammatory, antioxidant, anticancer, anxiolytic, and immunomodulatory properties. It contains alkaloids, saponin and steroidal compounds, all of those are necessary for different pathways of hormone to function properly. These chemical components aid in the conversion of T4 to T3 and hence promote T4 hormone synthesis. According to a study, Ashwagandha extract has the ability to increase thyroid activity as well as tissue ant peroxidation activity. Ashwagandha (*Withania somnifera*) is an adaptogen plant that is said to help prevent and treat stress-related symptoms. Adults with mild cognitive impairment benefit from the use of ashwagandha. Supplementing with Ashwagandha has been demonstrated to be safe and beneficial to cortisol levels, cognitive abilities, and self-reported stress, anxiety, sadness, and food cravings [25].

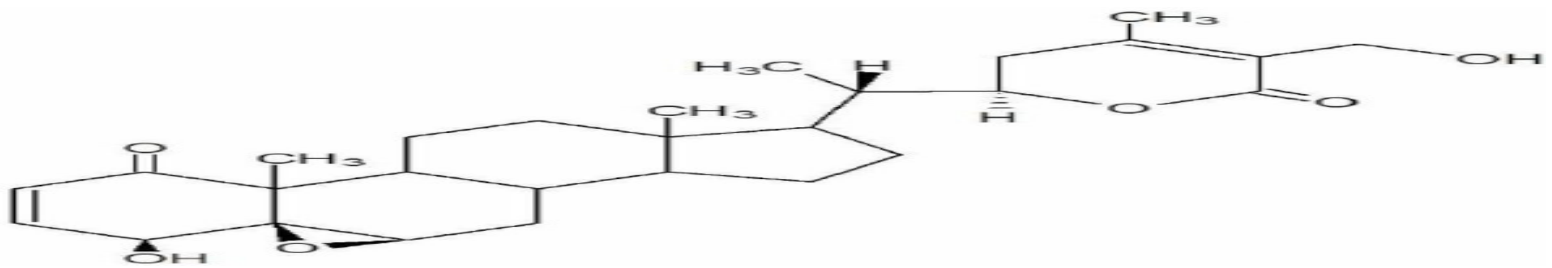
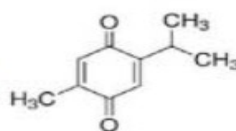
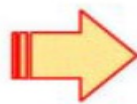


Fig.5 Chemical structure of warfarin

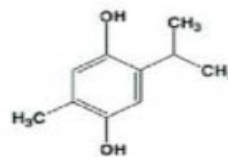
Black Cumin (*Nigella sativa L*)- *Nigella sativa* also known as black cumin is from family of Ranunculaceae, is an annual herb with a variety of medicinal qualities. The constituent of this plant which is most prevalent is the volatile oil of *Nigella sativa* (N. sativa) seeds is thymoquinone (TQ), that is also the constituent to which most of the herb's characteristics are attributed. Black seed and TQ have been found to have a variety of beneficial effects in the treatment of various metabolic syndrome, inflammatory and auto-immune disorders in patients. Because of the many benefits of this herbal medicine, its negative effects appear to be minor. As a result, it can be used in clinical trials. Some other effects like its hypolipidemic and hypoglycaemics effects, is studied and are understood to allow for clinical trials in case of drug developments. In case of thyroid disorder, the impact of NS in a recent study stated that black seeds oil was found to have antioxidant properties, reducing oxidative stress and thyroid follicular damage induced by medications like propylthiouracil (PTU). Another study found that NS oil raises T3, T4, LH, and oestrogen levels [26].



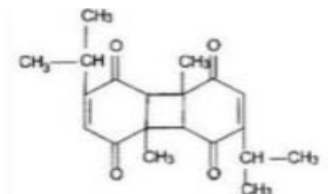
Nigella sativa



Thymoquinone



Thymohydroquinone (THQ)



Dithymoquinone (DTQ)

Main bioactive compounds with chemical structure

Future Prospect-The subject of how crucial it is to treat subclinical hypothyroidism has set off a series of endless discussions. It is evident that hypothyroidism has influenced various key cardiovascular risk variables as high blood pressure, cholesterol, and coagulability along with various health problems. It is central of controlling the physiological and pathophysiological processes of our body. Therefore, treatment of hypothyroidism is essential for improving thyroid function in human. For treatment purpose, application of medicinal plants has proven to be effective with less adverse effect. It improves hypothyroid status and decreases serum TSH concentrations along with improvement

of cholesterol profile. Moreover, there are other plants with medicinal properties which can also be used in case of hypothyroidism. However, treatment with thyroxin replacement therapy with levothyroxine is the first choice for treatment. But this is a lifelong process with limitations. So, application of medicinal plants can be in addition to disease-specific drugs, a useful herbal supplement. Therefore, for its popular usage, it's high time to step up scientific research into the mechanisms of action of these medicinal plants evidently.

Conclusion -Herbal medication therapy presents a promising adjunctive strategy for the treatment of hypothyroidism, especially in mild or subclinical instances, or as a supportive measure in conjunction with traditional therapies. Herbs with the ability to modulate thyroid function and alleviate symptoms include guggul, bacopa, and ashwagandha. However, to guarantee safety and efficacy, customised therapy and medical monitoring are necessary due to the intricacy of thyroid problems. To confirm these plants' medicinal potential and provide standardised treatment procedures, more clinical research is required. Since herbal remedies are natural and have the ability to promote thyroid function, they have become more and more popular as complementary and alternative therapies for treating hypothyroidism. Numerous herbs include adaptogenic, anti-inflammatory, and thyroid-stimulating qualities that can have a beneficial effect on the endocrine system.

References

- Javidi N, Khorasani ZM, Salari R, Niroumand S, Yousefi M. Achievements in hypothyroidism treatment with herbal medicine: a systematic review of randomized controlled trials. *Current drug discovery technologies*. 2023 Sep 1;20(5):1-9.
- Luo J, Zhou L, Sun A, Yang H, Zhang P, Liu K, Yu X, Lin Y, Huang Y, Han L. Herbal medicine for Hashimoto's thyroiditis: A systematic review and network meta-analysis. *Journal of ethnopharmacology*. 2024 Apr 6; 323:117663.
- Panthi S, Gao T. Diagnosis and management of primary hypothyroidism in Traditional Chinese medicine (TCM) and Traditional Indian Medicine (Ayurveda). *Int J Clin Endocrinol Metab* 1 (1): 009. 2015;12(009).
- Ghaffari-Saravi F, Jokar A. Herbal remedies for hypothyroidism: A systematic review and meta-analysis. *Caspian Journal of Internal Medicine*. 2024 Oct 19;16(1):1.
- Liao HH, Livneh H, Huang HJ, Lu MC, Lai NS, Tsai TY. Risk of Hypothyroidism in Females Who Received Chinese Herbal Medicine for Treatment of Rheumatoid Arthritis: A Matched Nested Case-Control Study. *Journal of Herbal Medicine*. 2025 Feb 1;49:100976.
- Lee MH, Choi YK. Systemic reviews of domestic experimental studies of herbal medicines used for hypothyroidism since 2000. *The Journal of Internal Korean Medicine*. 2015 Dec 30;36(4):570-81.
- Joshi AM, Yadav RA, Shrestha S, Shrestha J. Efficacy of Ayurvedic herbal formulation and Ayurvedic herbo-mineral formulation in hypothyroidism patients. *Journal of Ayurvedic and Herbal Medicine*. 2021;7(4):237-46.
- Rafieian-Kopaei M. Thyroid diseases: Pathophysiology and new hopes in treatment with medicinal plants and natural antioxidants. *International Journal of Green Pharmacy (IJGP)*. 2018 Nov 6;12(03).
- Mallik D. Traditional Chinese Medicine approach to hypothyroidism. *Int J Complement Alt Med*. 2017;5(1):00142.
- Chunxiang T. How to give TCM differential treatment for hypothyroidism?. *Journal of Traditional Chinese Medicine*. 2008 Sep 1;28(3):231-2.
- Tao YX, Li Q, Li CC, Huo JJ. Efficacy of Chinese medicine in the adjuvant treatment of Hashimoto's thyroiditis with hypothyroidism: a systematic review and meta-analysis. *Biotechnology and Genetic Engineering Reviews*. 2024 Jan 2;40(1):492-518.
- Eram F. Effective Management of Subclinical Hypothyroidism Using Herbal Medicines and Lifestyle Modifications: A Case Report. *European Journal of Integrative Medicine*. 2025 Apr 24:102486.
- Li N, Li M, Xiu L, Liao W, Ren Y, Liu H, Chen S, Chen F, Yu X, Fan A, Huo M. Haizao Yuhuo decoctions including three species of glycyrrhiza protected against propylthiouracil-induced goiter with hypothyroidism in rats via the AMPK/mTOR pathway. *Journal of Ethnopharmacology*. 2022 Oct 5;296:115443.
- Alam MA, Quamri MA, Sofi G, Tarique BM. Understanding hypothyroidism in Unani medicine. *Journal of integrative medicine*. 2019 Nov 1;17(6):387-91.
- Dureja H, Murthy N, Wich P, Dua K, editors. *Drug delivery systems for metabolic disorders*. Academic Press; 2022 Aug 26.
- Pathak Ashutosh, Singh Yadav Neha Rai Priya, Tripathi Vibha, Rao Divya, Kumar Pawan, An Examination about the Potential Health Benefits of Beetroot: Pink Wonder of Nature. *J. Sci. Innov. Nat. Earth [Internet]*. 2025 Sep. 20 [cited 2025 Sep. 30];5(3):19-24. Available from: <https://jsiane.com/index.php/files/article/view/411>
- Sugat Shukla, Arun Kumar, Ashutosh Pathak4*, Akhalesh Kumar, Kishu Tripathi, Kuldeep Singh, Desh Deepak Pandey, Green Synthesis of Benzimidazole Derivatives: A Sustainable Approach Towards Potent Antimicrobial Agents, *JCHR* (2025) 15(4), 2634-2649 ISSN:22516727. <https://jchr.org/index.php/JCHR/article/view/9618/5358>
- Ashutosh Pathak1*, Neetu Soni2, Bharat Mishra3, Pawan Kumar4, Sugat Shukla5, Salman Ahmad Khan6, Desh Deepak Pandey7, Sanjay Kumar Yadav8, Ashutosh Yadav9, Aadaya Raj Pandey10 Microwave Assisted Synthesis, Design Including Docking of Benzimidazole Substituted 4-Thiazolidinone Derivatives, *Ashutosh Pathak/Afr.J.Bio.Sc.* 6(13) (2024) 1318-1336. doi: 10.33472/AFJBS.6.13.2024.1318-1336. <https://doi.org/10.33472/AFJBS.6.13.2024.1318-1336>
- Ashutosh Pathak, Annie Gupta, Arti Gautam, Shiv Kumar, Tanveer Naved, Neetu Soni, synthesis, characterisation, in silico molecular docking studies and in vivo anti-inflammatory activity of substituted 4- thiazolidinone derivatives. *Acta Biomed* 2023; Vol. 94, N. 1: ISSN: 0392-4203 | eISSN: 2531-6745 © Mattioli 1885
- Ashutosh Pathak, P. malairajam, Parmesh kumar dwivedi, and Devdutt chaturvedi, Eco-Friendly Novel Synthesis, Characterization of 2,3-Disubstituted 4-Thiazolidinone Derivatives and their Antimicrobial Evaluations, *Asian Journal of Chemistry; Vol. 33, No. 11 (2021), 2685-2692*.<https://doi.org/10.14233/ajchem.2021.23399>
- Ashutosh Pathak, A Complete Examination of Omega-3 Full of Fat Acids: Their Origin, Activities, Well Being Advantages. *Journal of Science Innovations and Nature of Earth*, Vol. 5, Issue 1, 2025, Page 05-08 ISSN (Online) 2583-2093. DOI: <https://doi.org/10.59436/jsiane.292.2583-2093>
- Ashutosh Pathak, Neetu Soni, Salman Ahmad Khan, Desh Deepak Pandey, Aabhash shukla, Ayush Tiwari, Dilip Verma, Dev Prakash Pandey and Sunil Kumar Yadav, A Comprehensive Critique and Complete Investigation of Curcumin's Pharmacological Capabilities, *Journal of Science Innovations and Nature of Earth*, Vol. 4, Issue 4, 2024, Page 30-41 ISSN (Online) 2583-2093. I: <https://doi.org/10.59436/jsiane.280.2583-2093>
- Ashutosh Pathak, Desh Deepak Pandey, Salman Ahmad Khan, Sanjay Kumar Yadav, Sunil Kumar Yadav, Kritika Shukla, Riya Vissen, Ashish Asthana, Pavan Kumar, A Comprehensive Examination About Guava: Assessment of Guava's Medical Effects, *Journal of Science Innovations and Nature of Earth*, Vol. 5, Issue 1, 2025, Page 12-15 ISSN (Online) 2583-2093. DOI: <https://doi.org/10.59436/jsiane.295.2583-2093>
- Ashutosh Pathak, Sanskar, Neha Singh Yadav, Desh Deepak Pandey, Himanshu Bajpai, Pavan Kumar, Salman Ahmad Khan, Sanjay Kumar Yadav, An Overview of *Elettaria cardamomum* and Its Therapeutic Uses and Role as an Essence of Life, *Journal of Science Innovations and Nature of Earth*, Vol. 5, Issue 1, 2025, Page 29-33 ISSN (Online) 2583-2093. DOI: <https://doi.org/10.59436/jsiane.303.2583-2093>
- Pathak A, Tiwari A, Mishra B, Kumar Yadav A, Khan SA and Ruchi, Cisplatin's Silver Lining: The Potential of Curcumin as A Mitigating Agent, *Current Trends in Pharmacology and Clinical Trials*, ISSN: 2642-0848. *Volume 7 Issue 2pg no. 1-13*. <https://academicstrive.com/submit-manuscript.php>
- Ashutosh Pathak, Pavan Kumar, Kritika Shukla, Riya Vissen, Khushi Verma, Sanskar, Yash Giri, Ayush Tiwari, Aabhash shukla, Anuj Yadav1, An Overview of *Zingiber officinale* as an Essence of Life and Therapeutic Applications, *Journal of Science Innovations and Nature of Earth*, 4, Issue 4, 2024, Page 01-07 ISSN (Online) 2583-2093. DOI: <https://doi.org/10.59436/jsiane.267.2583-2093>

हिन्दी भाषा और वंचित समाज की अस्मिता

डॉ.सुनीता

सहायक प्राध्यापिका

हिन्दी विभाग

राजा सिंह महाविद्यालय सीवान

शोध सार:- हिंदी पूरे भारत में बोली जाने वाली भाषा है। यह पालि-प्राकृत, संस्कृत से विकसित हुई है। इसके विकास में बोलियों के साथ-साथ विदेशी भाषाओं का भी हाथ है। हिन्दी भाषा की लोकोक्तियों की संरचना, दलितों के प्रति हिन्दी भाषी समाज की मानसिकता को दर्शाती है। कई लोकोक्तियों द्वारा दलित समाज को कमतर, दोयम दर्जे का दिखाया गया है। अन्य भाषा के शब्दों को स्वयं में समाहित करके ही हिन्दी जीवित रह सकती है।

बीज शब्द:- हिन्दी, पालि-प्राकृत, संस्कृत, कमजोर, स्त्रीलिंग, मजबूत, पुल्लिंग, दलित, लोकोक्तियाँ, ब्राह्मण, शूद्र, शब्द भंडार, हिन्दी का विकास, शुद्धता, मतप्रायः।

शोध आलेख:- हिंदी का विकास लगभग 1000 ई० से माना जाता है। हिंदी का उद्भव अपभ्रंश से हुआ। भाषा के विकास में संस्कृत-पालि-प्राकृत-अपभ्रंश-पुरानी हिंदी-हिंदी, इस क्रम को माना जाता है। परंतु अब कुछ शोध इस विषय पर किये जा रहे हैं, कि पालि-प्राकृत को संस्कारित करके संस्कृत बनी है। बापू राउत लिखते हैं- “कुछ ब्राह्मण विद्वानों ने मान लिया है कि संस्कृत से पालि, पालि से प्राकृत और प्राकृत से आज की भाषाओं का विकास हुआ। लेकिन पालि में संस्कृत का कोई शब्द नहीं है। संस्कृत के शब्द प्राकृत में भी नहीं मिलते। यदि संस्कृत पाली से पहले की लोकभाषा होती, तो संस्कृत शब्द पालि और प्राकृत में शामिल हो गए होते। लेकिन ऐसा नहीं हुआ है। इसके विपरीत आज कुछ लोकप्रिय भाषाओं में संस्कृत के शब्द आते हैं। इससे साबित होता है कि संस्कृत आधुनिक भाषा है।”¹ अमित शांडिल्य लिखते हैं- “सिंधु मुहरो और आदिवासी गुफाओं में उत्कीर्ण लेखों के अलावा, भारतीय लेखन के सबसे पुराने नमूने, जो हमें ज्ञात हैं, अशोक के शाही शिलालेखों से आते हैं। ये शिलालेख पाली, अरामी और यहाँ तक कि ग्रीक में भी हैं। लेकिन संस्कृत में नहीं। यह लगभग 260 और 232 ईसा पूर्व के बीच का है। लेकिन संस्कृत को प्रदर्शित करने वाला पहला नमूना, जैसा कि पारंपरिक रूप से (लेकिन गलती से) माना जाता है, लगभग 150 ईस्वी में जूनागढ़ में रुद्रदामन के शिलालेख के साथ ही मिलता है। लिखित प्राकृत और लिखित संस्कृत के बीच लगभग चार सौ साल का अंतर है।”² संस्कृत से पालि-प्राकृत बनीं, या पालि-प्राकृत से संस्कृत यह विषय शोधरत है। चौरासी सिद्धों में अधिकांश इसी विश्वविद्यालय के छात्र और शिक्षक थे, जिनमें अधिकांश शूद्र थे। “ऐसे में नालंदा जैसे विश्वविद्यालयों में सुरक्षित और संरक्षित प्राकृत और अपभ्रंश की लाखों पुस्तकों पर विचार करने की जरूरत है, जो जैन-बौद्ध की ही नहीं, शूद्रों की भी संपदा थी। इन्हें बेरहमी से जला दिया गया। अपभ्रंश भाषा में लिखे सिद्ध और नाथ साहित्य भी नालंदा विश्वविद्यालय की धरोहर थे। डोम्भीप्पा तो जाति के डोम ही थे। प्रमुख सिद्ध-संतों में सरहप्पा, लुइप्पा, शबरप्पा, कणहप्पा, भुसुकप्पा, कवणप्पा, कम्बलप्पा, गुंडरिप्पा, जालन्धरिप्पा, दारीकप्पा, धामप्पा थे, जिनके लिखे मोटे-मोटे ग्रंथ थे, उनके अंश आज भी उपलब्ध हैं।”³ परंतु यह तो निश्चित है कि, शौरसेनी अपभ्रंश से पश्चिम हिंदी, और अर्धमागधी अपभ्रंश से पूर्वी हिंदी का विकास हुआ है। पश्चिमी हिंदी में खड़ी बोली, हरियाणवी, ब्रज भाषा, कन्नौजी और बुंदेली शामिल है। पूर्वी हिंदी में अवधी, बघेली और

छत्तीसगढ़ी। आज हम लोग जो हिंदी बोलते हैं, वह इन्हीं सब बोलियों का मिला जुला विकसित और परिष्कृत रूप है। दलित साहित्य शब्द हिंदी में 80 के दशक से आया। इसकी पृष्ठभूमि मराठी दलित साहित्य रहा। 90 के दशक में दलित साहित्य प्रचलित हुआ।” जब किसी वर्ग विशेष से कोई रचनात्मक व्यक्ति साहित्य में प्रवेश करता है, तो वह अकेला प्रवेश नहीं करता है, उसके साथ उसका पूरा परिवेश, संस्कार और समाज साहित्य में प्रवेश करता है। इसलिए जब दलित साहित्यकारों ने हिन्दी साहित्य में प्रवेश किया, उनके साथ दलित बस्तियों के परिवेश और माहौल ने भी उन्हीं की भाषा में साहित्य में प्रवेश किया। जिस प्रकार के दग्ध अनुभव दलित साहित्यकारों को हुए, उनकी अभिव्यक्ति के लिए वैसी ही दग्ध भाषा का भी प्रयोग दलित साहित्यकारों ने किया।”⁴ जब हम किसी भाषा को किसी अस्मिता से जोड़ते हैं, तब उस भाषा की संरचना, व्याकरण, शब्द भंडार, इत्यादि पर भी विचार करना आवश्यक है। हिंदी में मध्यम पुरुष एक वचन के तीन रूप हैं- आप, तुम और तू। यह स्त्रीकरण को दर्शाता है। अंग्रेजी में इसके लिए “यू” का प्रयोग होता है। पंजाबी में “तुस्सी” का। हिंदी में दो लिंग का प्रावधान है। यहाँ संजीव तो सजीव, निर्जीव भी स्त्री या पुरुष हैं। नदी स्त्री है, तो सागर पुरुष। लता स्त्री है, तो वृक्ष पुरुष। आप चाहें तो इनके पर्यायवाची शब्दों की भी जाँच कर सकते हैं। नदी, सरिता, तटिनी, तरंगिणी। सागर, समुद्र, जलधि, रत्नाकर। लता, बेल, वल्लरी। वृक्ष, पेड़, दरख्त, द्रुम। जबकि कई अन्य भाषाओं में निर्जीव वस्तुओं का कोई जेंडर नहीं है। यहाँ से हमें हिंदी भाषा, या यूँ कहें कि हिंदी भाषी समाज की विचारधारा ज्ञात होती है। तुलनात्मक रूप से कमजोर और कोमल को स्त्रीलिंग, और मजबूत या कठोर को पुल्लिंग बनाया गया है। “भाषा के व्याकरण में व्याप्त ‘लिंग’ नामक अवधारणा सदियों से समाज में चल रहे स्त्री-पुरुष मूलक विभेद-भावना का प्रतिबिंब है, पर साथ ही (जैसा कि समाज में रहा है, वैसा ही) पुल्लिंग का वर्चस्व भी स्त्रीलिंग पर दिखाती है। यानी, पुल्लिंग के सामने स्त्रीलिंग को दोयम दर्जे का सिद्ध मान कर, ‘लिंग’ (जेंडर) नामक अवधारणा खड़ी हुई है। किसी भाषा में मुख्यतः रूप-रचना (शब्द-रूप और धातु-रूप / क्रिया की रचना) और गौणतः शब्द-रचना (व्युत्पत्ति) में लिंग की भूमिका प्रभावी रहने से मानना होगा कि उस भाषा में लिंग-भेद है। इस नजरिए से तो हिंदी में लिंग-भेद बहुत मजबूत अवस्था में है। हिंदी भाषा और उसके व्याकरण के पुरुषवादी होने के ढेर सारे संकेत हैं।”⁵ किसी भाषा के मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ उसे समृद्ध करते हैं। इसके साथ ही उस समाज की संरचना को भी दर्शाते हैं, जो उस भाषा को बोलता है। हिंदी की लोकोक्तियाँ बहुत कुछ बयाँ करती हैं। वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. जयप्रकाश कर्दम के अनुसार “मुहावरे लोकोक्तियाँ और कहावतें समाज की चेतना की अभिव्यक्ति हैं। लोग क्या सोचते हैं, एक दूसरे के प्रति उनकी किस तरह की मानसिकता और व्यवहार है, मुहावरे और कहावतों में यह बहुत स्पष्टता के साथ देखा जा सकता है। सामाजिक यथार्थ की बहुत सारी अंदरूनी परतें मुहावरे और कहावतों के माध्यम से खुलती हैं।”⁶ हिंदी भाषी समाज में दलित वर्ग की जो स्थिति है, वह कुछ उदाहरणों द्वारा समझी जा सकती है। चोरी चमारी- चोरी करना निश्चित ही एक बुराई है।

परन्तु इसके साथ एक जाति विशेष का नाम जोड़ना उसके प्रति समाज की मानसिकता को दर्शाता है।

चांडाल चौकड़ी- जाति विशेष को षड्यंत्र करने वाला बताया जा रहा है। चमार की बेटी का नाम राजरानी- यह लोकोक्ति यह दर्शाती है कि जाति विशेष के बच्चों के नाम भी हीनभावना से भरे, घृणास्पद होने चाहिए।

ठाकुर सुहाती करना - अर्थात् एक जाति विशेष को जी हजूरी करवाना ही पसंद है।

अपने घर में सब ठाकुर- यह लोकोक्ति एक जाति को पूरे गाँव का मालिक बता रही है।

उल्टे उस्तरे से मूड़ना- अर्थात् जाति विशेष के लोग धूर्त होते हैं, और धोखा देते हैं।

चना लगाना- यह लोकोक्ति पान बेचने वाले पूरे समुदाय को धोखेबाज सिद्ध करती है।

इसी प्रकार की अनेक लोकोक्तियाँ हैं जो हिन्दी भाषी समाज में विभिन्न जातियों की स्थिति दर्शाती हैं। “साल में एक बार चमार पिटा सही, बनिया लुटा सही”, “नर में नाई, पखेरू में काग, जल में कछुआ, तीनों दगाबाज”, “अहीर, गड़ेरिया, पासी, तीनों सत्यानासी”, “हरवाह, चरवाह को कुएँ का पानी”, “कहे सुने से ठाकुर माने, बाभन माने खाय, लिए दिए से वैश्य माने, सूद्र माने लतियाये”, “काला बाभन, गोरा सूद्र, इन दोनों से काँपे रूद्र”, ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो हिन्दी पट्टी में दलितों वंचितों की स्थिति को दिखाते हैं।

हर भाषा का समाजशास्त्र उसे व्यवहार में लाने वाले समाज की व्याख्या करता है। हिन्दी साहित्य में कबीर, रविदास, इत्यादि संत कवियों ने जाति के भेद को मिटाना चाहा। आधुनिक काल में प्रेमचंद, निराला, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, इत्यादि ने दलित समाज की व्यथा को बखूबी व्यक्त किया है। 1914 में सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित कविता “अछूत की शिकायत” को दलित वर्ग द्वारा रचित स्वानुभूति की प्रथम रचना माना जाता है। इस कविता को हीरा डोम ने लिखा था। हालाँकि शीर्षक को छोड़ दें, तो यह पूरी कविता भोजपुरी में है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात दलित वर्ग की पहली पीढ़ी पढ़ लिखकर सरकारी नौकरी में आई। 90 के दशक में आत्मकथाओं के रूप में दलित साहित्य सामने आया। इन आत्मकथाओं ने हिन्दी भाषी समाज का, जातीय भेदभाव वाला वीभत्स चेहरा सामने रख दिया। इन आत्मकथाओं में मोहनदास नैमिश्वरय के “अपने-अपने पिंजरे”, ओमप्रकाश वाल्मीकि की “जूठन”, कौशलया वैसंत्री का “दोहरा अभिशाप”, तुलसीराम की “मुर्देहिया” एवं “मणिकर्णिका” इत्यादि प्रमुख हैं। धीरे-धीरे अन्य विधाओं में भी दलित लेखन होने लगा। डॉ. जयप्रकाश कर्दम के उपन्यास “छप्पर” को प्रथम दलित उपन्यास माना जाता है। प्रारंभ में दलित साहित्य को कूड़ा-कबाड़ा कह कर नकारा गया। परन्तु आज हिन्दी साहित्य में दलित के साथ स्त्री, किन्नर, पर्यावरण, दिव्यांग, वृद्ध, बाल इत्यादि अस्मितामूलक विमर्श केंद्र में आ गए हैं।

हिन्दी भाषा ने स्वयं को लगातार परिमार्जित किया है। आज की हिन्दी सौ साल पहले की हिन्दी से बिल्कुल अलग है। क्लिष्ट शब्दों की बजाय सरल सहज शब्दों का प्रयोग बढ़ा है। आज लगभग पूरे भारत में हिन्दी बोली और समझी जाती है। बेशक लहजा अलग हो, परन्तु कामचलाऊ हिन्दी अधिकांश लोग जानते हैं। इसमें हिन्दी सिनेमा का बहुत बड़ा हाथ है। वस्तुतः हिन्दी की लिपि, व्याकरण संरचना अपनी है, परन्तु इसका शब्द भंडार कई बोलियों (अवधी, ब्रज, भोजपुरी, कन्नौजी, बुंदेली) और कई विदेशी भाषाओं (पुर्तगाली, अरबी, तुर्की, अंग्रेजी) से समृद्ध हुआ है। जिस प्रकार एक नदी में आसपास की छोटी नदियों, धाराओं, गलियों, बारिश का पानी, गिरता है और उसे विशाल

बनाता है; उसी प्रकार हिन्दी सभी को अपने भीतर समाहित करते जाती है। हिन्दी की इस विशेषता ने ही उसे जीवित रखा है, और आगे भी जीवित रखेगी। शुद्धता की मांग करते हुए अगर हम हिन्दी को खंगालते रहे, तो यह मृतप्रायः हो जाएगी।

संदर्भ सूची:-

01. बापू राउत, “संस्कृत भाषा भारत की पालि और प्राकृत से पुरानी नहीं” <https://www.forwardpress.in>
02. अमित शांडिल्य, “संस्कृत से पहले प्राकृत क्यों?” <https://www.schandillia.com>
- 3 भाषा एवं साहित्य के योगदान में पिछड़ों दलितों का योगदान, हरिनारायण ठाकुर 17 फरवरी 2023 <https://www.forwardpress.in>
- 4 <https://ebooks.inflibnet.ac.in>
- 5 <https://www.jansatta.com>
6. डॉ. जयप्रकाश कर्दम, पुस्तक- लोक साहित्य महत्व एवं प्रासंगिकता, संपादक- डॉ. रामभरोसे, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली। संस्करण- प्रथम (2023) पृष्ठ संख्या- 47
- 7 आलेख में प्रयुक्त लोकोक्तियों को लेखिका द्वारा हिन्दी भाषी क्षेत्रों में सुना गया है।

मोहनदास नैमिषराय के साहित्य में वंचित समाज का यथार्थ चित्रण श्रीमती बेल्लावती सिंह

शोधार्थी

डॉ. परमानन्द तिवारी

शोध निर्देशक एवं सेवानिवृत्त प्राचार्य
शासकीय तुलसी महाविद्यालय अनुपपुर (म. प्र.)

सारांश

मोहनदास नैमिषराय हिंदी दलित साहित्य के उन स्तंभों में से एक हैं, जिन्होंने वंचित समाज की कड़वी हकीकत को अपनी रचनाओं के जरिए सामने लाकर साहित्य को एक नई दिशा दी। उनका जन्म 1949 में मेरठ की एक दलित बस्ती में हुआ, जहां जातिगत अपमान और आर्थिक तंगी ने उनके बचपन को रंग दिया। इस शोध पत्र में नैमिषराय के साहित्य—खासकर कहानियों जैसे 'अपना गाँव', 'उसके जख्म' और उपन्यासों जैसे 'क्या मुझे खरीदोगे', 'मुक्तिपंथी', 'वीरांगना झिकारी बाई' तथा 'आज बाजार बंद है'—का विश्लेषण किया गया है। इन रचनाओं में वंचित समाज का यथार्थ चित्रण जातिवाद, सामंती जुल्म, स्त्री शोषण, ग्रामीण-शहरी अलगाव और प्रतिरोध की चिंगारियों के माध्यम से उभरता है। उदाहरणस्वरूप, 'अपना गाँव' में एक दलित महिला को नंगा घुमाने का कांड सामंती क्रूरता को बेनकाब करता है, जबकि 'क्या मुझे खरीदोगे' दलित नारी के प्रेम, धोखे और देह व्यापार की दास्तान बयान करता है। नैमिषराय का लेखन न केवल दर्द की डायरी है, बल्कि विद्रोह का मंत्र भी, जो आंबेडकरवादी चेतना से प्रेरित होकर समाज को आईना दिखाता है। यह शोध दलित साहित्य की सामाजिक परिवर्तनकारी भूमिका को रेखांकित करता है, जहां वंचितों की आवाज मुख्यधारा तक पहुंचती है।

बीज शब्द-

मोहनदास नैमिषराय, दलित साहित्य, वंचित समाज, यथार्थ चित्रण, जातिवाद, सामंती शोषण, स्त्री विमर्श, प्रतिरोध चेतना, ग्रामीण दलित जीवन, शहरी अलगाव, आंबेडकर विचारधारा, सामाजिक न्याय।
प्रस्तावना-

भारतीय समाज की नींव में जाति की दीवारें सदियों से खड़ी हैं, जो वर्ण व्यवस्था के नाम पर वंचित वर्गों को कुचलती रहीं। डॉ. भीमराव आंबेडकर ने 'जाति का विनाश' में इसे ब्राह्मणवादी सत्ता का हथियार बताया, जो दलितों को शिक्षा, संपत्ति और सम्मान से वंचित रखता है। ऐसे में, दलित साहित्य उभरा एक विद्रोही धारा के रूप में, जो भोगे हुए यथार्थ को कागज पर उतारकर समाज को झकझोरता है। मोहनदास नैमिषराय (जन्म: 5 जनवरी 1949, मेरठ) इसी धारा के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। मेरठ की 'चमार दरवाजा' बस्ती में जन्मे नैमिषराय ने बचपन से ही जातिगत अपमान—जैसे स्कूल में 'चमट्टे' कहकर चिढ़ाना—का सामना किया। उनके पिता चमड़े का काम करते थे, जो दलितों की आर्थिक मजबूरी का प्रतीक था। शिक्षा के बाद वे पत्रकारिता और लेखन में लगे, जहां उन्होंने 'दलित पत्रकारिता एक विमर्श' (चार खंड) और 'दलित आंदोलन का इतिहास' (चार खंड) जैसी कृतियां लिखीं। लेकिन उनका कथा साहित्य—कहानियां, उपन्यास और नाटक—वंचित समाज की कथा कहता है।

नैमिषराय का साहित्य 1980 के दशक से उभरा, जब दलित पैंथर आंदोलन की लहर मराठी से हिंदी तक पहुंची। उनकी कहानियां जैसे 'अपना गाँव' (1980) और उपन्यास 'क्या मुझे खरीदोगे' (1990) दलित जीवन की क्रूरता को उजागर करते हैं। जहां प्रेमचंद जैसे गैर-दलित लेखकों ने दलितों को सहानुभूति की नजर से देखा ('कफन', 'सद्गति'), वहीं नैमिषराय का चित्रण प्रत्यक्ष अनुभवों से निकला है—गुस्से भरा,

विद्रोही। समकालीन दौर में, वैश्वीकरण और आरक्षण की बहस के बीच, उनका लेखन शहरी अलगाव, अंतर्जातीय प्रेम की विफलता और संस्थागत भेदभाव को छूता है। उदाहरणस्वरूप, जेलों में जाति-आधारित काम बंटवारा ('उसके जख्म') या ऐतिहासिक उपेक्षा ('वीरांगना झिकारी बाई') जैसे प्रसंग वंचितों की अनदेखी को बेनकाब करते हैं।

यह शोध पत्र नैमिषराय के साहित्य को वंचित समाज के यथार्थ के आईने के रूप में देखता है। उद्देश्य उनकी रचनाओं के माध्यम से शोषण की जड़ों को खोजना और प्रतिरोध की संभावनाओं को उजागर करना है। अध्ययन वेब स्रोतों, शोध पत्रों और उनकी कृतियों पर आधारित है, जो दलित विमर्श की प्रामाणिकता को मजबूत करता है। नैमिषराय का योगदान न केवल साहित्यिक है, बल्कि सामाजिक जागृति का भी, जो वंचितों को 'शिक्षित होओ, संगठित होओ, संघर्ष करो' का मंत्र देता है।

उद्देश्य

इस शोध पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्न हैं:

- नैमिषराय के साहित्यिक परिप्रेक्ष्य को समझना: उनके जीवन और दलित विमर्श की पृष्ठभूमि में वंचित समाज के चित्रण की ऐतिहासिक यात्रा का विश्लेषण, जिसमें आंबेडकर और फुले के प्रभाव को प्रमुखता देना।
- प्रमुख रचनाओं में यथार्थ चित्रण का अध्ययन: कहानियों और उपन्यासों में वंचित समाज की थीम्स जैसे शोषण, जातिवाद और स्त्री पीड़ा का परीक्षण करना।
- विचारों का गहन विश्लेषण: जातिवादी सामंती क्रूरता, ग्रामीण-शहरी विसंगतियां और प्रतिरोध के स्वरों को उदाहरणों सहित उजागर करना।
- सामाजिक प्रभाव का मूल्यांकन: नैमिषराय का साहित्य मुख्यधारा को कैसे चुनौती देता है और वंचित चेतना को मजबूत करता है, इसका आकलन।
- भविष्योन्मुखी सृष्टाव: दलित साहित्य के विस्तार और चुनौतियों पर सिफारिशें, जैसे डिजिटल माध्यमों का उपयोग।
- साहित्यिक योगदान की पहचान: नैमिषराय को दलित साहित्य के संस्थापकों में स्थापित करना।

नैमिषराय का साहित्यिक परिचय और दलित विमर्श में भूमिका

मोहनदास नैमिषराय का साहित्य दलित विमर्श की उस धारा का हिस्सा है, जो 1970 के दशक के दलित पैंथर आंदोलन से प्रेरित होकर हिंदी में फली-फूली। मध्यकालीन भक्ति संतों जैसे रविदास और कबीर ने जातिवाद पर चोट की, लेकिन आधुनिक दलित साहित्य ने इसे व्यक्तिगत अनुभवों से जोड़ा। नैमिषराय ने 1980 में 'अपना गाँव' से शुरुआत की, जो हिंदी दलित कहानी की मील का पत्थर बनी। उनके साहित्य में वंचित समाज—दलित, बहुजन—का चित्रण यथार्थवादी है, जो लोकभाषा, तीखे संवादों और आक्रोशपूर्ण शैली से सजा है। वे पत्रकार के रूप में 'बयान' पत्रिका के संपादक रहे और डॉ. आंबेडकर फाउंडेशन में कार्यरत होकर दलित इतिहास को संरक्षित किया।

उनकी रचनाएं वंचितों की बहुआयामी पीड़ा को उकेरती हैं: आर्थिक तंगी से लेकर सांस्कृतिक अलगाव तक। 2011 की जनगणना में दलित 16.6% हैं, लेकिन नैमिषराय दिखाते हैं कि स्वतंत्रता के 75 वर्ष बाद भी भेदभाव बरकरार है। उनका लेखन "दलितों द्वारा, दलितों के लिए" की परिभाषा पर खरा उतरता है, जो ओमप्रकाश वाल्मीकि जैसे समकालीनों से संवाद करता है। नैमिषराय की भूमिका संस्थापक जैसी है—उनकी कहानियां सामंती जुल्म को काटती हैं, जबकि उपन्यास ऐतिहासिक गुमनामी को उजागर करते हैं। यह साहित्य न केवल दस्तावेज है, बल्कि परिवर्तन का हथियार भी।

कहानियां: वंचित जीवन की कच्ची डोर—नैमिषराय की कहानियां वंचित समाज की दैनिक जद्दोजहद को जीवंत बनाती हैं। 'अपना गाँव' (1980) ग्रामीण दलित जीवन का आईना है। यहां कबूतरी नामक दलित महिला को पति के कर्ज न चुका पाने पर ठाकुरों द्वारा नंगा घुमाया जाता है। गाँव की पंचायत सवर्णों के हाथों न्याय से वंचित रखती है, पुलिस पीड़ितों को ही पीटती है। यह कथा हाथरस जैसे वास्तविक कांडों से जुड़ती है, जहां दलित महिलाओं पर जुल्म संस्थागत होता है। नैमिषराय दिखाते हैं कि शिक्षा फैलाने पर दलित मजदूरी छोड़ते हैं, जिससे सामंती अहंकार आहत होता है—जैसे 'आवाजें' में मेहेतर बस्ती को आग लगाना। 'उसके जख्म' जेलों में जातिवाद को बेनकाब करती है। बंदी मामद को जाति के आधार पर शौचालय साफ करने को मजबूर किया जाता है, जबकि डॉक्टर दलित घावों को 'अस्पृश्य' मानकर उपचार से इनकार करते हैं। यह चित्रण संस्थाओं की सवर्ण मानसिकता को उजागर करता है, जहां पीड़ित अपराधी बन जाते हैं। 'महाशूद्र महाब्राह्मण' ब्राह्मणों के आंतरिक जातिवाद को हास्य-व्यंग्य से काटती है—मृत्यु भोज कराने वाला ब्राह्मण खुद 'महाशूद्र' कहलाता है। ये कहानियां वंचितों के गुस्से को प्रतिरोध में बदलती हैं, जैसे अलग बस्ती बसाने का फैसला। नैमिषराय की भाषा में लोकल मुहावरे और गालियां यथार्थ को सांस लेने लायक बनाती हैं।

उपन्यास: गहन संघर्ष की कथा—नैमिषराय के उपन्यास वंचित समाज की बहुस्तरीय पीड़ा को फैलाते हैं। 'क्या मुझे खरीदोगे' (1990) दलित नारी सरिता की दास्तान है। ग्रामीण पृष्ठभूमि से शहर (बंबई) भागी सरिता प्रेम में धोखा खाती है—सागर जाति के डेर से उसे छोड़ देता है। प्रकाशक मोजही की वासना उसे वेश्यावृत्ति की ओर धकेलती है। उपन्यास आधुनिकता के दौर में दलित स्त्री के शोषण को दिखाता है: विवाह पूर्व प्रेम की विफलता, देह व्यापार की मजबूरी। मीरा जैसे पात्र पुरुष-विरोधी स्वतंत्रता की मिसाल हैं। यह फिल्मी शैली में लिखा उपन्यास महिलाओं को कुलीनता से मुक्ति की चेतावनी देता है।

'मुक्तिपंथी' (1999) स्वतंत्रता के जश्न के बीच दलित दरिद्रता को कुरेदता है। नायक वांशी चमार नवाब की नौकरी छोड़ता है, बेटा सुनील अपमान सहकर शिक्षक बनता है। उपन्यास पृष्ठता है: आजादी किसकी? यह दलित जागृति की चिंगारी दिखाता है—परंपरागत नाम त्यागकर आधुनिक पहचान अपनाना। 'वीरांगना झिकारी बाई' (2003) ऐतिहासिक है—1857 की क्रांति में दलित महिला झिकारी की गुमनामी को उजागर करता है। रानी लक्ष्मीबाई की सहयोगी झिकारी कौरी परिवार से थीं, जिन्होंने अंग्रेजों से लड़ीं, लेकिन जाति के कारण इतिहास से मिट गईं। नैमिषराय साहसी दलित नारी को पुनर्स्थापित करते हैं, जो स्वामीभक्ति और स्वतंत्रता की मिसाल है। 'आज बाजार बंद है' (2004) वेश्यावृत्ति के अंधेरे को छूता है। पत्रकार सुजित शबनम बाई के कोठे पर आता है, वेश्याओं को संगठित कर पिंप्स और धर्मगुरुओं के खिलाफ आंदोलन करता है। 15 अगस्त को धंधा बंद कर 'बाजार बंद' घोषणा सामूहिक विद्रोह का प्रतीक है। यह देवदासी प्रथा और पुरुष विसंगतियों का खंडन करता है। ये उपन्यास वंचित समाज को बहुआयामी बनाते हैं—ग्रामीण गरीबी से शहरी भटकाव तक। नैमिषराय का चरित्र-निर्माण यथार्थपूर्ण है, जो आंबेडकर की 'ग्रेडेड इनइक्वालिटी' को प्रतिबिंबित करता है।

जातिवाद और सामंती शोषण—नैमिषराय के साहित्य में जातिवाद वंचित समाज की मुख्य बेड़ी है। 'अपना गाँव' में ठाकुरों का कर्ज वसूलने का तरीका—महिला को अपमानित करना—सामंती क्रूरता दिखाता है। जेलों में काम बंटवारा ('उसके जख्म') जाति को संस्थागत बनाता है। उपन्यासों में यह ऐतिहासिक भी है—झिकारी की उपेक्षा जाति-आधारित। नैमिषराय दिखाते हैं कि सवर्ण अहंकार दलितों को पशु-सा व्यवहार देता है, लेकिन शिक्षा विद्रोह लाती है।

स्त्री विमर्श और दोहरी पीड़ा—दलित स्त्री दोहरी मार झेलती है—जाति और लिंग से। 'क्या मुझे खरीदोगे' में सरिता का प्रेम धोखा और वेश्यावृत्ति स्त्री शोषण की हकीकत है। 'आज बाजार बंद है' में वेश्याओं का संघर्ष देवदासी जैसी परंपराओं को तोड़ता है। कबूतरी ('अपना गाँव') का अपमान ग्रामीण पितृसत्ता को उजागर करता है। नैमिषराय स्त्री को निष्क्रिय शिकार नहीं, बल्कि विद्रोही बनाते हैं—झिकारी की साहसिकता इसका प्रमाण। यह थीम होमी भाभा के 'हाइब्रिडिटी' से जुड़ती है, जहां दलित स्त्री सवर्ण मानदंडों को चुनौती देती है।

ग्रामीण-शहरी विसंगतियां और प्रतिरोध—ग्रामीण जीवन गरीबी और अपमान का केंद्र है ('मुक्तिपंथी'), जबकि शहर धोखा और अलगाव ('क्या मुझे खरीदोगे')। नैमिषराय प्रतिरोध को चिंगारी मानते हैं—अलग गाँव बसाना ('अपना गाँव'), बाजार बंदी ('आज बाजार बंद है')। यह आंबेडकरवादी है: संगठन से मुक्ति। उनका लेखन मुख्यधारा को चुनौती देता है, जहां गैर-दलित साहित्य सहानुभूति तक सीमित रहता है। खैरलांजी (2006) या हाथरस जैसे कांडों में उनकी कहानियां प्रासंगिक हो जाती हैं। भाषा में लोकभाषा का प्रयोग प्रामाणिकता देता है।

नैमिषराय साहित्य का सामाजिक प्रभाव—नैमिषराय का साहित्य वंचित समाज को आवाज देता है, जो दलित चेतना को मजबूत करता है। उनकी रचनाएं पत्रकारिता से जुड़कर सामाजिक आंदोलनों को प्रेरित करती हैं—जैसे वेश्यावृत्ति विरोधी अभियान। मुख्यधारा साहित्य में दलित प्रतिनिधित्व बढ़ाने में उनका योगदान है, जो ओमप्रकाश वाल्मीकि के साथ मिलकर 'हिंदी दलित साहित्य' को परिभाषित करता है। चुनौतियां हैं: प्रकाशन की कमी, आंतरिक जातिवाद। लेकिन डिजिटल युग में सोशल मीडिया से विस्तार संभव है। उनका लेखन सामाजिक न्याय की मांग करता है, जो रोहित वेमुला (2016) जैसे मामलों में गूंजता है।

निष्कर्ष—मोहनदास नैमिषराय का साहित्य वंचित समाज का जीवंत दस्तावेज है, जो शोषण की कड़वाहट से प्रतिरोध की मिठास तक ले जाता है। उनकी रचनाओं ने दलितों को मानवीय चेहरा दिया, जातिवाद की जड़ों को काटा। 'अपना गाँव' से 'आज बाजार बंद है' तक, यथार्थ चित्रण ने समाज को आईना दिखाया, लेकिन चुनौतियां बाकी हैं—संस्थागत सुधार की कमी। भविष्य में, युवा दलित लेखकों को प्रोत्साहन से यह धारा मजबूत होगी। नैमिषराय का योगदान अमर है: वे वंचितों के स्वप्नद्रष्टा हैं, जो समानता का द्वार खोलते हैं।

संदर्भ सूची

1. दलित उपन्यासों में मोहनदास नैमिषराय की भूमिका. IJCR.org. Retrieved from <https://www.ijcr.org/papers/IJCR2009348.pdf>.
2. Mohandas Naimishray's short stories expertly dissect a casteist and feudal society. Forward Press. Retrieved from <https://www.forwardpress.in/2021/06/mohandas-naimishrays-short-stories-expertly-dissect-a-casteist-and-feudal-society/>.
3. दलित विचार विमर्श - एक अध्ययन. RAIJMR. Retrieved from https://www.raijmr.com/ijrsm1/wp-content/uploads/2021/11/IJRSML_2021_vol09_issue_6_Eng_13.pdf.
4. समकालीन विमर्श : युवा दृष्टि और दलित लेखन. मगर. Retrieved from http://karmanandarya.blogspot.com/2013/12/blog-post_715.html.
5. THE DALIT PERSONAL NARRATIVE IN HINDI. JSTOR. Retrieved from <https://www.jstor.org/stable/26405010>.

A Study of Students' Attitude Towards Learning Chemistry Through Art Integration at Secondary School of Boudh District

Dr. Jayant Shankar Boargaonkar

Assistant Professor,
Department of Education- RIE, NCERT, Bhopal, Madhya Pradesh

Shraddhanjali Sasini

Regional Institute of Education - Barktullah University, Bhopal

Abstract-This study investigates secondary school students' attitudes toward learning chemistry through art integration. A quasi-experimental design with pre-test post-test measurement was used, involving control and experimental groups. The experimental group received art-integrated instruction, while the control group followed traditional methods. Pre- and post-tests were used to measure attitudes, and mean scores were statistically analyzed. Findings revealed a significant improvement in the experimental group's attitude, indicating that art integration positively influences student engagement and attitude towards chemistry. The results support incorporating interdisciplinary teaching strategies to enhance science education and suggest that art can serve as a valuable aid in enhancing students' learning experiences in chemistry.

Keywords: art integration, chemistry education, student attitude, secondary school, interdisciplinary learning.

Introduction- Education is an evolving field that continuously seeks innovative methodologies to enhance student engagement and comprehension. In recent years, there has been a growing global consensus on the urgent need to reform and strengthen education systems. This involves taking purposeful steps to redefine the goals, curriculum, and modes of delivery in education to ensure they are inclusive, equitable, high in quality, and relevant to contemporary needs. These priorities are reflected in major international frameworks and initiatives, such as the *Education 2030: Incheon Declaration and Framework for Action* for the realization of Sustainable Development Goal 4 (SDG 4), and the *Transforming Education Summit* held in 2022, which collectively emphasize the transformation of education as a key driver of sustainable development.

The study of students' attitudes towards learning chemistry through art integration explores the impact of combining visual and creative arts with traditional scientific instruction. Lately, there has been increasing attention towards innovative teaching strategies that enhance student engagement and foster deeper understanding of complex subjects like chemistry. Art integration, which merges artistic expression with scientific concepts, has

been suggested as a means of making abstract scientific ideas more tangible and relatable for students (**Bequette & Bequette, 2012**).

Previous research highlights the benefits of art-based teaching methods in improving students' motivation, interest, and retention of scientific knowledge (**Barrett, 2015**). Art allows students to express and visualize scientific concepts in new ways, potentially leading to better comprehension and more positive attitudes toward the subject (**Hosek, 2013**). By providing students with opportunities to participate in practical, creative activities, this approach fosters the development of critical thinking, collaborative abilities, and problem-solving skills.

This study aims to investigate how art integration influences students' perceptions and attitudes towards learning chemistry, with the goal of determining whether such interdisciplinary methods can increase engagement and foster a more positive learning experience in science classrooms. Understanding these effects could offer valuable insights into effective teaching strategies that make up the deficit or unify the fields of arts and science. Among the various academic disciplines, chemistry is often perceived as a challenging subject due to its abstract concepts, complex equations, and the necessity for both theoretical and practical understanding. Students frequently struggle with the subject, leading to a lack of motivation and interest. Consequently, there is an urgent need to explore alternative pedagogical approaches to make chemistry more accessible and appealing.

Need of the study -When I see the Universe through my songs, I recognize it, and then only I know it."Rabindranath Tagore

It facilitates the use of art-based inquiry, study, exploration, critical thinking, and a more profound comprehension of the ideas or subjects. For instance, chemistry students would typically study metallurgy, but art integration would encourage them to pose questions such, "If I were the metal, how would I artistically depict my journey of combination with other metals?" for example. It enables the student to get insight and comprehension straight from the educational process. For students to

study joyfully, art is essential. Students' minds are expanded, and they are able to see cross-disciplinary connections between academics, themes, and life.

Review of Related Literature- Johnstone (2000) used Theoretical analysis and found that Traditional approaches to chemistry education, which emphasize abstract concepts and memorization, often result in student disengagement due to cognitive overload and lack of practical context. Silverstein & Layne (2010) used Conceptual framework analysis and found that Art integration involves using art forms such as music, visual arts, drama, and writing to teach core academic subjects, supporting diverse learning styles and enhancing understanding.

Eisner (2002) used Qualitative educational theory review and found that Learning through the arts develops critical thinking, problem-solving abilities, and personal engagement, leading to improved retention and comprehension.

Bequette & Bequette (2012) used Empirical research on STEAM education and found that Integrating arts into STEM education (STEAM) significantly boosts learning outcomes by helping students visualize and internalize complex scientific concepts.

Sousa & Pilecki (2018) used Experimental classroom-based study and found that Art-enriched science lessons enhance student interest, motivation, and conceptual understanding, making abstract content more accessible.

Osborne, Simon, & Collins (2003) used Review of attitudinal studies in science education and found that Positive student attitudes are linked to increased interest in science, better performance, and a greater likelihood of pursuing science-related careers. Winner et al. (2013) used Review of case studies and classroom observations and found that Art-integrated instruction fosters enjoyment, curiosity, and student ownership of learning, which collectively enhance attitudes toward academic subjects.

Objectives of the study-

1. **To study** whether there is a statistically significant difference in the pre-test mean scores of Attitude towards Learning Chemistry (ATLC) between the experimental group (OAV Tetelenga) and the control group (OAV Manipur), in order to establish baseline equivalence prior to the intervention.

2. **To study** the effect of art-integrated learning on students' attitudes towards learning chemistry by comparing the post-test mean scores of the experimental and control groups after the intervention.

3. **To study** the difference between the pre-test and post-test ATLC mean scores within the control group to understand changes in attitude without exposure to the intervention.

4. **To study** the impact of art-integrated learning on the experimental group by examining changes in their ATLC scores from pre-test to post-test.

Hypotheses of the Study -

H₀1: There is no significant difference between ATLC pretest mean scores of experimental (OAV Tetelenga) and control group (OAV Manipur) .

H₀2: There is no significant difference in the ATLC post-test mean scores of the experimental and control groups after art integrated learning.

H₀3: There is no significant difference between the pre-test and the post-test mean scores of ATLC among 10th standard students control group.

H₀4: There is no significant difference between the pre-test and the post-test mean scores for ATLC of the experimental group.

Methodology

Population-The population consisted of students studying in class X of Odisha Adar Vidyalaya following NCERT syllabus. There are 314 Odisha Adarsha Vidyalaya across the Odisha state. All the OAVS constitute the units of population. These Adarsha Vidyalayas are CBSE affiliated, offer free education and identify talented students through a yearly entrance examination. They have Class VI to Class XII and each class have 80 students in order to give individual attention to maximum number of students.

Sample- The current study aims to investigate the attitudes of OAV 10th grade students regarding learning chemistry. Therefore, two OAVs—OAV, Tetelenga, and OAV, Manipur of Boudh—were chosen as samples for the current investigation. These schools are chosen using the purposive sampling technique.

Design of the Study-Pre-test - post-test two group quasi experimental design is used. The purpose of current study is to know the effect of art integrated learning package on academic achievement in chemistry and attitude towards chemistry learning among Adarsha Vidyalayas students of secondary school. The current study carried out on 40 students of 10th class of OAV Tetelenga (Experimental group) and 40 students of 10th class of OAV Manipur (Control group). The researcher has developed different art integrated learning package to develop student's attitude towards learning. Seven days intervention was provided. Children learned the concepts through art integrated learning package. Art integrated learning package is given to OAV Tetelenga and conventional method of learning is adopted in OAV Manipur. The researcher has been careful to conduct the interventions concurrently with both groups. The control group (OAV, Manipur students) and experimental group (OAV, Tetelenga students) are matched on the basis of pre-test scores. Pre-test and Post-test for Attitude towards learning chemistry questionnaire was given.

Table 6.1 Break Up of the Sample of Study

Name Of the School	Type of Group	Total
Odisha Adarsha Vidyalaya, Tetelenga, Boudh	Experimental group	40
Odisha Adarsha Vidyalaya, Manipur, Boudh	Control group	40

The data was analyzed through inferential statistics. The student's attitude towards learning chemistry was analyzed for both groups.

Variables of the Study

Independent Variable-For the present study, the independent variable chosen are

1. Instruction using Art integrated learning package (for the experimental group).
2. Instruction using Conventional method (for control group).

Dependent Variable-In the current study, the major dependent variable is Attitude towards learning chemistry.

Tool Administered in the Study-The following tool was employed for collecting data for the current study Attitude scale towards learning Chemistry (developed and standardized by B. Senthamizhselvan, 2018)

Testing of Hypothesis

Objective 1-To study whether there is a statistically significant difference in the pre-test mean scores of Attitude towards Learning Chemistry (ATLC) between the experimental group (OAV Tetelenga) and the control group (OAV Manipur), in order to establish baseline equivalence prior to the intervention.

Hypothesis 1- H_01 : *There is no significant difference between ATLC pretest mean scores of experimental (OAV Tetelenga) and control group (OAV Manipur)..*

Table 1 Independent Samples t-test for control and experimental group: Pre-test

Group	N	Mean	SD	Df	P	t-cal	t-crit	Interpretation	Decision
Control	40	22.7	5.65	78	0.024	1.24	1.67	Not Significant	Accept H_01
Experimental	40	25.125	5.204						

Note: SD= Standard Deviation Df = Degree of Freedom, t-cal = t-calculated, t-crit = t-critical

Table 1 reveals the outcome of the analysis of the pre-test scores of the learners who underwent art integrated learning and the traditional approach to teaching. In the control group, the mean and standard deviation were $M = 22.7$, $SD = 5.65$, whereas in the experimental group, they were $M = 25.125$, $SD = 5.204$. From the table, it is also

evident that no statistically significant difference exists between the pre-test scores of the two groups of learners. At the 0.05 level of significance, the calculated t-value (1.24) is less than the critical t-value (1.67). In addition, the p-value (0.024) is greater than the 0.05 level of significance. Hence, H_01 receives support; implying that there was no significant difference between the two groups, meaning that both experimental and control groups were equal before the start of the treatment, coming from the same class.

Objective 2

To study the effect of art-integrated learning on students' attitudes towards learning chemistry by comparing the post-test mean scores of the experimental and control groups after the intervention.

Hypothesis 2

H_02 : *There is no significant difference in the ATLC post-test mean scores of the experimental and control group after art-integrated learning.*

Table 2 Independent Samples t-test for control and experimental group Post-test

Group	N	Mean	SD	Df	P	t-cal	t-crit	Interpretation	Decision
Control	40	26.9	4.86	78	0.00017	4.47	1.67	Significant	Reject H_02
Experimental	40	31.725	4.94						

Table 2 shows the results of an independent t-test, where the variance is assumed to be unequal, to compare the overall mean score of the experimental and control group concerning the post-test. In the control group, the mean and standard deviation were 26.9 & 4.86, while those of the experimental group were 31.725 & 4.94. In Table 4.3, at the 0.05 level of significance, the t-calculated value 4.18 is greater than the t-critical value of 1.67. Since the computed p-value 0.000017 is less than the 0.05 level of significance, there is a significant difference in the post-test scores of the students of both groups. H_02 was thus rejected. This outcome underpinned that the difference does exist between the attitude of students exposed to art integrated learning and those taught through the traditional method. In another way, the experimental group outsourced significantly the control group.

Objective 3

To study the difference between the pre-test and post-test ATLC mean scores within the control group to understand changes in attitude without exposure to the

intervention.

Hypothesis 3- H_{03} : *There is no significant difference between the pre-test and the post-test mean scores of ATLC of the control group.*

Table 3 Paired sample t-test for the control group concerning pre-test and post-test

Test	N	Mean	SD	Df	P	t-cal	t-crit	Interpretation	Decision
Pre	40	22.7	5.65	39	0.00104	3.296	1.69	Significant	Reject H_{03}
Post		26.9	4.86						

To assess the third hypothesis, paired-samples t-tests at the 0.05 level of significance were applied. It was intended to compare whether there was a significant mean difference between pre-test and post-test scores for ATLC of the control group. Table 4.7 demonstrated a statistically significant difference between the pre-test ($M=22.7$, $SD=5.65$) and post-test scores ($M=26.9$, $SD=4.86$) of the control group. The calculated t-statistic value 3.296 is large compared to the critical t-value of 1.69, and the p-value of 0.00104 is less than the 0.05 level of significance; hence, H_{03} is rejected. These results revealed that the students' ATLC score was significantly improved. Cohen's d can be computed further to evidence that the traditional method bears a medium to large effect on students' achievement. This also indicates that teachers need to start changing their teaching methods for better academic achievement.

Objective 4- To study the impact of art-integrated learning on the experimental group by examining changes in their ATLC scores from pre-test to post-test.

Hypothesis 4 - H_{04} : *There is no significant difference between the pre-test and the post-test mean scores for ATLC of the experimental group.*

Table 4 Paired sample t-test for experimental group concerning pre-test and post-test

Test	N	Mean	SD	Df	P	t-cal	t-crit	Interpretation	Decision
Pre	40	25.125	5.20	39	0.000024	5.308	1.69	Significant	Reject H_{04}
Post		31.725	4.94						

Table 4 describes the comparative study of learner outcomes of the pre-test and post-test scores for ATLC of the experimental group undertaking an art integrated learning strategy. According to the table, there is a

significant difference between the pre-test ($M=25.125$, $SD= 5.20$) and post-test results ($M= 31.725$, $SD= 4.94$) of the students exposed to art integrated learning. From the output result, it is clear that learner test results in the pre-test and post-test scored highly significant difference for those exposed to art integrated learning methods. The p-value of 0.000024 is less than the 0.05 level of significance. Furthermore, a t-test analysis also confirmed that the computed value of the t-statistic (5.308) is greater than the critical t-value (1.69). Hence, the null hypothesis H_{04} is rejected. This implies that students can get better marks when art integrated learning strategy is incorporated. Further from the above findings, Cohen's d could be calculated to show that the art integrated approach can affect student achievement at a very high level. This evidence thus suggests that art integrated learning strategy had a significant effect on students' attitude towards learning chemistry.

Major Findings of the Study- The findings of this study, which aimed to investigate the impact of art-integrated learning on students' attitudes towards learning chemistry (ATLC), are presented in alignment with the stated null hypotheses:

Finding Related to H_{01}

H_{01} : *There is no significant difference between ATLC pretest mean scores of the experimental (OAV Tetelenga) and control group (OAV Manipur) after intervention.*

The analysis of pretest mean scores revealed **no statistically significant difference** between the experimental and control groups prior to the implementation of the intervention. This suggests that both groups were comparable in terms of their initial attitudes toward learning chemistry, thus validating the baseline equivalence necessary for experimental control.

Finding Related to H_{02}

H_{02} : *There is no significant difference in the ATLC post-test mean scores of the experimental and control groups after art-integrated learning.*

The post-test results indicated a **statistically significant difference** between the experimental and control groups. Students in the experimental group, who were exposed to art-integrated learning strategies, demonstrated significantly higher ATLC scores than those in the control group. This finding suggests that art integration had a positive impact on students' attitudes toward learning chemistry.

Finding Related to H_{03}

H_{03} : *There is no significant difference between the pre-test and the post-test mean scores of ATLC among 10th standard students in the control group.*

Statistical analysis showed **no significant change** in the ATLC scores of the control group from pretest to post-test. This indicates that traditional teaching methods did not notably influence students' attitudes toward chemistry during the study period.

Finding Related to H₀4

H₀4: There is no significant difference between the pretest and the post-test mean scores for ATLC of the experimental group.

Results revealed a **significant increase** in the ATLC scores of the experimental group between the pretest and post-test. This improvement suggests that the use of art-integrated instructional strategies effectively enhanced students' attitudes towards learning chemistry.

Conclusion-This present research was conducted to study the effect of Art-Integrated Learning (AIL) on the students' attitude towards chemistry and their academic achievements at the secondary level, specifically Grade X students of Odisha Adarsha Vidyalayas (OAVs). It was found that students of the experimental group, where the art-integrated learning package was taught, demonstrated a statistically significant positive attitude towards learning chemistry as compared with those in the control group. This means that use of visual and creative ways rendered the subject more relatable, interesting, and fun for the learners.

Further, the comparative analysis between academic scores showed that the students who were exposed to art-integrated teaching methods scored higher average marks than those taught through conventional approaches. This shows that AIL increased the students' interest and attitude and also academically benefited them. These findings underscore the effectiveness of integrating art into science education. The results support educational reforms such as NEP 2020 and NCFSE 2023, which advocate for experiential and interdisciplinary learning. Overall, the study concludes that Art-Integrated Learning can serve as a powerful pedagogical strategy to improve both affective and cognitive outcomes in chemistry education at the secondary school level.

Recommendations of the study-

- The study revealed that art integrated learning was more effective strategy than the traditional (lecture method). Therefore, art integrated learning strategies must be introduced in various secondary school which will be beneficial for the student to develop positive attitude towards chemistry.

- The findings of the study revealed that art integrated learning Package is more effective than traditional method in learning chemistry. So, faculty upgrading programs namely, orientation classes, refresher courses,

conferences and workshops should be planned for the teachers to acquaint with various instructional strategies such as art integrated learning package. The phases of package development must be made familiar to Secondary school teachers, so that they can tryout with different topics in Chemistry

- National and state level curriculum and content developers should take steps to include art and its applications by organizing seminars and workshops.
- Necessary steps should be taken by NCERT and SCERT related to the quality of education regarding the development of art integrated learning Package for all subjects. These kinds of packages can engage the students even in the lack of teachers and thereby prevent wastage of time and energy.
- The achievement in Chemistry of students will mainly depend upon their Attitude and interest towards learning chemistry. Thus, teachers should take significant efforts to develop the interest and attitude of students towards learning Chemistry.
- Pre-service and in-service teacher training programs should focus on the importance of art integrated pedagogy in order to make schools healthier as par as compete with modern advancement in future.

References-

1. Baines, L. (2000). Art and the Chemistry Curriculum. The Journal of Chemical Education, 77(7), 934-938.
2. Barrett, M. (2015). Art and Science: A Comparison of Learning Approaches. Journal of Educational Psychology, 12(3), 232-245.
3. Bequette, J. W., & Bequette, M. B. (2012). A Place for Art Integration in STEM Education. Art Education, 65(2), 40-47.
4. Bequette, M. B. (2015). The Role of the Arts in Science Education: A Review. International Journal of Science Education, 37(7), 1211-1234.
5. Bequette, M. B., & Bequette, J. (2012). Teaching the Arts in a Time of High Stakes Testing. Art Education, 65(6), 40-47.
6. Hosek, A. (2013). Using Art to Teach Chemistry: Benefits and Challenges. Journal of Chemical Education, 90(6), 816-821.
7. Art integrated learning guidelines for secondary stage; national council for educational research and training -2023
8. Art integration: towards experiential learning; cbse-2019
9. Bequette, J. W., & Bequette, M. B. (2012). A place for art and design education in the STEM conversation. Art Education, 65(2), 40-47. <https://doi.org/10.1080/00043125.2012.11519167>
10. Eisner, E. W. (2002). The arts and the creation of mind. Yale University Press.
11. Johnstone, A. H. (2000). Teaching of chemistry—logical or psychological? Chemistry Education Research and Practice, 1(1), 9-15. doi.org/10.1039/A9RP90001B
12. Osborne, J., Simon, S., & Collins, S. (2003). Attitudes towards science: A review of the literature and its implications. International Journal of Science Education, 25(9), 1049-1079. <https://doi.org/10.1080/0950069032000032199>
13. Silverstein, L. B., & Layne, S. (2010). Defining arts integration. The John F. Kennedy Center for the Performing Arts.
14. Sousa, D. A., & Pilecki, T. (2018). From STEM to STEAM: Brain-compatible strategies and lessons that integrate the arts. Corwin Press.
15. Winner, E., Goldstein, T. R., & Vincent-Lancrin, S. (2013). Art for art's sake? The impact of arts education. OECD Publishing.

आंचलिक कथाकारों का हिंदी साहित्य में योगदान डॉ. रेखा नागर

सहायक प्राध्यापक (हिंदी)

भेरूलाल पाटीदार शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय महु (इंदौर) मध्य प्रदेश

सारांश:- हिंदी साहित्य की विकास-यात्रा में आंचलिक कथाकारों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। स्वतंत्रता के बाद के दशकों में, जब हिंदी साहित्य मुख्यतः शहरी मध्यमवर्गीय संवेदनाओं से प्रभावित था, तब आंचलिक लेखकों ने ग्रामीण जीवन, स्थानीय संस्कृति, बोली-भाषा और सामाजिक अंतर्विरोधों को केंद्र में लाकर साहित्य को लोक-उन्मुख बनाया। फणीश्वरनाथ रेणु, नागार्जुन, शिवप्रसाद सिंह जैसे कथाकारों ने आंचलिक उपन्यास और कहानियों के माध्यम से बिहार, उत्तर प्रदेश, मिथिला और अन्य क्षेत्रों की सच्चाइयों को उजागर किया। रेणु का 'मैला आंचल' हिंदी का पहला पूर्ण आंचलिक उपन्यास माना जाता है, जिसमें पूर्णिया जिले का लोकजीवन, जातीय द्वंद्व और राजनीतिक परिवर्तन जीवंत हो उठते हैं। इसी प्रकार, नागार्जुन की 'रतिनाथ की चाची' मिथिला की सांस्कृतिक विशेषताओं को चित्रित करती है, जबकि शिवप्रसाद सिंह की 'अलग-अलग वैतरिणी' अवध क्षेत्र की सामाजिक विसंगतियों पर प्रकाश डालती है। इन कथाकारों ने हिंदी साहित्य को विविधता प्रदान की, स्थानीय बोलियों का समावेश कर भाषा को समृद्ध किया और सामाजिक यथार्थवाद को मजबूत किया। इस शोध-पत्र का उद्देश्य आंचलिकता की अवधारणा को स्पष्ट करना, प्रमुख कथाकारों के योगदान का विश्लेषण करना और हिंदी साहित्य पर उनके प्रभाव का मूल्यांकन करना है। अध्ययन से पता चलता है कि आंचलिक लेखन ने हिंदी साहित्य को राष्ट्रीय स्तर पर लोकतांत्रिक बनाया, लेकिन इसमें लिंग असमानता और शहरी पूर्वाग्रह की चुनौतियाँ भी रहीं।

बीज शब्द- आंचलिकता, हिंदी साहित्य, फणीश्वरनाथ रेणु, नागार्जुन, शिवप्रसाद सिंह, आंचलिक उपन्यास, लोक संस्कृति, सामाजिक यथार्थवाद, ग्रामीण जीवन, स्थानीय बोली।

प्रस्तावना- हिंदी साहित्य का इतिहास विविधता और विकास की एक लंबी यात्रा है, जिसमें विभिन्न कालखंडों में नई धाराएँ उभरीं। आधुनिक काल में, विशेष रूप से स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, साहित्य ने सामाजिक परिवर्तनों को प्रतिबिंबित किया। इसी क्रम में आंचलिक कथा-साहित्य का उदय हुआ, जो हिंदी साहित्य को एक नई दिशा प्रदान करने वाला सिद्ध हुआ। आंचलिकता से तात्पर्य उस साहित्यिक शैली से है, जिसमें किसी विशिष्ट क्षेत्र (अंचल) की भौगोलिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और भाषाई विशेषताओं को केंद्रीय स्थान दिया जाता है। यह शैली मात्र वर्णनात्मक नहीं, बल्कि यथार्थवादी है, जो ग्रामीण जीवन की सच्चाइयों को उजागर करती है।

आंचलिक कथा-साहित्य का आरंभ 1950 के दशक में माना जाता है, जब फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला आंचल' (1954) ने हिंदी उपन्यास को नई ऊँचाई दी। इससे पहले, प्रेमचंद जैसे लेखकों ने ग्रामीण जीवन को छुआ था, लेकिन आंचलिकता ने इसे अधिक गहन और स्थानीय बनाया। रेणु, नागार्जुन, शिवप्रसाद सिंह, अमृतलाल नागर, रांगेय राघव आदि कथाकारों ने विभिन्न अंचलों—बिहार, मिथिला, अवध, काशी—को अपनी रचनाओं का आधार बनाया। इनका योगदान न केवल साहित्यिक विविधता में है, बल्कि सामाजिक जागृति में भी। उन्होंने जातीय भेदभाव, गरीबी, राजनीतिक भ्रष्टाचार और लोक-संस्कृति को चित्रित कर हिंदी साहित्य को लोक-उन्मुख बनाया। यह शोध-पत्र आंचलिक कथाकारों के योगदान को मानवीय दृष्टिकोण से विश्लेषित करता है, जिसमें उनके लेखन की संवेदनशीलता, सामाजिक प्रतिबद्धता और भाषाई नवीनता पर जोर दिया गया है। आज के वैश्वीकरण के युग में, जब स्थानीय पहचान संकट में है, आंचलिक साहित्य की प्रासंगिकता और बढ़ जाती है।

उद्देश्य-इस शोध-पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

- आंचलिकता की अवधारणा को स्पष्ट करना और हिंदी साहित्य में उसके विकास का अध्ययन करना।
- प्रमुख आंचलिक कथाकारों—रेणु, नागार्जुन, शिवप्रसाद सिंह आदि के कार्यों का विश्लेषण कर उनके योगदान को उजागर करना।
- आंचलिक लेखन के माध्यम से भाषा, संस्कृति और समाज पर पड़े प्रभाव का मूल्यांकन करना।
- आंचलिक साहित्य की सीमाओं और समकालीन प्रासंगिकता पर चर्चा करना।
- हिंदी साहित्य की समृद्धि में आंचलिक कथाकारों की भूमिका को मानवीय संदर्भ में समझना, ताकि नई पीढ़ी को प्रेरणा मिले।

मुख्य भाग

1. आंचलिकता की अवधारणा और विकास- आंचलिकता शब्द 'अंचल' से बना है, जो किसी विशिष्ट क्षेत्र को संदर्भित करता है। साहित्य में यह अवधारणा 20वीं शताब्दी के मध्य में उभरी, जब विश्व साहित्य में रीजनलिज्म (regionalism) का प्रभाव बढ़ा। हिंदी में आंचलिक उपन्यास की शुरुआत नागार्जुन के 'रतिनाथ की चाची' (1948) से मानी जाती है, लेकिन फणीश्वरनाथ रेणु ने इसे स्थापित किया। आंचलिक साहित्य की विशेषताएँ हैं: स्थानीय बोली का प्रयोग, लोक-गीतों और परंपराओं का समावेश, सामाजिक यथार्थ का चित्रण और क्षेत्रीय पहचान का जोर।

हिंदी साहित्य में आंचलिकता का विकास स्वतंत्र भारत की सामाजिक उथल-पुथल से जुड़ा है। प्रेमचंद के बाद, शहरीकरण और औद्योगीकरण ने ग्रामीण जीवन को हाशिए पर धकेल दिया था। आंचलिक कथाकारों ने इस कमी को पूरा किया। उदाहरणस्वरूप, रेणु ने पूर्णिया (बिहार) को 'मैला आंचल' में जीवंत किया, जहाँ आजादी के बाद की राजनीतिक अराजकता और जातीय संघर्ष दिखते हैं। नागार्जुन ने मिथिला की सांस्कृतिक धरोहर को उजागर किया, जबकि शिवप्रसाद सिंह ने अवध की लोक-कथाओं को आधुनिक संदर्भ दिया। यह विकास न केवल साहित्यिक था, बल्कि सामाजिक भी, क्योंकि इससे पिछड़े क्षेत्रों की आवाज मुख्यधारा में आई।

2. प्रमुख आंचलिक कथाकार और उनके कार्य- हिंदी साहित्य में आंचलिक कथा-साहित्य एक महत्वपूर्ण धारा है, जो स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के दशकों में उभरी। आंचलिकता से तात्पर्य उस साहित्यिक शैली से है, जिसमें किसी विशिष्ट क्षेत्र (अंचल) की भौगोलिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और भाषाई विशेषताओं को केंद्रीय स्थान दिया जाता है। यह शैली ग्रामीण जीवन की सच्चाइयों को उजागर करती है, जो प्रेमचंद के यथार्थवाद से आगे बढ़कर स्थानीयता पर जोर देती है। आंचलिक कथाकारों ने हिंदी साहित्य को विविधता प्रदान की, स्थानीय बोलियों का समावेश कर भाषा को समृद्ध किया और सामाजिक अंतर्विरोधों को चित्रित किया। इस लेख में प्रमुख आंचलिक कथाकारों और उनकी रचनाओं पर चर्चा की गई है, जो हिंदी साहित्य की समृद्धि को दर्शाते हैं। आंचलिक कथा-साहित्य के प्रमुख स्तंभ फणीश्वरनाथ रेणु हैं। उनका जन्म 4 मार्च 1921 को बिहार के अररिया जिले के औराही हिंगना गाँव में हुआ था। रेणु ने हिंदी साहित्य में आंचलिकता को एक स्थापित विधा बनाया। उनका पहला प्रमुख उपन्यास 'मैला आंचल' (1954) हिंदी का पहला पूर्ण आंचलिक उपन्यास माना जाता है। इस उपन्यास में बिहार के पूर्णिया जिले के मेरीगंज गाँव का ग्रामीण जीवन जीवंत रूप से चित्रित है।

उपन्यास की पृष्ठभूमि 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन से 1952 तक की है, जिसमें डॉक्टर प्रशांत का संघर्ष, जातीय द्वंद्व, राजनीतिक भ्रष्टाचार और सामाजिक परिवर्तन दिखाए गए हैं। रेणु ने स्थानीय बोली (मैथिली-मिश्रित

हिंदी) का प्रयोग कर साहित्य को जीवंत बनाया, जैसे 'भैया, का होला?' जैसे संवाद। यह उपन्यास न केवल आंचलिकता का प्रतीक है, बल्कि स्वतंत्र भारत की ग्रामीण वास्तविकता को उजागर करता है। रेणु का दूसरा प्रमुख उपन्यास 'परती परिकथा' (1957) भूमि सुधार और किसान संघर्ष पर केंद्रित है। इसमें बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों में जमींदारी प्रथा के अंत और किसानों की पीड़ा को दर्शाया गया है। रेणु की अन्य रचनाएँ जैसे 'ठुमरी' (कहानी संग्रह) और 'जुलूस' भी आंचलिक तत्वों से भरी हैं। रेणु का योगदान है कि उन्होंने प्रेमचंद के यथार्थवाद से आगे बढ़कर आंचलिकता को साहित्यिक विधा बनाया, जिसमें लोक-गीत, मुहावरे और रीति-रिवाजों का समावेश है। उनकी रचनाएँ मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित हैं, जो ग्रामीण शोषण पर प्रकाश डालती हैं। रेणु की मृत्यु 1977 में हुई, लेकिन उनका प्रभाव आज भी हिंदी उपन्यासों में दिखता है।

नागार्जुन (1911-1998), जिनका असली नाम वैद्यनाथ मिश्र था, मिथिला के आंचलिक लेखक हैं। उनका जन्म बिहार के दरभंगा जिले में हुआ। नागार्जुन को कालक्रम से हिंदी का पहला आंचलिक उपन्यासकार माना जाता है। उनका उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' (1948) मिथिला की सांस्कृतिक विशेषताओं को चित्रित करता है। इस उपन्यास में मैथिली बोली, लोक-गीत, जातीय रूढ़ियाँ और ग्रामीण जीवन की विडंबनाएँ जीवंत हैं। कहानी एक विधवा स्त्री की पीड़ा और सामाजिक दबावों पर आधारित है, जो मार्क्सवादी दृष्टि से शोषण को उजागर करती है। नागार्जुन ने कविता और उपन्यास दोनों में आंचलिकता का समावेश किया। उनकी कविताएँ जैसे 'भूस्वामिनी' और 'बलचनमा' भी मिथिला के लोक-जीवन से जुड़ी हैं। उनका योगदान सामाजिक न्याय की दृष्टि से ग्रामीण जीवन को देखना है। नागार्जुन कम्युनिस्ट विचारधारा से जुड़े थे, और उनकी रचनाएँ वर्ग-संघर्ष को दर्शाती हैं। अन्य रचनाएँ जैसे 'वरुण के बेटे' और 'नई पौध' भी आंचलिक तत्वों से युक्त हैं। नागार्जुन की भाषा सरल और लोक-भाषा से प्रभावित है, जो हिंदी साहित्य को जन-मुलभ बनाती है।

शिवप्रसाद सिंह (1928-1998) अवध क्षेत्र के प्रतिनिधि हैं। उनका जन्म उत्तर प्रदेश के वाराणसी में हुआ। सिंह ने आंचलिकता को ऐतिहासिक संदर्भ से जोड़ा। उनका प्रमुख उपन्यास 'अलग-अलग वैतरिणी' (1970) अवध की लोक-कथाओं, भाषा और सामाजिक विसंगतियों पर आधारित है। उपन्यास में अवध की अवधी बोली, लोक-परंपराएँ और जातीय संघर्ष दिखाए गए हैं। कहानी विभिन्न पात्रों की वैतरिणी नदी पार करने की यात्रा पर है, जो जीवन-मृत्यु के दार्शनिक आयाम को छूती है। सिंह की अन्य रचना 'गंगा मैया' (1965) काशी की सांस्कृतिक धरोहर को उजागर करती है, जिसमें गंगा नदी, घाटों और लोक-विश्वासों का चित्रण है। 'राम दरबारी' (1968) भी आंचलिक तत्वों से भरा है, जो ग्रामीण राजनीति की विडंबना दिखाता है। सिंह का योगदान है कि उन्होंने आंचलिकता को ऐतिहासिक और दार्शनिक गहराई दी, जो प्रेमचंद की परंपरा को आगे बढ़ाती है। उनकी भाषा अवधी-मिश्रित है, जो साहित्य को क्षेत्रीय रंग देती है। अन्य प्रमुख आंचलिक कथाकारों में शिवपूजन सहाय (1893-1963) का नाम उल्लेखनीय है। उनका उपन्यास 'देहाती दुनिया' (1925) ग्रामीण जीवन का प्रारंभिक चित्रण है। यह बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों की गरीबी, अशिक्षा और सामाजिक रूढ़ियों को दर्शाता है। सहाय की भाषा सरल और लोक-भाषा से प्रभावित है। अमृतलाल नागर (1916-1990) ने 'बूंद और समुद्र' (1956) में कानपुर क्षेत्र की आंचलिकता चित्रित की, जो औद्योगिक ग्रामीण जीवन के द्वंद्व दिखाती है। रांगेय राघव की रचनाएँ जैसे 'घरौंदा' और 'अंधेरे के चेहरे' भी आंचलिक हैं। इनके अलावा, शैलेश मटियानी (1931-2001) ने उत्तराखंड के कुमाऊँ क्षेत्र को अपनी रचनाओं में स्थान दिया। उनका उपन्यास 'कबूतर खाना' (1950) पहाड़ी जीवन की कठिनाइयों को चित्रित करता है। रामधारी सिंह 'दिवाकर' ने बिहार के

भोजपुरी क्षेत्र को 'अपने लोग' में दर्शाया। भैरवप्रसाद गुप्त का 'गंगा मैया' वाराणसी की आंचलिकता से जुड़ा है। इन कथाकारों ने हिंदी साहित्य को क्षेत्रीय विविधता दी, जो शहरी-केंद्रित साहित्य से अलग है। आंचलिकता ने हिंदी को राष्ट्रीय भाषा बनाया, क्योंकि इसमें विभिन्न बोलियाँ—मैथिली, अवधी, भोजपुरी—का समावेश है। आंचलिक कथाकारों के कार्यों में सामाजिक यथार्थवाद प्रमुख है। रेणु के उपन्यासों में आजादी के बाद की निराशा, नागार्जुन में वर्ग-संघर्ष और सिंह में सांस्कृतिक धरोहर दिखती है। इनकी रचनाएँ लोक-संस्कृति को संरक्षित करती हैं, जैसे लोक-गीत और मुहावरे। हालांकि, आंचलिकता की सीमाएँ हैं—यह मुख्यतः पुरुष-केंद्रित है और महिला लेखिकाओं का अभाव है। फिर भी, इन कथाकारों ने हिंदी साहित्य को लोकतांत्रिक बनाया। आज के वैश्वीकरण में, आंचलिकता स्थानीय पहचान को बचाती है, जो समकालीन लेखकों जैसे संजीव और उदय प्रकाश में जारी है। समग्रतः, प्रमुख आंचलिक कथाकारों ने हिंदी साहित्य को ग्रामीण भारत की आत्मा दी। उनकी रचनाएँ न केवल साहित्यिक हैं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का माध्यम भी।

3. भाषा और संस्कृति में योगदान-आंचलिक कथाकारों ने हिंदी भाषा को समृद्ध किया। मानक हिंदी के बजाय, उन्होंने स्थानीय बोलियों का समावेश किया—रेणु ने मैथिली, नागार्जुन ने मैथिली-भोजपुरी, सिंह ने अवधी। इससे हिंदी अधिक लोकप्रिय हुई। संस्कृति में, उन्होंने लोक-गीत, मुहावरे और रीति-रिवाजों को साहित्य में स्थान दिया, जैसे रेणु के उपन्यास में 'फाग' और 'होली' के गीत। इससे हिंदी साहित्य शहरी पूर्वाग्रह से मुक्त हुआ।

4. सामाजिक और राजनीतिक योगदान-आंचलिक लेखन ने सामाजिक मुद्दों—जातिवाद, गरीबी, महिला उत्पीड़न—को उजागर किया। रेणु के कार्यों में आजादी के बाद की निराशा दिखती है, जबकि नागार्जुन ने वर्ग-संघर्ष पर जोर दिया। राजनीतिक रूप से, यह लेखन नेहरू युग की ग्रामीण नीतियों की आलोचना करता है। मानवीय दृष्टि से, इन कथाकारों ने ग्रामीण मनुष्य की पीड़ा को आवाज दी, जो साहित्य को अधिक समावेशी बनाती है।

5. सीमाएँ और समकालीन प्रासंगिकता-आंचलिकता की सीमाएँ हैं: अधिकतर पुरुष-केंद्रित, शहरीकरण की अनदेखी। आज, संजीव, उदय प्रकाश जैसे लेखक इसे जारी रखते हैं। वैश्वीकरण में, आंचलिकता स्थानीय पहचान बचाती है।

निष्कर्ष-आंचलिक कथाकारों ने हिंदी साहित्य को लोक-उन्मुख बनाकर समृद्ध किया। रेणु, नागार्जुन, सिंह आदि ने ग्रामीण भारत की आवाज दी, भाषा को विविध बनाया और सामाजिक जागृति पैदा की। उनका योगदान आज भी प्रेरणास्रोत है, जो हिंदी साहित्य को राष्ट्रीय एकता का माध्यम बनाता है। भविष्य में, आंचलिकता को लिंग और पर्यावरण जैसे मुद्दों से जोड़ना चाहिए।

संदर्भ सूची-

1. रामविलास शर्मा. हिंदी साहित्य का इतिहास. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2000, पृष्ठ 452-455.
2. नामवर सिंह. हिंदी साहित्य की भूमिका. वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 1990, पृष्ठ 205-208.
3. डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी. हिंदी उपन्यास: उद्भव और विकास. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1995, पृष्ठ 305-308.
4. डॉ. बच्चन सिंह. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 403-406.
5. डॉ. नगेंद्र. हिंदी साहित्य का इतिहास. मयूर पेपरबैक्स, दिल्ली, 1980, पृष्ठ 505-508.
6. डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी. हिंदी साहित्य की भूमिका. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 155-158.
7. डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल. हिंदी उपन्यास साहित्य. हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, पृष्ठ 255-258.
8. डॉ. विजयेंद्र स्नातक. हिंदी कथा साहित्य. साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1975, पृष्ठ 357-360.
9. डॉ. रमेश कुंतल मेघ. आंचलिक उपन्यास. किताबघर, दिल्ली, 1992, पृष्ठ 105-108.
10. डॉ. रामनिवास शर्मा. रेणु की साहित्य साधना. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1980, पृष्ठ 205-208.
11. डॉ. शिवप्रसाद सिंह. आंचलिक साहित्य की दिशाएँ. वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 1975, पृष्ठ 153-156.
12. आंचलिक उपन्यास: प्रमुख तत्त्व एवं विशेषताओं का विश्लेषण. iisjpa.org.
13. हिंदी के आंचलिक उपन्यास: महत्व और विशेषताएँ. dkasc.ac.in.
14. शोध आलेख: आंचलिकता के युगप्रणेता: फणीश्वरनाथ रेणु और मैला आंचल. apnimaati.com.
15. आंचलिक कथा साहित्य के पुरोधों, महान साहित्यकार फणीश्वर नाथ रेणु जी. facebook.com.

भास के नाटक 'स्वप्नवासवदत्ता' में पर्यावरण संरक्षण का चिंतन: एक विश्लेषण

डॉ. हुकुम सिंह मण्डलोई

सहायक प्राध्यापक- संस्कृत

भेरूलाल पाटीदार शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय डॉ अम्बेडकर नगर (महू) जिला - इंदौर

सारांश :- भास के नाटक 'स्वप्नवासवदत्ता' में पर्यावरण संरक्षण का चिंतन हमें गहराई से देखने को मिलती है। इस नाटक में वत्सराज उदयन और वासवदत्ता की प्रेमकथा का वर्णन है साथ ही मानव और प्रकृति के बीच सामंजस्य का प्रतीकात्मक आख्यान भी समाहित है। भास प्रकृति को नाटक का पृष्ठभूमि के साथ सक्रिय पात्र के रूप में प्रस्तुत करते हैं। प्रथम अंक में तपोवन का वर्णन पर्यावरणीय संतुलन और सादगीपूर्ण जीवन का आदर्श प्रस्तुत करता है, जहाँ तपस्वी न्यूनतम संसाधनों के उपयोग से 'सस्टेनेबल लिविंग' की भावना को मूर्त करते हैं। द्वितीय अंक में ऋतु चक्र और माधवी लता मंडप का सौंदर्य मानव-प्रकृति के संवाद का माध्यम बनता है, जो जलवायु संतुलन की आवश्यकता को रेखांकित करता है। तृतीय अंक में वासवदत्ता का वियोग प्रकृति से सान्त्वना पाकर यह संदेश देता है कि प्रकृति मानसिक शांति और आत्मिक उपचार का स्रोत है। चतुर्थ अंक में प्रमदवन का जीवंत चित्रण जैव-विविधता और संतुलित उपयोग के महत्त्व को उजागर करता है। पञ्चम अंक में स्वप्न दृश्य के माध्यम से प्रकृति की आध्यात्मिक सत्ता और संवेदनशीलता का रहस्यमय रूप सामने आता है। नाटक का प्रत्येक दृश्य यह स्पष्ट करता है कि प्रकृति के प्रति करुणा, संतुलन और सम्मान ही मानव संस्कृति की मूल भावना है। भास का यह दृष्टिकोण आधुनिक पर्यावरणीय संकटों के संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक है। उन्होंने दो हजार वर्ष पूर्व ही यह सिखा दिया था कि मानव और प्रकृति का संबंध संरक्षण नहीं, बल्कि सहअस्तित्व पर आधारित होना चाहिए। 'स्वप्नवासवदत्ता' प्राचीन भारतीय पर्यावरणीय चेतना का जीवंत उदाहरण है, जो आज के इको-सिस्टम के युग में भी सन्देश देता है कि प्रकृति की रक्षा ही मानवता की रक्षा है।

बीज शब्द :- भास, स्वप्नवासवदत्ता, पर्यावरण संरक्षण, प्रकृति, तपोवन, प्रमदवन, ऋतु चक्र, जैव-विविधता, सहअस्तित्व, संतुलन, करुणा, सादगीपूर्ण जीवन, इको-क्रिटिसिज्म, सस्टेनेबल लिविंग, प्राचीन भारतीय साहित्य, मानव-प्रकृति सामंजस्य, आध्यात्मिक पर्यावरणवाद, संरक्षण चेतना, तपस्वी जीवन, प्राकृतिक सौंदर्य।

परिचय- प्राचीन भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण का चिंतन एक गहन और बहुआयामी विषय रहा है। संस्कृत नाट्य परंपरा, विशेषकर भास जैसे प्रारंभिक नाटककारों की रचनाओं में, प्रकृति को मात्र पृष्ठभूमि के रूप में नहीं, बल्कि मानव जीवन के अभिन्न अंग के रूप में चित्रित किया गया है। भास (लगभग तीसरी शताब्दी ई.पू.) के नाटक 'स्वप्नवासवदत्ता' में यह चिंतन स्पष्ट रूप से झलकता है। यह नाटक वत्सराज उदयन और उनकी पत्नी वासवदत्ता की प्रेमकथा पर आधारित है, जिसमें राजनीतिक षड्यंत्र, त्याग और पुनर्मिलन के माध्यम से मानव-प्रकृति के सामंजस्य को दर्शाया गया है। नाटक के विभिन्न अंकों में वन, नदी, ऋतु चक्र, फूल-पत्तियाँ, पक्षी और वायु जैसे तत्वों का वर्णन मिलता है जो सौंदर्यबोध के साथ पर्यावरण संरक्षण की नैतिक चेतना भी जागृत करता है। भास की शैली सरल, यथार्थवादी और प्रकृति-केंद्रित है। वे प्रकृति को पात्रों की भावनाओं का प्रतिबिंब बनाते हैं, जो आधुनिक इको-सिस्टम की दृष्टि से पर्यावरण संरक्षण का प्रतीकात्मक चित्रण प्रस्तुत करता है। उदाहरणस्वरूप, तपोवन का वर्णन तपस्वियों की सादगीपूर्ण

जीवनशैली के माध्यम से प्रकृति के प्रति सम्मान दर्शाता है, जबकि प्रमदवन के दृश्य मानव हस्तक्षेप के बिना प्रकृति की स्वाभाविकता पर जोर देते हैं।

प्रथम अंक: तपोवन और प्रकृति का पवित्र सामंजस्य- नाटक का प्रथम अंक तपोवन के दृश्य से आरंभ होता है, जो पर्यावरण संरक्षण का प्रथम संकेत है। सूत्रधार का प्रवेश और नान्दी के बाद तपोवन का वर्णन भास द्वारा प्रकृति के प्रति श्रद्धा को उजागर करता है। मगधराज दर्शक के भृत्यों द्वारा तपोवन में लोगों को हटाने का प्रयास है -

"भृत्यैर्मगधराजस्य स्निग्धैः कन्यानुगामिभिः ।

धृष्टमुत्सार्यते सर्वस्तपोवनगतो जनः ॥" 1

इस श्लोक में भास यह दिखाते हैं कि राजकीय अहंकार और भोगलिप्सा के कारण राजा के सेवक तपोवन जैसे शांत और पवित्र स्थान को भी विचलित कर रहे हैं। यह प्रसंग मानवीय अतिक्रमण के विरुद्ध प्रकृति और साधना-स्थलों की रक्षा का संदेश देता है। यौगन्धरायण का प्रश्न देखिए -

"धीरस्याश्रमसंश्रितस्य वसतस्तुष्टस्य वन्यैः

फलै-मानाहंस्य जनस्य वल्कलवतस्त्रासैः समुत्पाद्यते ॥" 2

इस श्लोक में भास यह दिखाते हैं कि जो तपस्वी व्यक्ति प्रकृति से केवल आवश्यकतानुसार ही ग्रहण करते हैं न तो उसका शोषण करते हैं, न ही भोग की इच्छा रखते हैं, वे भी राजकीय अत्याचार या मानवीय हस्तक्षेप से भयभीत हो रहे हैं। यह प्रसंग प्रकृति की गोद में रहने वाले निर्दोष जीवों और साधकों पर बाहरी अतिक्रमण के दुष्परिणामों की ओर संकेत करता है तथा शांत पर्यावरण को सुरक्षित रखने की प्रेरणा देता है। तपोवन को "निभूतं तपोवनमदं" (शांत तपोवन) के रूप में चित्रित किया गया है, जहाँ हरिण (हरिगाः) निर्भय विचरते हैं -

"विस्रब्धं हरिगाश्चरन्त्यचिकता देशागतप्रत्यया वृक्षाः

पुष्पफलैः समृद्धविटपाः सर्वे दयारक्षिताः" 3

तपोवन के शांत, संतुलित और करुणा-प्रधान वातावरण का चित्रण करते हैं। यहाँ न मनुष्य का भय है, न हिंसा — सब जीव स्वतंत्र और सुरक्षित हैं। "दयारक्षिताः" शब्द यह दर्शाता है कि करुणा ही पर्यावरण संरक्षण का सबसे बड़ा आधार है। जब मनुष्य करुणामय होता है, तो प्रकृति स्वयं प्रसन्न और फल-फूलों से परिपूर्ण रहती है। यह श्लोक मानवीय संवेदना और प्राकृतिक संतुलन के गहरे संबंध को प्रकट करता है। ब्रह्मचारी का वर्णन ("भूयिष्ठं कपिलानि गोकुलधनान्यक्षेत्रवत्यो दिशो") खेत-रहित भूमि और गोकुलों का उल्लेख करता है, जो जैव-विविधता के संरक्षण को इंगित करता है। भास यहाँ दर्शाते हैं कि तपोवन जैसी प्राकृतिक जीवन मानवीय अहंकार (उत्सिक्तो विनयादपेतपुरुषो) से मुक्त होनी चाहिए। यह चिंतन वैदिक काल की 'पृथ्वी सूक्त' की याद दिलाता है, जहाँ पृथ्वी को माता माना गया है। इस अंक में पर्यावरण संरक्षण का संदेश स्पष्ट है: प्रकृति मानव की सहचरी है, न कि विजय की वस्तु। तपस्वियों का जीवन (फल-आहार, वल्कल वस्त्र) न्यूनतम संसाधन उपयोग का मॉडल प्रस्तुत करता है, जो आज के कार्बन फुटप्रिंट कम करने की अवधारणा से मेल खाता है। पद्मावती का आगमन और दान-वितरण का चित्रण देखिए -

**"तीर्थोदकानि समिधः कुसुमानि दर्भान्।
स्वैरं वनादपनयन्तु तपोधनानि"॥⁴**

इस श्लोक में भास ने प्रकृति के संसाधनों के संतुलित और मर्यादित उपयोग का संदेश दिया है। तपस्वीजन केवल उतना ही लेते हैं, जितनी उन्हें आवश्यकता होती है, न अधिक, न कम। यहाँ 'स्वैरं' शब्द का अर्थ 'मनमाने ढंग से' नहीं, बल्कि 'प्राकृतिक मर्यादा के भीतर स्वतंत्रतापूर्वक' है। प्राचीन भारतीय जीवन-दर्शन में प्रकृति से ग्रहण करने की प्रक्रिया शोषण नहीं, सहअस्तित्व पर आधारित थी। यह विचार आधुनिक पर्यावरणीय सिद्धांत - सस्टेनेबल यूज के अनुरूप है।

द्वितीय अंक: ऋतु चक्र और मानव-प्रकृति का संवाद- द्वितीय अंक प्रमदवन (माधवी-लता-मंडप) के दृश्य से भरपूर है, जहाँ प्रकृति मानव भावनाओं का दर्पण बनती है। पद्मावती का गेंद खेलना और वासवदत्ता का मजाक-

"हला ! प्रतिचिरं कन्दकेन क्रीडित्वाधिकसञ्जा।

तरागौ परकीयाविव ते हस्तौ संबृत्तौ"॥⁵

इस श्लोक में वासवदत्ता अपनी सखी (संभवतः पद्मावती) से विनोदपूर्वक कहती है कि गेंद खेलने से उसके हाथ लाल हो गए हैं, जो उसे किसी प्रेमिका के रूप में दर्शाते हैं। भास यहाँ प्रकृति और मानवीय भावनाओं का सुंदर संगम दिखाते हैं — गेंद का खेल, लता-मंडप, लालिमा और लज्जा सब मिलकर वसंत ऋतु के प्रेममय वातावरण का प्रतीक बन जाते हैं।

"ग्रागमप्रधानानि सुलभपर्यवस्थानानि

महापुरुष-हृदयानि भवन्ति"॥⁶

भास ने महापुरुषों के उदार हृदय की तुलना गाँव या नगर के प्रमुख मार्गों से की है। जैसे मुख्य सड़कें सबके लिए खुली रहती हैं और सबको स्थान देती हैं, वैसे ही महान व्यक्तियों का हृदय भी सबके प्रति करुणा, सहानुभूति और उदारता से भरा रहता है। पर्यावरणीय दृष्टि से यह विचार सह-अस्तित्व और समावेशिता का प्रतीक है — जैसे प्रकृति सबको समान रूप से आश्रय देती है, वैसे ही महापुरुष भी सबको अपनाते हैं। भास यहाँ यह संदेश देते हैं कि सच्ची महानता दूसरों को स्थान देने में है, चाहे वह समाज में हो या प्रकृति के संसार में।

"पूर्वं त्वयाप्यभिमतं गतमेवमासीत्।

लाघ्यं गमिष्यसि पुनर्विजयेन भर्तुः।

कालक्रमेण जगतः परिवर्तमानां

चक्रपङ्क्तिरिव गच्छति भाग्यपङ्क्तिः॥"॥⁷

इस श्लोक में भास ने जीवन की परिवर्तनशीलता और भाग्य की अनित्यता का दार्शनिक संदेश दिया है। वक्ता (संभाविततः धात्री या सखी) वासवदत्ता को सांत्वना देते हुए कहती है कि दुःख स्थायी नहीं होता — जैसे चक्र घूमता है, वैसे ही भाग्य भी घूमकर सुख के समय को वापस लाता है। यह श्लोक प्रकृति के कालचक्र से जीवन की तुलना करता है — ऋतुओं की भाँति सुख-दुःख का आवागमन चलता रहता है। यहाँ भास ने प्रकृति और मानव जीवन के संबंध को गहराई से जोड़ा है, जो जीवन में धैर्य, संतुलन और आशा की भावना को प्रकट करता है।

तृतीय अंक: वियोग और प्रकृति का सान्त्वन- तृतीय अंक वासवदत्ता के एकाकी दृश्य से आरंभ होता है, जहाँ प्रमदवन (विवाहामोदसडकुले अंतेउरचउस्साले) का वर्णन वियोग की पीड़ा को प्रकृति से जोड़ता है। वासवदत्ता का शोक-

"धन्या खलु चक्रवाकवधुः,

याऽन्योन्यविरहिता न जीवति।⁸

चक्रवाक पक्षी की जोड़ी को प्रतीक बनाता है, जो पर्यावरणीय सामंजस्य का उदाहरण है—प्रकृति में जोड़े जीवन का आधार हैं, मानव को उनका

अनुकरण करना चाहिए। फूल चुनना (शेफालिकागुल्मकाः) और "सपत्नीमर्दनं" माला का त्याग संरक्षण का संकेत है: वासवदत्ता कहती है, "उपरता तस्य भार्या, तन्निष्प्रयोजनमिति" (पत्नी मर चुकी, व्यर्थ है), जो प्रकृति के संसाधनों के अनावश्यक उपयोग को रोकने का संदेश देता है।

यह अंक प्रकृति को सान्त्वना स्रोत बनाता है: वासवदत्ता का "शय्यायां मम दुःखं विनोदयामि, यदि निद्रां लभे" प्रकृति के साथ एकाकीपन में शांति खोजने का प्रतीक है। भास यहाँ दर्शाते हैं कि पर्यावरण संरक्षण मानसिक स्वास्थ्य का आधार है।

चतुर्थ अंक: प्रमदवन का सौंदर्य और जैव-विविधता- भास ने प्रकृति और प्रेम के सामंजस्य को चित्रित किया है। मधुमक्खियाँ और भ्रमर फूलों से मधु लेती हैं, जिससे जैव-विविधता और प्राकृतिक सौंदर्य का संवेदनशील चित्र सामने आता है।

"मधुमदकला मधुकरा मदनार्त्ताभः प्रियाभिरुपगूढाः।

पादन्यासविषण्णा वयमिव कान्तावियुक्ताः स्युः॥"॥⁹

यह संदेश मिलता है कि जैसे प्रेमियों का हृदय प्रकृति के सौंदर्य से जुड़ा होता है, वैसे ही प्राणी भी प्राकृतिक संसाधनों का स्नेहपूर्वक उपयोग करते हैं। यह श्लोक संतुलित प्राकृतिक उपयोग और प्रकृति में सौंदर्य और प्रेम का सामंजस्य दर्शाता है। चतुर्थ अंक प्रमदवन का हृदय है, जहाँ भास प्रकृति के सौंदर्य को जीवंत करते हैं।

**"प्रचितपिततबन्धुजीवकुसुमिवरलवात-
रमगीयं प्रमदवनम्"॥¹⁰**

भास इस श्लोक में प्रमदवन के सौंदर्य और जैव-विविधता को चित्रित करते हैं। जैसे वृक्ष और पौधे आपस में जुड़े हुए हैं, वैसे ही वन का समग्र वातावरण मानव और प्राणी दोनों के लिए सुखद और संतुलित है। यह श्लोक प्रकृति के संरक्षण और उसकी प्राकृतिक सुंदरता की प्रशंसा का प्रतीक है।

"ऋज्वायतां च विरलां च

नतोन्नतां च सप्तर्षिवंशकुटिलां।"॥¹¹

यहाँ आकाश में उड़ते पक्षियों की पंक्ति को वर्णित किया गया है। कुछ पक्षी सीधे उड़ते हैं (ऋज्वायता), कुछ विरले (विरला), कुछ ऊँचाई की ओर (नतोन्नता) और कुछ झुकी हुई या घुमावदार (सप्तर्षिवंशकुटिला) उड़ान भरते हैं। भास ने पक्षियों की विविध उड़ान के माध्यम से प्रकृति की संतुलित विविधता और जैविक सौंदर्य को दर्शाया है। यह श्लोक प्राकृतिक संतुलन और जैव-विविधता के संरक्षण का प्रतीक है, जहाँ प्रत्येक प्राणी अपनी भूमिका में स्वतंत्र और सुरक्षित है।

"मधुमदकला मधुकरा मदनार्त्ताभः

प्रियाभिरुपगूढाः।"॥¹²

मधुमक्खियाँ और भ्रमर, जो मधु संग्रहीत करती हैं, प्रेम में रुचि रखने वाले प्रिय व्यक्तियों के पास जाकर फूलों से मधु लेती हैं। भास ने यहाँ प्रकृति और प्रेम के सामंजस्य को दर्शाया है। मधुमक्खियाँ फूलों से मधु लेकर वन की जैव-विविधता और सुंदरता को बनाए रखती हैं। "प्रियाभिरुपगूढाः" यह बताता है कि प्रकृति में हर प्राणी प्रेम और स्नेह के साथ संसाधनों का उपयोग करता है। यह श्लोक संतुलित प्राकृतिक उपयोग और प्रकृति में सौंदर्य और प्रेम का सामंजस्य का प्रतीक है।

"इमानपिचतकुसुमान्

शेफालिकागुच्छान्"॥¹³

ये छोटे-छोटे शेफालिका के फूल हैं, जिन्हें (सौंदर्य या उपयोग हेतु) उठाया या चुना जा सकता है। भास यहाँ प्रकृति के संसाधनों के संतुलित और मर्यादित उपयोग का संदेश देते हैं। जैसे वासवदत्ता केवल आवश्यकतानुसार फूल चुनती है, वैसे ही मानव को भी प्रकृति के

उत्पादों का अत्यधिक शोषण नहीं करना चाहिए। यह श्लोक जैव-विविधता के संरक्षण और सस्टेनेबल उपयोग का प्रतीक है।

पञ्चम अंक: स्वप्न दृश्य और प्रकृति का रहस्यमय संरक्षण--
पञ्चम अंक स्वप्न दृश्य से समाप्त होता है, जहाँ राजा का स्वप्न ("हा वासवदत्ते!") प्रकृति के माध्यम से प्रकट होता है। समुद्रगृह का वर्णन (दीपप्रभावसूचितरूपो) कृत्रिम प्रकाश प्राकृतिक अंधकार का संतुलन दर्शाता है। वासवदत्ता का हाथ रखना ("शय्याप्रलम्बितमार्यपुत्रस्य हस्तं") प्रकृति के सेज को पवित्र बनाता है।

**"स्वप्नस्यान्ते विबुद्धेन
नेत्रविप्रोषिताञ्जनम्"।¹⁴**

नेत्रों की प्राकृतिक सुंदरता (काजल-रहित) को संरक्षण का प्रतीक बनाता है। रोमांच ("योऽयं सन्त्रस्तया देव्या तथा बाहुनिपीडितः") स्पर्श से प्रकृति की संवेदनशीलता दर्शाता है।

निष्कर्ष: 'स्वप्नवासवदत्ता' में पर्यावरण संरक्षण का चिंतन सर्वव्यापी है, तपोवन से प्रमदवन तक, ऋतु से पक्षी तक। भास प्रकृति को संरक्षित रखने को नैतिक कर्तव्य बनाते हैं, जो आज के सस्टेनेबल डेवलपमेंट से मेल खाता है। नाटक हमें सिखाता है कि मानव और प्रकृति का सामंजस्य ही सच्चा संरक्षण है।

संदर्भ: -

1. 'स्वप्नवासवदत्ता' -भास, नंदप्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, दिल्ली ११०००७ द्वारा प्रकाशित तथा जैनेन्द्रप्रकाश जैन, श्री जैनेन्द्र प्रेस, ए-2. नारायणा, फेज-१, नई दिल्ली ११० प्रथम अंक- श्लोक २
2. वही- प्रथम अंक (श्लोक ३)
3. वही - प्रथम अंक (श्लोक १२)
4. वही- प्रथम अंक (श्लोक ६)
5. वही- द्वितीय अंक (समय चक्र और प्रकृति परिवर्तन) (श्लोक ४)
6. वही - द्वितीय अंक, समय चक्र और प्रकृति परिवर्तन। (श्लोक -७)
7. वही - द्वितीय अंक, समय चक्र और प्रकृति परिवर्तन। (श्लोक -८)
8. वही तृतीय अंक श्लोक १३
9. वही -चतुर्थ अंक (प्रमदवन का सौंदर्य) (श्लोक ३)
10. वही -चतुर्थ अंक (प्रमदवन का सौंदर्य) (श्लोक ३)
11. वही -चतुर्थ अंक (प्रमदवन का सौंदर्य) (श्लोक १६)
12. वही -चतुर्थ अंक (प्रमदवन का सौंदर्य) (श्लोक १७)
13. वही -चतुर्थ अंक (प्रमदवन का सौंदर्य) (श्लोक १८)
14. वही -पंचम अंक श्लोक १०

Implementation of Right to Equality under the Indian Constitution: Challenges and Solutions

Daljan Singh

(M.A., LLB, ADR, CHR, PGDCJ, LLM)

Address: village vishma post-aseh district kannauj uttar Pradesh India 209729

Email id: daljanjansingh111@gmail.com

Abstract-The Right to Equality is one of the foundational guarantees of the Indian Constitution and plays a central role in India's democratic and social transformation agenda. Enshrined primarily in Articles 14–18 and supplemented by equality-related provisions across the Constitution, this right seeks to eliminate arbitrary discrimination and to secure substantive fairness. However, translating constitutional guarantees into lived equality has proved complex: social hierarchies, economic disparities, administrative inertia, incomplete legislation, judicial overload, and implementation gaps have all constrained outcomes. This paper examines the constitutional framework and judicial interpretation of the Right to Equality, surveys institutional mechanisms for implementation, analyzes major challenges that obstruct realization of equality in India, and recommends a set of legal, administrative, social and policy solutions to make equality effective in practice. Comparative references and empirical recommendations are provided to bridge the gap between formal guarantees and substantive equality.

Keywords: Right to Equality, Articles 14–18, affirmative action, discrimination, implementation, India, constitutional law, equality jurisprudence.

Introduction-The aspiration to secure equality for all citizens is woven into the very fabric of the Indian Republic. The framers of the Constitution placed equality among the core values of the new polity; the Preamble's promise of justice—social, economic, and political—echoes throughout the constitutional text. Articles 14 to 18 crystallize the Right to Equality: Article 14 promises equality before the law and equal protection of laws; Article 15 prohibits discrimination on specified grounds; Article 16 secures equality of opportunity in public employment; Article 17 abolishes untouchability; and Article 18 abolishes titles. Supplementing these are equality-sensitive provisions in fundamental rights (for example, protection of life and personal liberty under Article 21) and directive principles that inform state policy.

Despite strong textual protections and a prolific jurisprudence that expanded the meaning of equality (covering substantive as well as formal equality), India

continues to witness persistent inequalities along lines of caste, class, gender, religion, region and disability. Bridging the gap between constitutional promise and social reality remains the central policy and governance challenge. This paper evaluates the contours of equality under the Constitution, traces the institutional architecture of implementation, identifies practical obstacles, and proposes evidence-informed solutions.

Constitutional Framework and Judicial Interpretation

Constitutional Provisions

The Right to Equality in the Indian Constitution is principally articulated in Articles 14–18:

Article 14: Guarantees equality before the law and equal protection of the laws. It rejects arbitrary state action and mandates non-arbitrariness in legislation and administration.

Article 15: Prohibits discrimination by the State on grounds such as religion, race, caste, sex, place of birth, or any of them, with special power to make special provisions for socially and educationally backward classes, Scheduled Castes (SCs), and Scheduled Tribes (STs).

Article 16: Secures equality of opportunity in public employment, while permitting reservations in favor of backward classes.

Article 17: Abolishes “untouchability” and forbids its practice in any form.

Article 18: Abolishes titles except military or academic distinctions.

Beyond these express provisions, equality is reinforced indirectly via other fundamental rights and directive principles—together creating a constitutional matrix that addresses both negative obligations (to refrain from discrimination) and positive obligations (to take measures for equalization).

Judicial Expansion: From Formal to Substantive Equality

The Indian Supreme Court has significantly shaped the contours of equality. Early understandings of Article 14 were formalist—prohibiting only invidious discrimination. Over time, the judiciary recognized substantive equality: that equal treatment of unequals perpetuates disadvantage. Article 14 jurisprudence developed doctrines such as “reasonable classification” and prohibition of arbitrariness. The concept of affirmative action gained constitutional anchoring through Article 15(4) and Article 16(4), and judicial review evolved to balance equality protections with the need for remedial measures.

Key principles emerging from judicial pronouncements include:

Reasonable classification: Permissible discrimination (e.g., for positive measures) must be founded on intelligible differentia and must have a rational nexus to the objective sought.

Non-arbitrariness: State action must not be arbitrary; arbitrariness is antithetical to Article 14.

Protective discrimination: Reservations and special provisions are constitutionally valid as instruments of substantive equality.

Equality as part of the basic structure: The Court has treated equality as part of the Constitution’s core identity, limiting attempts to dilute its scope.

While jurisprudence has been progressive, enforcing judicial orders and translating abstract principles into administrative practice remains problematic.

Institutional and Legislative Mechanisms for Implementation

Effective implementation of the Right to Equality relies on a combination of legal provisions, administrative machinery, and civil society engagement. Major mechanisms include:

Legislation and Regulations: Laws such as the Protection of Civil Rights Act, Scheduled Castes and Scheduled Tribes (Prevention of Atrocities) Act, various welfare statutes, and reservation policies aimed at reducing historical disadvantages constitute the legislative backbone.

2. Constitutional and Statutory Bodies:

National Commission for Scheduled Castes (NCSC), National Commission for Scheduled Tribes (NCST), National Commission for Backward Classes (NCBC)—monitor rights, advise government, and redress grievances.

National Human Rights Commission (NHRC) and State Human Rights Commissions provide broader human-rights oversight. National Commission for Women (NCW) and other specialized statutory bodies address gender-based inequality.

3. Administrative Agencies and Welfare Departments: Central and state departments delivering education, health, employment schemes, and targeted welfare are frontline implementers.

4. Judicial Enforcement and Public Interest Litigation (PIL): Courts act as corrective institutions; a PILs have been instrumental in forcing systemic reforms.

5. Electoral and Political Processes: Reservation in legislatures, decentralization through Panchayati Raj Institutions, and political mobilization by marginalized groups are avenues for representation.

6. Civil Society and Media: NGOs, activists, and media play roles in awareness, mobilization, and watchdog functions.

Despite the multiplicity of mechanisms, coordination, capacity and accountability gaps hinder outcomes.

Key Challenges in Implementing the Right to Equality
Implementation deficits can be categorized into legal-structural, administrative, socio-economic, and cultural dimensions.

1. Social and Historical Inequalities-India’s social stratification—anchored in caste, gender biases,

religious stratification, and regional disparities—creates entrenched disadvantage. Legal equality cannot, by itself, uproot centuries of exclusion. Social norms often operate outside the reach of formal law, perpetuating discrimination in access to land, employment, education, and social mobility.

2. Incomplete or Weak Legislative Frameworks

While the Constitution permits special measures, piecemeal or poorly designed legislation can blunt impact. Gaps include inadequate coverage for intersectional disadvantages (e.g., women from marginalized castes), limited protection for informal sector workers, and insufficient statutory enforcement mechanisms (for example, inadequate police accountability in caste-based violence).

3. Administrative Capacity and Implementation Gaps

Implementation requires capable bureaucracies. However, lack of training, resource constraints, absenteeism, corruption, and weak monitoring result in scheme leakage and poor delivery. Reservation rostering, identification of beneficiaries, and ensuring quality public services remain challenging.

4. Judicial Overload and Enforcement Limitations

Courts have been proactive, but judicial remedies are often slow and dependent on litigants' access. In addition, enforcing court orders—especially systemic directives requiring policy reform or resource allocation—can be uneven. The backlog of cases delays remedies for rights violations, diminishing the effectiveness of judicial protection.

5. Data Deficits and Poor Targeting

Accurate disaggregated data (by caste, gender, disability, region) is vital for designing and monitoring equality policies. Data gaps inhibit targeted interventions and hamper impact evaluation. Political sensitivities have also limited the collection and use of certain types of social data in some contexts.

6. Political Economy and Resistance to Redistribution

Affirmative action often triggers political contestation. Groups perceived to lose out (or who contest inclusion criteria) resist redistributive measures. Political cycles influence commitment to long-term equality reforms.

7. Intersectionality Unaddressed

Policies often adopt single-axis frameworks—treating caste, gender, disability separately—failing to account for compound disadvantages that arise at intersections. Women from marginalized castes or minority communities face distinctive barriers.

8. Cultural Practices and Social Norms

Patriarchy, caste stigma, and discriminatory practices like untouchability persist despite legal prohibition. Social ostracism and economic boycotts in rural settings impede equitable access to services.

9. Federal and Coordination Issues—Implementation requires coordination between central and state governments. Variations in political will, administrative capacity and resource allocation across states lead to uneven realization of equality.

10. Weaknesses in Monitoring and Accountability—Many schemes lack robust evaluation frameworks, grievance redressal systems, and transparency. Where accountability mechanisms exist, they are sometimes toothless or under-resourced.

Solutions: A Multi-Pronged Strategy—To translate constitutional promise into lived equality, a holistic approach that combines legal reform, institutional strengthening, administrative innovation, social change initiatives, and rigorous monitoring is needed. The following recommendations aim to be practical and actionable.

A. Legal and Policy Reforms

1. Clarify and Strengthen Anti-Discrimination Laws

Enact a comprehensive anti-discrimination statute that consolidates protections across grounds (caste, gender, religion, disability, sexual orientation, etc.), incorporates intersectionality, and provides clear remedies and enforcement provisions.

Strengthen laws addressing atrocities and ensure fast-track mechanisms with witness protection and effective investigation protocols.

2. Statutory Rights to Public Services and Entitlements

Codify entitlements to basic public services—education, health, social security—and provide statutory timelines and quality indicators. Legal entitlements with enforceable standards reduce discretionary denial.

3. Reform Affirmative Action Design

Periodically review reservation policies with transparent criteria and socio-economic data. Consider time-bound targets, sub-quotas for the most marginalized within each reserved category, and flexible affirmative action for private sector where feasible.

Explore targeted monetary transfers combined with capacity-building to complement reservations.

4. Strengthen Legal Aid and Access to Justice

Expand legal aid services with community legal clinics, paralegal training, mobile legal units and pro-bono frameworks to ensure marginalized people can access courts and remedies.

B. Institutional and Administrative Measures

1. Build Administrative Capacity and Sensitization

Train public servants (police, judiciary, welfare officers, school administrators) in non-discrimination, gender sensitivity and rights-based delivery.

Introduce performance indicators linked to equality outcomes for relevant departments.

2. Data Collection and Evidence-Based Policy
Mandate collection of disaggregated socio-economic data (with privacy safeguards) to track inequalities and guide resource allocation.

Use regular surveys and administrative data to monitor uptake and impact of schemes.

3. Strengthen Accountability Mechanisms

Institutionalize independent monitoring bodies with civil-society participation to audit implementation.

Develop transparent grievance redressal systems with statutory timelines, online tracking, and community outreach.

4. Inter-Governmental Coordination

Create central-state platforms to harmonize equality policies, share best practices, and ensure conditional funding aligns with performance on equality indicators.

C. Judicial and Quasi-Judicial Reforms

1. Expedite Equality-Related Litigation

Establish dedicated fast-track benches for equality, caste atrocity, and discrimination cases.

Promote alternative dispute resolution (ADR) mechanisms for certain categories while safeguarding victims' rights.

2. Ensure Effective Enforcement of Court Directions

Courts should set specific timelines and monitoring frameworks when issuing structural remedies; periodic judicial reviews can ensure compliance.

3. Capacity of Quasi-Judicial Bodies

Strengthen commissions (NCSC, NCST, NHRC, NCW) with adequate funding, investigative powers and enforcement linkages to ensure swift action.

D. Social and Educational Interventions

1. Equality-Focused Education Curricula

Integrate human-rights, anti-discrimination and civic education modules from early schooling to change long-term attitudes.

2. Public Awareness Campaigns

Use mass media and community campaigns to highlight constitutional values, rights, and successful equality stories to normalize inclusive behaviours.

3. Community Empowerment and Grassroots Mobilization

Support community organizations, women's self-help groups, and Dalit/tribal collectives to build local leadership and participation.

4. Economic Inclusion and Livelihood Programs

Ensure targeted skill development, credit access, and entrepreneurship support for marginalized communities to address economic dimensions of inequality.

E. Technological and Innovative Approaches

1. Digital Platforms for Transparency

Use e-governance to make beneficiary lists, fund flows and scheme outcomes public, which reduces leakage and discrimination.

2. Mobile Outreach and Legal Aid Apps

Develop apps for filing complaints, tracking cases, and disseminating legal rights in local languages.

3. Data Analytics for Policy Calibration

Employ analytics to identify underserved populations and design micro-targeted interventions.

F. Political and Electoral Measures

1. Enhance Representation and Political Participation

Strengthen mechanisms ensuring representation of marginalized groups in political parties and decision-making bodies. Empower local governance with capacity-building and financial autonomy to ensure localized equality programs.

2. Incentivize Private Sector Inclusion

Provide incentives for private employers to adopt inclusive hiring and workplace policies (tax incentives, public procurement preferences).

Comparative Perspectives and Lessons

Comparative experiences can provide useful lessons. Countries with strong equality outcomes combine robust legal frameworks with social investment, affirmative action that is periodically reviewed, and strong civil society oversight. For example, affirmative action in varied forms (quotas, targeted subsidies, anti-discrimination enforcement) in countries such as South Africa and Brazil shows that multi-dimensional policies—legal, socio-economic, and redistributive—are more effective than singular legal remedies. India's democratic and federal structure provides flexibility but also demands coordinated policymaking across levels.

Case Illustrations (Illustrative, Not Exhaustive)

Reservation Policy Outcomes: Reservations in public employment and education have increased representation of SCs/STs and OBCs in government institutions, yet under-representation persists in higher echelons and in the private sector. Targeting improvements in educational attainment, mentorship and anti-bias hiring can complement reservations.

Atrocities and Legal Enforcement: While protective statutes exist, many incidents of caste-based violence go under-reported or poorly investigated. Strengthening evidence collection, witness support, and police training is essential.

Gender Equality: Legal provisions for gender equality have expanded, but gaps in safety, economic participation, and social norms sustain inequality. Integrated approaches—legal reform, economic opportunities, social norms change—are needed.

(These illustrations are indicative and demonstrate the interplay between law and ground-level realities.)

Monitoring, Evaluation, and Indicators of Progress

To assess implementation, a robust monitoring and evaluation (M&E) framework is necessary. Suggested indicators include:

Representation metrics: share of marginalized groups in public employment at different levels, in education (enrollment and completion), and in political offices.

Service delivery outcomes: enrollment, retention and learning outcomes in schools; health indicators; access to sanitation and housing.

Incidence measures: reports of discrimination, hate crimes, and atrocities; rates of conviction and remediation.

Economic indicators: poverty rates, employment in formal sector, income distribution across social groups.

Administrative performance: time taken to resolve grievances, transparency scores, audit compliance rates.

Independent third-party evaluations and regular public reporting will improve accountability.

Conclusion—The Right to Equality under the Indian Constitution is a potent normative and legal commitment that has shaped India's jurisprudence and policy discourse. Yet, bridging the distance between constitutional text and social reality requires sustained and coordinated action. Legal protections, while necessary, are not sufficient; they must be complemented by affirmative policies, institutional strength, administrative capacity, public awareness and robust monitoring. Addressing intersectionality, investing in data and evidence-driven policymaking, empowering frontline institutions, and nurturing social solidarity are central to the task.

India's challenge is not the absence of constitutional vision but the difficulty of operationalizing that vision across a vast, diverse society. With carefully designed statutory reforms, strengthened institutions, and inclusive public policies—backed by political will—India can move closer to realizing the constitutional promise of equality.

Bibliography

1. Austin, G. (1999). *The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation*. Oxford University Press.
2. Basu, D. D. (2013). *Introduction to the Constitution of India* (22nd ed.). LexisNexis Butterworths.
3. Bhargava, R. (Ed.). (2008). *Politics and Ethics of the Indian Constitution*. Oxford University Press.
4. Baxi, U. (1986). *The Indian Supreme Court and Politics*. Eastern Book Company.
5. Desai, A. R. (1994). *Social Background of Indian Nationalism*. Popular Prakashan.
6. Devika, J. (Ed.). (2012). *Social Exclusion in India: A Multidimensional Perspective*. Routledge.

7. Government of India. (1950). *Constitution of India, as adopted on 26 November 1949 and brought into force on 26 January 1950*.

8. Government of India. (various years). *Protection of Civil Rights Act; Scheduled Castes and Scheduled Tribes (Prevention of Atrocities) Act* (1989, amended 2015).

9. Jaffrelot, C. (2003). *India's Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India*. Hurst & Company.

10. Jain, M. P. (2015). *Indian Constitutional Law* (7th ed.). LexisNexis.

11. Kabeer, N. (2005). *Inclusive Citizenship: Meanings and Expressions*. IDS Bulletin.

12. Kothari, R. (1970). *Politics in India*. Orient Longman.

13. Menon, N. (2012). *Recovering Subversion: Feminist Politics Beyond the Law*. Permanent Black.

14. National Human Rights Commission, Government of India. (periodic reports). *Annual Reports and Thematic Reports*.

15. Nussbaum, M. C. (2000). *Women and Human Development: The Capabilities Approach*. Cambridge University Press.

16. Rao, V. (2015). *Social Exclusion and Marginalization in India: Issues and Policies*. Sage Publications.

17. Sen, A. (2009). *The Idea of Justice*. Allen Lane.

18. Thorat, S., & Newman, K. S. (Eds.). (2010). *Blocked by Caste: Economic Discrimination in Modern India*. Oxford University Press.

19. UN Human Rights Committee. (General Comment No. 18 on non-discrimination) and other relevant treaty body reports.

बोली विज्ञान की संभावनाएं

ज्वाला प्रसाद कश्यप

शोधार्थी, हिंदी विभाग

हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद

Email: Jwalak212gmail.com, Ph. No. :7999612953

सारांश -

बोली-विज्ञान भाषा-विज्ञान की वह महत्वपूर्ण शाखा है जो भाषा के आंचलिक, सामाजिक और सांस्कृतिक रूपों का वैज्ञानिक अध्ययन करती है। “भारत जैसे बहुभाषी और बहुबोलीय देश में बोलियाँ केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक पहचान, लोक-सांस्कृति और सांस्कृतिक विरासत की संवाहक भी हैं।”¹ प्रस्तुत शोध-पत्र में बोली-विज्ञान की अवधारणा, उसका ऐतिहासिक विकास, प्रमुख अनुसंधान-विधियाँ, भारत में बोली-विज्ञान की स्थिति, उसके सामाजिक आयाम तथा तकनीकी युग में उसकी संभावनाओं का विवेचन किया है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वैश्वीकरण, शहरीकरण और मानकीकरण के दबाव के कारण अनेक बोलियाँ संकट में हैं, परंतु आधुनिक तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और डिजिटल माध्यम से बोली-संरक्षण और पुनर्जीवन की नई संभावनाएँ भी विकसित हो रही हैं। इस प्रकार बोली-विज्ञान न केवल भाषिक विविधता के संरक्षण का माध्यम है, बल्कि समाज, सांस्कृति और पहचान के समग्र अध्ययन का भी एक सशक्त अनुशासन है।

बीज शब्द -बोली-विज्ञान, भाषिक विविधता, आंचलिक बोलियाँ, समाज-भाषा-विज्ञान, भाषा-संरक्षण, तकनीकी युग, डिजिटल आर्काइव भूमिका

“भाषा मानव समाज की सबसे मूलभूत और सजीव अभिव्यक्ति है। भाषा के माध्यम से ही मनुष्य अपने विचारों, भावनाओं, अनुभवों तथा सांस्कृतिक मूल्यों का आदान-प्रदान करता है। भाषा पहले बोली होती है और जब उसमें साहित्य एवं भौगोलिक विस्तार होता है तब वह भाषा बनता है। भाषा के विविध रूपों में बोली सबसे स्वाभाविक, सहज और जीवंत रूप मानी जाती है, क्योंकि यह सीधे सामान्य जन-जीवन से जुड़ी होती है।”² बोली किसी विशिष्ट क्षेत्र, समुदाय या सामाजिक वर्ग की भाषिक पहचान को व्यक्त करती है।

भारत जैसे देश में, जहाँ भाषिक विविधता जीवन के हर स्तर पर दिखाई देती है, बोली-विज्ञान का अध्ययन विशेष महत्त्व रखता है। “आधुनिक समय में वैश्वीकरण, शहरीकरण और तकनीकी विस्तार के कारण बोलियों का स्वरूप तेजी से बदल रहा है। इस परिवर्तनशील संदर्भ में बोली-विज्ञान न केवल भाषिक अध्ययन का विषय है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक चिंतन का भी एक महत्वपूर्ण क्षेत्र बना है।”³

बोली किसी भाषा का वह रूप है, जिसका प्रयोग किसी सीमित भौगोलिक क्षेत्र या विशिष्ट सामाजिक समुदाय द्वारा किया जाता है। बोली में उच्चारण, शब्दावली और व्याकरण के स्तर पर स्थानीय विशेषताएँ पाई जाती हैं। भाषा जहाँ अपेक्षाकृत मानकीकृत और औपचारिक होती है, वहीं बोली अधिक भावनात्मक, लचीली और लोकजीवन से गहराई से जुड़ी होती है।

बोली-विज्ञान भाषा-विज्ञान की वह शाखा है, जो बोलियों के भौगोलिक वितरण, ध्वन्यात्मक संरचना, शब्द-संपदा और सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभावों का वैज्ञानिक अध्ययन करती है। यह अध्ययन भाषा को केवल संरचनात्मक इकाई के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक व्यवहार और सांस्कृतिक पहचान के रूप में समझने की दृष्टि प्रदान करता है।

बोली-विज्ञान का ऐतिहासिक विकास-

बोली-विज्ञान की परंपरा अत्यंत प्राचीन है और इसका विकास भाषिक विविधता की मानवीय चेतना के साथ जुड़ा हुआ रहा है। भारतीय भाषिक परंपरा में बोली-विज्ञान के बीज वैदिक और संस्कृत व्याकरणिक चिंतन में ही दृष्टिगोचर होने लगते हैं। पाणिनि द्वारा रचित *अष्टाध्यायी* में जनपदीय प्रयोगों, क्षेत्रीय उच्चारणों तथा शब्द-रूप भिन्नताओं का उल्लेख यह प्रमाणित करता है कि प्राचीन भारत में भाषा को एकरूप न मानकर बहुरूपात्मक संरचना के रूप में समझा गया था। यह दृष्टि आगे चलकर बोली-विज्ञान के विकास की सैद्धांतिक आधारशिला बनी। मध्यकालीन भारतीय भाषिक परिदृश्य में अपभ्रंश और देशज भाषाओं के उत्कर्ष के साथ बोलियों की भूमिका और अधिक सशक्त होती गई। इस काल में साहित्यिक भाषाएँ प्रत्यक्ष रूप से लोक-बोलियों से ऊर्जा ग्रहण करती रहीं। अवधी, ब्रज, मैथिली, भोजपुरी आदि बोलियाँ न केवल जनसंचार की माध्यम रहीं, बल्कि उन्होंने भक्ति-आंदोलन के साहित्य को जनमानस तक पहुँचाने में निर्णायक योगदान दिया। इस प्रकार बोलियाँ भाषा-विकास की परिधि में न रहकर उसकी केंद्रीय शक्ति के रूप में स्थापित हुईं।

आधुनिक बोली-विज्ञान का व्यवस्थित विकास उन्नीसवीं शताब्दी में यूरोप में तुलनात्मक भाषा विज्ञान और भाषाई सर्वेक्षणों के उदय के साथ प्रारंभ होता है। भारत में इस दिशा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य जॉर्ज ग्रियर्सन के संपादन में प्रकाशित *‘Linguistic Survey of India’* माना जाता है। यह सर्वेक्षण भारतीय भाषाओं और बोलियों का पहला वैज्ञानिक, वर्गीकृत और विस्तृत दस्तावेज है, जिसने बोली-विज्ञान को एक स्वतंत्र अध्ययन-क्षेत्र के रूप में स्थापित किया और आगे चल कर गणेश देवी की भी सर्वे बहुत मदद-कार साबित हुईं।

“बीसवीं शताब्दी में बोली-विज्ञान का दृष्टिकोण और अधिक व्यापक हुआ। समाज-भाषा-विज्ञान के उदय के साथ बोली को केवल भाषिक संरचना तक सीमित न रखकर उसे सामाजिक वर्ग, जाति, लिंग, पेशा, क्षेत्रीय पहचान और सत्ता-संबंधों के संदर्भ में समझने की प्रवृत्ति विकसित हुई। अब बोली को सामाजिक अनुभव, सांस्कृतिक स्मृति और सामाजिक पहचान की अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाने लगा। इस चरण में बोली-विज्ञान, भाषा-विज्ञान के एक तकनीकी उपक्षेत्र से आगे बढ़कर सामाजिक विज्ञानों से अंतर्संबंध स्थापित करने वाला बहुआयामी अनुशासन बन गया।”⁴

इस प्रकार, बोली-विज्ञान का ऐतिहासिक विकास यह स्पष्ट करता है कि बोलियाँ किसी मानक भाषा की अपूर्ण या विकृत इकाइयाँ नहीं हैं, बल्कि वे भाषा की जीवंत, गतिशील और सामाजिक रूप से अर्थपूर्ण अभिव्यक्तियाँ हैं। भाषिक इतिहास के प्रत्येक चरण में बोलियों ने भाषा को नई दिशा, संवेदना और सामाजिक आधार प्रदान किया है।

बोली-विज्ञान की प्रमुख शोध-विधियाँ-

“बोली-विज्ञान में अनुसंधान की विधियाँ बहुआयामी, क्षेत्र-आधारित और अंतःविषयक प्रकृति की होती हैं। चूंकि बोली एक जीवित, सामाजिक और प्रयोगधर्मी भाषिक रूप है, इसलिए इसके अध्ययन में प्रत्यक्ष अनुभव और वैज्ञानिक विश्लेषण—दोनों का

आवश्यक होता है। बोली विज्ञान के अध्ययन में संरचनात्मक और ऐतिहासिक दृष्टि का विशेष महत्त्व है।⁵⁵ “बोली-विज्ञान की सबसे महत्वपूर्ण और आधारभूत शोध-विधि क्षेत्रीय सर्वेक्षण (Field Survey) मानी जाती है। इस विधि के अंतर्गत शोधकर्ता संबंधित क्षेत्र में जाकर मूल वक्ताओं से प्रत्यक्ष संवाद करता है और स्वाभाविक भाषिक प्रयोगों का अवलोकन करता है। इसमें शब्द-संग्रह, वाक्य-रचना, मुहावरे, लोकोक्तियाँ तथा कथ्य-शैली जैसे तत्वों को रिकॉर्ड किया जाता है। क्षेत्रीय सर्वेक्षण बोली की वास्तविक, अप्रभावित और प्रामाणिक स्थिति को सामने लाने में सहायक होता है।⁵⁶”

इसके साथ-साथ ध्वन्यात्मक एवं ध्वनिवैज्ञानिक विश्लेषण बोली-अध्ययन की एक अत्यंत महत्वपूर्ण विधि है। इस प्रक्रिया में उच्चारण-भिन्नताओं, स्वर-व्यंजन परिवर्तनों, ध्वनि-लोप, ध्वनि-आगम तथा क्षेत्रीय ध्वनि-रूपों का सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है। ध्वन्यात्मक विश्लेषण के माध्यम से यह स्पष्ट किया जा सकता है कि किस प्रकार भौगोलिक दूरी, सामाजिक संपर्क और ऐतिहासिक विकास बोली की ध्वनि-संरचना को प्रभावित करते हैं।

आधुनिक बोली-विज्ञान में सामाजिक-भाषाई अध्ययन (Sociolinguistic Method) को विशेष महत्त्व प्राप्त हुआ है। इस पद्धति के अंतर्गत बोली को केवल भाषिक संरचना न मानकर सामाजिक संदर्भों में विश्लेषित किया जाता है। आयु, लिंग, वर्ग, जाति, शिक्षा, पेशा तथा शहरी-ग्रामीण विभाजन जैसे सामाजिक कारकों का बोली-प्रयोग पर क्या प्रभाव पड़ता है—इसका गहन अध्ययन किया जाता है। इससे बोली और सामाजिक पहचान के बीच के अंतर्संबंध स्पष्ट होते हैं। समकालीन समय में तकनीकी विकास ने बोली-विज्ञान की शोध-विधियों को और अधिक वैज्ञानिक एवं सटीक बना दिया है। डिजिटल ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग के माध्यम से भाषिक डेटा को स्थायी रूप में संरक्षित किया जा रहा है। GIS आधारित बोली-मानचित्रण द्वारा क्षेत्रीय भाषिक भिन्नताओं को भौगोलिक मानचित्रों पर स्पष्ट रूप से अंकित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और भाषा-प्रौद्योगिकी आधारित उपकरणों का उपयोग कर बड़े भाषिक कॉर्पस का विश्लेषण, पैटर्न-पहचान और तुलनात्मक अध्ययन संभव हो सका है।

इस प्रकार, बोली-विज्ञान की शोध-विधियाँ पारंपरिक क्षेत्रीय अध्ययन से लेकर अत्याधुनिक तकनीकी साधनों तक विस्तृत हो चुकी हैं। इन विधियों का समन्वित प्रयोग न केवल बोली-अध्ययन को अधिक विश्वसनीय और वैज्ञानिक बनाता है, बल्कि भाषिक विविधता के संरक्षण और प्रलेखन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

भारत में बोली-विज्ञान की स्थिति-

भारत विश्व के सर्वाधिक भाषिक विविधता वाले देशों में से एक है। यहाँ हजारों बोलियाँ और उप-बोलियाँ प्रचलित हैं, जो न केवल भाषिक बहुलता का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं, बल्कि देश की सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संरचना को भी प्रतिबिंबित करती हैं। “भारतीय भाषिक परिदृश्य में बोली और भाषा के बीच स्पष्ट विभाजन रेखा खींचना कठिन है, क्योंकि अधिकांश मानक भाषाएँ स्वयं किसी न किसी बोली से विकसित हुई हैं। इस दृष्टि से भारत में बोली-विज्ञान का अध्ययन विशेष महत्त्व रखता है।

हिंदी क्षेत्र में अवधी, भोजपुरी, ब्रज, बुंदेली, बघेली, हरियाणवी और राजस्थानी जैसी बोलियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये बोलियाँ केवल संवाद की साधन मात्र नहीं हैं, बल्कि लोकजीवन की संवेदनाओं, सामाजिक अनुभवों और सांस्कृतिक स्मृतियों की वाहक भी हैं। लोकगीतों, लोककथाओं, कहावतों, पहलियों और आंचलिक

अभिव्यक्तियों के माध्यम से ये बोलियाँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी सांस्कृतिक विरासत को जीवंत बनाए रखती हैं। ग्रामीण जीवन, श्रम-संस्कृति, पर्व-त्योहार और सामाजिक संबंधों की संपूर्ण संरचना इन बोलियों में स्वाभाविक रूप से अभिव्यक्त होती है।⁵⁷”

आधुनिक काल में भारतीय भाषाई अध्ययन में यह स्पष्ट रूप से स्वीकार किया जाने लगा है कि बोलियाँ किसी मानक भाषा की अपूर्ण या विकृत इकाइयाँ नहीं हैं, बल्कि वे स्वतंत्र भाषिक प्रणालियाँ हैं, जिनकी अपनी संरचना, शब्दावली और व्याकरणिक विशेषताएँ होती हैं। इस बौद्धिक परिवर्तन के साथ भारत में बोली-विज्ञान एक संगठित अकादमिक अनुशासन के रूप में उभरता है। भाषाई सर्वेक्षणों, विश्वविद्यालयीय शोध-परियोजनाओं और क्षेत्रीय अध्ययन के माध्यम से बोलियों के वैज्ञानिक अध्ययन की परंपरा विकसित हुई है।

आधुनिक हिंदी साहित्य में आंचलिकता के प्रयोग ने बोलियों को साहित्यिक प्रतिष्ठा प्रदान की है। “कथा-साहित्य, उपन्यास और कविता में आंचलिक शब्दावली, वाक्य-रचना और स्थानीय लहजे के प्रयोग से न केवल यथार्थ का अधिक सशक्त चित्रण संभव हुआ, बल्कि बोलियों को साहित्यिक अभिव्यक्ति का वैध माध्यम भी प्राप्त हुआ। उपबोलियाँ भाषा की आंतरिक विविधता को स्पष्ट करती हैं।⁵⁸” इसके परिणामस्वरूप बोली-विज्ञान का अध्ययन केवल भाषा-वैज्ञानिक दायरे तक सीमित न रहकर साहित्यिक और सांस्कृतिक विमर्श का भी अनिवार्य अंग बन गया।

समकालीन समय में भूमंडलीकरण, शहरीकरण और मीडिया के प्रभाव से अनेक बोलियाँ संकटग्रस्त स्थिति में पहुँच रही हैं। ऐसे में भारत में बोली-विज्ञान की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। बोली-अध्ययन न केवल भाषिक विविधता के संरक्षण का माध्यम है, बल्कि यह सामाजिक पहचान, सांस्कृतिक आत्मसम्मान और लोकतांत्रिक भाषिक चेतना को भी सुदृढ़ करता है।

इस प्रकार, भारत में बोली-विज्ञान की स्थिति अत्यंत समृद्ध, बहुआयामी और संभावनाशील है। यहाँ बोली-विज्ञान भाषा-विज्ञान, साहित्य, समाजशास्त्र और सांस्कृतिक अध्ययन—सभी के साथ अंतर्संबंध स्थापित करते हुए एक समग्र और जीवंत अनुशासन के रूप में विकसित हो रहा है।

तकनीकी युग में बोली-विज्ञान की संभावनाएँ-

इक्कीसवीं शताब्दी का तकनीकी युग बोली-विज्ञान के लिए नई संभावनाओं, नए उपकरणों और नए दृष्टिकोणों का द्वार खोलता है। परंपरागत रूप से बोली-अध्ययन जहाँ क्षेत्रीय सर्वेक्षण और मौखिक साक्ष्यों तक सीमित था, वहीं आज डिजिटल तकनीक ने इसे अधिक व्यापक, सटीक और दीर्घकालिक बना दिया है। तकनीकी साधनों के माध्यम से न केवल बोलियों का वैज्ञानिक अध्ययन संभव हुआ है, बल्कि उनके संरक्षण और पुनर्जीवन की दिशा में भी ठोस प्रयास किए जा सकते हैं।

“डिजिटल आर्काइविंग बोली-विज्ञान के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी उपलब्धि के रूप में उभरी है। ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग के माध्यम से बोलियों के उच्चारण, कथ्य-शैली, लोकगीत, लोककथाएँ और मौखिक परंपराएँ स्थायी रूप में सुरक्षित की जा रही हैं। इससे भविष्य की पीढ़ियों के लिए विलुप्तप्राय बोलियों का प्रामाणिक भाषिक-सांस्कृतिक दस्तावेज उपलब्ध हो सकेगा। इसी क्रम में मोबाइल ऐप्स और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म स्थानीय समुदायों को स्वयं अपनी बोली दर्ज करने और साझा करने का अवसर प्रदान कर रहे हैं, जिससे बोली-अध्ययन में सहभागिता-आधारित मॉडल विकसित हो रहा है।⁵⁹”

कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित स्पीच रिकग्निशन और मशीन ट्रांसलेशन

तकनीकों ने बोली-विज्ञान की संभावनाओं को और अधिक विस्तृत किया है। इन तकनीकों के माध्यम से बोलियों के बड़े भाषिक कॉर्पस का विश्लेषण, पैटर्न-पहचान और तुलनात्मक अध्ययन संभव हो सका है। इससे न केवल बोली और मानक भाषा के बीच के संबंधों को समझने में सहायता मिलती है, बल्कि शिक्षा, प्रशासन और डिजिटल संचार में बोलियों के उपयोग की संभावनाएँ भी खुलती हैं।

सोशल मीडिया, यूट्यूब, पॉडकास्ट और अन्य डिजिटल मंचों ने बोलियों को अभिव्यक्ति का नया और व्यापक क्षेत्र प्रदान किया है। आज बोलियाँ केवल ग्रामीण या स्थानीय संवाद तक सीमित न रहकर डिजिटल सार्वजनिक क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। यह स्थिति बोली को हाशिए की भाषा से मुख्यधारा की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति की ओर ले जाने का संकेत देती है। युवा पीढ़ी द्वारा डिजिटल माध्यमों पर बोली के प्रयोग से उसकी जीवंतता और प्रासंगिकता बनी रहती है।

हालाँकि, तकनीकी विकास के समानांतर वैश्वीकरण और शहरीकरण के प्रभाव से अनेक बोलियाँ संकटग्रस्त होती जा रही हैं। मानकीकृत भाषाओं का दबाव, शिक्षा और रोजगार में सीमित भाषिक विकल्प तथा सामाजिक प्रतिष्ठा की धारणा—ये सभी कारक बोलियों के क्षरण में योगदान दे रहे हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि तकनीकी साधनों के साथ-साथ नीतिगत, शैक्षणिक और सामाजिक प्रयास भी किए जाएँ। “विद्यालयी शिक्षा में मातृबोली का समावेश, स्थानीय भाषाई कार्यक्रम, समुदाय-आधारित संरक्षण योजनाएँ और सरकारी भाषा-नीतियाँ—इन सभी के समन्वय से ही बोलियों को दीर्घकालिक संरक्षण प्राप्त हो सकता है। बोलियाँ नियम बद्ध और व्यवस्थित भाषिक प्रणाली हैं।”¹⁰

इस प्रकार, तकनीकी युग में बोली-विज्ञान की संभावनाएँ अत्यंत व्यापक और आशाजनक हैं। यदि तकनीक का उपयोग संवेदनशीलता, सहभागिता और सांस्कृतिक चेतना के साथ किया जाए, तो बोलियाँ न केवल संरक्षित रह सकती हैं, बल्कि आधुनिक समाज में नई प्रासंगिकता और पहचान भी प्राप्त कर सकती हैं।

निष्कर्ष-

बोली-विज्ञान भाषा के अध्ययन से आगे बढ़कर समाज, संस्कृति और पहचान के समग्र विश्लेषण का क्षेत्र है। बोलियाँ किसी समुदाय के ऐतिहासिक अनुभव, सांस्कृतिक स्मृति और सामाजिक संरचना की जीवंत अभिव्यक्ति होती हैं। इनके अध्ययन से न केवल भाषिक विविधता की समझ विकसित होती है, बल्कि सामाजिक संबंधों और सांस्कृतिक मूल्यों का भी उद्घाटन होता है।

तकनीकी युग में बोली-विज्ञान के समक्ष संरक्षण, प्रलेखन और पुनर्जीवन की व्यापक संभावनाएँ उपलब्ध हैं। डिजिटल आर्काइविंग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित उपकरण और ऑनलाइन मंचों ने बोलियों को नया जीवन और व्यापक मंच प्रदान किया है। किंतु वैश्वीकरण, शहरीकरण और मानकीकृत भाषाओं के दबाव के कारण अनेक बोलियाँ संकटग्रस्त स्थिति में पहुँच गई हैं, जो गंभीर चिंता का विषय है। अतः आवश्यक है कि वैज्ञानिक दृष्टि, तकनीकी संसाधनों और सामाजिक जागरूकता का समन्वित उपयोग किया जाए। शैक्षणिक, नीतिगत और सामुदायिक स्तर पर किए गए प्रयास ही बोलियों के प्रभावी संरक्षण और संवर्धन को संभव बना सकते हैं। इस प्रकार, बोली-विज्ञान भारतीय भाषिक विरासत को संरक्षित रखने के साथ-साथ सामाजिक समानता, सांस्कृतिक आत्मसम्मान और भाषिक लोकतंत्र को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

संदर्भ -

1. जॉर्ज ए. ग्रियर्सन, लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया. (खंड I, भाग 1). कलकत्ता: भारत सरकार, 1903-1928. पृ. 3
2. रामचन्द्र वर्मा, हिंदी की बोलियाँ. प्रयागराज: साहित्य भवन, 1995. पृ. 18
3. भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान. दिल्ली: किताब महल, 2008. पृ. 21
4. उदय नारायण सिंह, समाज-भाषा-विज्ञान : सिद्धांत और अनुप्रयोग. पटना: बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, 2010. पृ. 44
5. भोलानाथ त्रिपाठी, भाषा-विज्ञान की रूपरेखा. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा, 2004. पृ. 63
6. Chambers, J. K. & Trudgill, Peter. *Dialectology*. Cambridge: Cambridge University Press, 1998. p.15
7. गणेश देवी. भाषा और समाज. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2010. पृ. 91
8. श्याम सुंदर दास. हिंदी भाषा और साहित्य का इतिहास. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा, 1962. पृ. 57
9. रामसुंदर द्विवेदी, हिंदी की उपबोलियाँ. लखनऊ: ज्ञानमंडल, 1985. पृ. 29
10. Trudgill, Peter. *Dialects*. London: Routledge, 2000. p.2

बंजारा समाज की रहन-सहन : परंपरा, संघर्ष और परिवर्तन का समाजशास्त्रीय अध्ययन

राठोड अजय

शोधार्थी पीएच.डी (हिंदी)

मानविकी संकाय, हिंदी विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय हैदराबाद
rajay851@gmail.com, 9494388658, 8328055970

शोध सार

बंजारा समाज भारत का एक प्राचीन घुमंतू समुदाय है, जिसकी विशिष्ट पहचान उसकी रहन-सहन, वेश-भूषा, खान-पान और सामाजिक जीवन में दिखाई देती है। यह समाज ऐतिहासिक रूप से व्यापार और पशुपालन से जुड़ा रहा है। प्रस्तुत आलेख में बंजारा समाज की पारंपरिक जीवन-शैली, सांस्कृतिक विशेषताओं तथा आधुनिक परिवर्तन के प्रभावों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि बंजारा समाज परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन बनाते हुए अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को बनाए रखने का प्रयास कर रहा है।

बीज शब्द : बंजारा समाज, रहन-सहन, टांडा, लोकसंस्कृति, परिवर्तन प्रस्तावना

भारतीय समाज बहुस्तरीय और बहुरंगी सामाजिक संरचना से निर्मित है। इस संरचना में बंजारा समाज एक विशिष्ट स्थान रखता है। बंजारा समाज को प्रायः घुमंतू, अर्ध-घुमंतू अथवा वनवासी समुदाय के रूप में जाना जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह समाज व्यापार, पशुपालन और वस्तुओं के परिवहन से जुड़ा रहा है। मध्यकाल में जब परिवहन के आधुनिक साधन उपलब्ध नहीं थे, तब बंजारा समाज देश के विभिन्न भागों में अनाज, नमक और अन्य आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति करता था। बंजारा समाज की रहन-सहन केवल जीवन-निर्वाह की पद्धति नहीं है, बल्कि वह उनके सामाजिक मूल्यों, सांस्कृतिक चेतना, सामूहिक जीवन-दृष्टि और प्रकृति से गहरे संबंध को अभिव्यक्त करती है। प्रस्तुत आलेख में बंजारा समाज की रहन-सहन के विविध पक्षों निवास, वेश-भूषा, खान-पान, सामाजिक जीवन, सांस्कृतिक परंपराएँ तथा आधुनिक परिवर्तन का विस्तृत विश्लेषण किया गया है।

ऐतिहासिक-पृष्ठभूमि

बंजारा समाज का इतिहास अत्यंत प्राचीन माना जाता है। विभिन्न ऐतिहासिक स्रोतों के अनुसार यह समाज उत्तर भारत से लेकर दक्कन और दक्षिण भारत तक फैला हुआ है। व्यापारिक मार्गों पर उनकी उपस्थिति ने उन्हें आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण बनाया। मुगल काल और उसके बाद भी बंजारा समाज की भूमिका अनाज और सैन्य सामग्री के परिवहन में उल्लेखनीय रही। ब्रिटिश शासन के दौरान परिवहन के नए साधनों के विकास से बंजारा समाज का पारंपरिक व्यवसाय प्रभावित हुआ, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें आर्थिक और सामाजिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। यही कारण है कि उनकी रहन-सहन में धीरे-धीरे परिवर्तन आने लगा।

निवास व्यवस्था (रहन)

बंजारा समाज की पारंपरिक निवास व्यवस्था को 'टांडा' कहा जाता है। टांडा केवल आवासीय स्थान नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और प्रशासनिक इकाई भी है। परंपरागत रूप से बंजारा लोग अस्थायी निवास करते थे। उनके घर मिट्टी, बाँस, लकड़ी और घास-फूस से बनाए जाते थे। घरों की संरचना साधारण होती थी, परंतु सामूहिकता और परस्पर सहयोग की भावना अत्यंत प्रबल रहती थी। वर्तमान समय में कई बंजारा परिवार स्थायी रूप से बस गए हैं। अब पक्के मकान, बिजली, पानी और सड़क जैसी सुविधाएँ धीरे-धीरे उपलब्ध हो रही हैं, फिर भी टांडा की

सामाजिक संरचना आज भी उनकी पहचान बनाए हुए है। एक प्रसिद्ध विद्वान और उस्मानिया विश्वविद्यालय के हिंदी प्रोफेसर थे, जिन्होंने भारत के खानाबदोश बंजारा समुदाय पर गहरा शोध किया और "बंजारा समाज" नामक एक महत्वपूर्ण पुस्तक लिखी, जो बंजारा संस्कृति, भाषा, व्यवसाय और जीवनशैली का विस्तृत वर्णन करती है, जिसमें उन्होंने पूरे भारत के बंजारा टांडों (बस्तियों) का अध्ययन किया और उनके इतिहास को पहली बार 1982 में प्रकाशित किया।

वेश-भूषा(सहन)

बंजारा समाज की वेश-भूषा उनकी सांस्कृतिक पहचान का सबसे सशक्त माध्यम है। बंजारा महिलाएँ रंग-बिरंगे घाघरे, शीशा-कढ़ाई वाले वस्त्र और भारी चाँदी के आभूषण पहनती हैं। उनके आभूषण हार, कड़े, नथ, पायल न केवल सौंदर्य का प्रतीक हैं, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा और पारिवारिक समृद्धि के संकेतक भी हैं। पुरुषों की वेश-भूषा अपेक्षाकृत सादी होती है। वे धोती, कुर्ता और सिर पर पगड़ी पहनते हैं। उनकी पोशाक श्रमशील जीवन और आत्मसम्मान को दर्शाती है। आधुनिक प्रभाव के कारण आज युवा वर्ग आधुनिक कपड़ों की ओर भी आकर्षित हो रहा है, परंतु पारंपरिक वेश-भूषा अब भी सांस्कृतिक अवसरों पर अनिवार्य मानी जाती है।

खान-पान

बंजारा समाज का खान-पान उनके श्रमसाध्य जीवन और स्थानीय संसाधनों पर आधारित होता है। ज्वार, बाजरा, मक्का जैसे मोटे अनाज उनके भोजन का मुख्य आधार हैं। इसके अतिरिक्त दालें, सब्जियाँ और दूध-उत्पाद भी प्रयुक्त होते हैं। कई क्षेत्रों में मांसाहार प्रचलित है, विशेषकर उत्सवों और विशेष अवसरों पर। भोजन सामूहिक रूप से करने की परंपरा सामाजिक एकता को मजबूत करती है। अतिथि-सत्कार बंजारा समाज का प्रमुख गुण है; अतिथि को भोजन कराए बिना विदा करना अनुचित माना जाता है।

पारिवारिक और सामाजिक जीवन-

बंजारा समाज का पारिवारिक ढाँचा सामूहिकता पर आधारित है। संयुक्त परिवार की परंपरा यहाँ आज भी देखने को मिलती है। परिवार में बुजुर्गों का सम्मान और निर्णयों में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण होती है। विवाह, जन्म और मृत्यु जैसे संस्कार सामूहिक रूप से संपन्न होते हैं। विवाह समारोह कई दिनों तक चलता है और इसमें नृत्य-संगीत का विशेष स्थान होता है। सामाजिक नियम और परंपराएँ समाज की एकता बनाए रखने में सहायक होती हैं।

सांस्कृतिक

बंजारा समाज की संस्कृति अत्यंत समृद्ध है। लोकगीत, लोकनृत्य और वाद्ययंत्र उनके सांस्कृतिक जीवन के प्रमुख अंग हैं। उनके गीतों में प्रेम, विरह, संघर्ष, प्रकृति और ऐतिहासिक स्मृतियाँ अभिव्यक्त होती हैं। ये गीत मौखिक परंपरा के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ते हैं। नृत्य और संगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक संवाद और सांस्कृतिक... तीज के गीत तीज बंजारा कुंवारी कन्याओं का सबसे बड़ा त्योहार है। इस दौरान गाए जाने वाले गीतों में भाई-बहन का प्रेम और प्रकृति की पूजा झलकती है। विषय: अच्छी फसल की कामना

और अपने परिवार की सुख-समृद्धि। नृत्य: इन गीतों के साथ लड़कियां गोल घेरा बनाकर पारंपरिक नृत्य करती हैं। लाडी गीत (विवाह के गीत) बंजारा शादियों में गीतों का विशेष महत्व है। सगाई से लेकर विदाई तक, हर रस्म के लिए अलग गीत होते हैं। विदाई के गीत: ये गीत बहुत भावुक होते हैं, जिनमें एक बेटी अपने 'टांडा' (बस्ती) और माता-पिता को छोड़ने का दुख व्यक्त करती है। **होली और फाग गीत** बंजारा समुदाय की होली बहुत प्रसिद्ध है। इसमें पुरुष और महिलाएं ढोल-नगाड़ों की थाप पर 'फाग' गाते हैं। शैली: ये गीत काफी जोश भरे और ऊर्जावान होते हैं। रमेश कार्तिक नायक बंजारा साहित्य के एक प्रमुख लेखक और युवा प्रतिभा हैं, जो अपनी तेलुगु लघु कथाओं के लिए जाने जाते हैं, विशेषकर अपने संग्रह "धवल" के लिए, जिसके लिए उन्हें साहित्य अकादमी युवा पुरस्कार 2024 मिला और वे इस सम्मान को पाने वाले पहले जनजातीय लेखक बने; वे बंजारा समुदाय के जीवन, संस्कृति और संघर्षों को अपनी रचनाओं के माध्यम से आवाज़ देते हैं, और तेलंगाना के एक महत्वपूर्ण साहित्यिक आवाज़ के रूप में उभरे हैं।

धार्मिक विश्वास और परंपराएँ

बंजारा समाज प्रकृति-पूजक प्रवृत्ति वाला समाज है। वे विभिन्न देवी-देवताओं, लोकदेवताओं और प्राकृतिक शक्तियों की पूजा करते हैं। धार्मिक अनुष्ठान सामूहिक रूप से किए जाते हैं, जिनमें समाज के सभी वर्गों की सहभागिता होती है। धर्म उनके सामाजिक जीवन को नियंत्रित करने और नैतिक मूल्यों को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आधुनिक परिवर्तन और चुनौतियाँ आधुनिक शिक्षा, संचार माध्यमों और सरकारी योजनाओं के प्रभाव से बंजारा समाज की रहन-सहन में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। अब कई बंजारा परिवार कृषि, मजदूरी, सेवा क्षेत्र और छोटे व्यवसायों से जुड़े हैं। हालाँकि आधुनिकता के प्रभाव से पारंपरिक जीवन-शैली में कुछ क्षरण हुआ है, फिर भी बंजारा समाज अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने के लिए प्रयासरत है। शिक्षा और जागरूकता उनके सामाजिक उत्थान के प्रमुख साधन बन रहे हैं। इसकी क्षेत्रीय बोलियाँ भी हैं। कोई लिपि न होने के कारण इसे महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, तेलंगाना और आन्ध्र प्रदेश, पंजाब में इसको वहाँ की स्थानीय लिपियों में लिखा जाता है। आज बंजारा भाषा में बड़े पैमाने पर साहित्य निर्माण हो रहा है। यह बंजारा भाषा के लिए बड़ी उपलब्धि है। "केसुला नै मोरारी। मायड भाषा बंजारा री। चाँदा सुर्यास्यूं अमरारी। जीवे जीवस्यू प्यारी। इस गरिमा पूर्ण रचना को बंजारा भाषा का गौरवगीत माना जाता है ; जिसकी रचना बंजारा साहित्य एवं संस्कृति के विशेषज्ञ एकनाथ पवार नायक ने की है। संविधान की आठवीं अनुसूची में बंजारा भाषा को सम्मिलित करवाने की माँग, संसद में सांसद उमेश जाधव, सांसद सुरेश धानोरकर, पूर्व सांसद हरिसिंह राठौड़, राजीव सातव, सांसद पी. बलराम नायक आदि ने उठाई। [3][4]

उपसंहार-निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बंजारा समाज की रहन-सहन भारतीय समाज की सांस्कृतिक विविधता का महत्वपूर्ण आयाम है। उनका जीवन संघर्ष, सामूहिकता और आत्मसम्मान का प्रतीक है। परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन बनाते हुए बंजारा समाज निरंतर आगे बढ़ रहा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि बंजारा समाज की सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करते हुए उन्हें सामाजिक-आर्थिक विकास की मुख्यधारा से सम्मानपूर्वक जोड़ा जाए। तभी भारतीय समाज की वास्तविक समावेशी प्रकृति साकार हो सकेगी।

संदर्भ ग्रन्थ-

- 1). बंजारा समाज .डॉ. श्री राम बंजारा इतिहास और संस्कृति पर प्रामाणिक हिंदी ग्रन्थ, 1982
- 2) बंजारों का सांस्कृतिक इतिहास. डॉ. जयपाल सिंह राठौड़, 2015
- 3) बंजारा समाज अणि राजकारण .अंकुश चौहान. समाज के आधुनिक बदलाव और राजनितिक स्थिति पर मराठी/हिंदी
- 4) बंजारा लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन. डॉ. गनपत राठौड़, समाज के माध्यम से समाज की मान्यताओं का विश्लेषण
- 5) बंजारा लोक कथाएँ. इंद्रासिंह जाधव, समाज की मौखिक परम्पराओं और लोककथाओं का संग्रह
- 6) धवल (विलाप का गीत, रमेश कार्तिक नायक, 2021) के लिए प्रतिष्ठित साहित्य अकादमी युवा पुरस्कार 2024 से सम्मानित किया गया, वे तेलुगु साहित्य

To study the utility of hybrid model of IoT in vehicle accident reporting system in India.

Sanjay Kumar Joharam

School of Computer Science Renaissance University, Indore MP (India)
j.sanjay1947@gmail.com

Dr. Nidhi Sedhi

School of Computer Science Renaissance University, Indore MP (India)
nidhisogani@gmail.com

Abstract: In India, each region has different natural structures and social systems, which makes it a big challenge to implement any modern computing technology in the road system. We know from studies that lives of people in road accidents could have been saved if they had been helped within the first hour. Therefore, the combined work of IoT and related technologies such as IoV (connecting vehicles to the Internet) and cloud computing (storage) is useful. The Hon'ble Supreme Court gave a judgment on March 30, 2016 that the police should not harass in any way the people (good Samaritans) who help the injured in road accidents and the cooperation of people present at the scene is essential to increase the victim's chances of survival, especially during the 'golden hour', that is, the first hour after the injury. According to the World Health Organization (WHO) recommendations for India, 50% of victims die within the first 15 minutes due to severe cardiac or neurological injuries. The National Highways Authority of India has launched a toll-free "1033" helpline number to assist in road emergencies. Furthermore, the Government of India is to launch an Integrated Emergency Response System (ERSS). There will be only one emergency number 112. ERSS tracks rescue and service vehicles of all services (Police-100, Fire-101, Health-108 etc.) in real time on a digital map of the State/UT. The Ministry of Electronics and Information Technology (MeitY) launched this draft in the year 2015, which is a robust governance framework aimed at overall implementation and execution of IoT related policies. This policy was the main policy governing IoT in India. Studies show that those who rescue injured people on the road are now legally protected, while in the event of a vehicle accident, help can be sought using traditional mobile or phone calls. Since IoT technology (IoV and Cloud Computing) is effective in automatically sending reports in case of a vehicle accident, hence in our research paper we are drawing attention towards the need of such hybrid model in India.

Keywords: Vehicle Accident system, Legal Aspects IoT, IoV and Cloud

Introduction: If we study in the context of India, we see that the lives of people in road accidents could have been saved if they had been helped on time and their treatment had been started on time. Looking at another aspect, the

natural structure and social system in every region of India is different, which makes it a big challenge to implement any modern computing technology in the road system. When an accident occurs on the road, people do not help, many of them are afraid of the legal process. Therefore, in India, an accident can be reported to the police or medical care, so that the injured can be treated as soon as possible, increasing the chances of survival and can also save the victim from disability. We will study what kind of models are currently active in India for helping road accident victims, and what are the arrangements for transmitting useful intimation or report. The Honourable Supreme Court's decision and the Indian government's decision to provide legal protection to those who help the injured is a very good step.

Accident cases require fastest care and rescue which could be provided by those closest to the scene of the accident. Bystanders clear support is essential to enhance the chances of survival of victim in the 'Golden Hour' i.e. the first hour of the injury. As per the WHO India Recommendations, 50% of the victims die in the first 15 minutes due to serious cardiovascular or nervous system injuries and the rest can be saved through by providing basic life support during the 'Golden Hour'.

^[1]As per Motor Vehicle Act section 2(12A) "golden hour" means the time period lasting one hour following a traumatic injury during which there is highest likelihood of preventing death by providing prompt medical care. ^[2]In the last ten years, road crashes have killed over 13 lakh people in India. According to the Law Commission of India, 50% of these victims died of preventable injuries and could have been saved if they had received care on time. ^[3]

Accident Data Collection and Traditional Vehicle Accident Reporting System in India: Central Government makes orders "Motor Vehicles (Vehicle Location Tracking Device and Emergency Button) Order, 2018" to specify such standard for equipping or fitment of VLTD in all public service vehicles. Every public transport vehicle (four-wheeler or more) must have AIS 140 compliant GPS device (VLTD) whose registration is done on or after 01.01.2019. [4] Any person can dial 112 to report an accident on any category of road. To effect quick transfer of the victim to the nearest

empanelled hospital, States / UTs shall ensure strengthening of the ambulance ecosystem and maximum convergence of 112 with the associated helplines viz.108, 102, 1033, or any Central / State-specific helplines. [5] Advanced Traffic Management System (ATMS) has provisions for various electronic enforcement devices which help in speedy identification of incidents on the highway stretches and effectively monitor the highways, thereby improving the response time of the on-site assistance. [6] NHAI has launched the Toll Free “1033” Helpline Number to provide 24x7x365 assistance to road users on NHAI’s tolled stretches in case of Emergency/Non-Emergency issues. The 1033 Helpline provide multi-lingual support service to road users and integrated with the other highway operations facilities such as toll plaza Ambulance, Patrol Vehicle, Crane, etc. depending on the need. Non-emergency issues addressed include FASTag related complaints/queries, feedback about facilities / amenities available at the Toll Plazas and along the National Highways, road conditions, potholes, street light and toll charges related issues etc. [7] Traditionally, vehicle accident victims have sought assistance by calling government-designated contact numbers via mobile. The following contact numbers have been instituted:

24x7 National Highway Helpline 1033: Recognizing the importance of improving safe travel along National Highways and to help NHAI in taking preventive measures & improve maintenance of road and facilitate to serve the road users, NHAI has launched the Toll Free “1033” Helpline Number to provide 24x7x365 assistance to road users on NHAI’s tolled stretches in case of Emergency/Non-Emergency issues. [8]

Emergency Response Support System (ERSS): It is the vision of Govt. of India to launch an integrated emergency response system with a single emergency number 112, to address different emergencies of citizens. ERSS is designed to address all emergency signals received from citizens through voice call, SMS, e-mail, panic SOS signal, ERSS web portal etc. ERSS tracks the rescue and service vehicles of all services (Police-100, Fire101, Health-108 etc) in real-time on a digital map of the State/ UT and hence it will be possible to direct the right vehicle(s) to reach the service requestor and provide necessary support immediately. [9]

IoT in India: As per the Telecom Regulatory Authority of India (TRAI)’s latest report there were approximately 936.16 million internet users in December 2023. More gadgets in the home and workplace are getting connected to the internet and this is a call for a concern of digital security of the Internet of Things (IoT). At the cornerstone of data protection in India lies the Information

Technology Act, 2000 (ITA), the Reasonable Practices and Procedures and Sensitive Personal Data or Information Rules, 2011, the “Code of Practice for Securing Consumer Internet of Things (IoT)”, 2022 and the Digital Personal Data Protection Bill (DPDPA), 2023 released by Ministry of Electronics & Information Technology (MeitY). The first draft of the policy on IoT was released in the year 2015. MeitY launched this draft in 2015 which is a strong governance framework that aims at holistic implementation and execution of policies related to IoT. This policy is the main policy governing the IoT in India. [10]

Literature of Review: Accident cases require fastest care and rescue which could be provided by those closest to the scene of the accident. Bystanders clear support is essential to enhance the chances of survival of victim in the ‘Golden Hour’ i.e. the first hour of the injury. As per the WHO India Recommendations, 50% of the victims die in the first 15 minutes due to serious cardiovascular or nervous system injuries and the rest can be saved through by providing basic life support during the ‘Golden Hour’. Right to life is enshrined under Article 21 which includes right to safety of persons while travelling on the road and the immediate medical assistance as a necessary corollary is required to be provided and also adequate legal protection and prevention from harassment to good Samaritans. The Ministry of Health and Family Welfare shall issue guidelines stating that all registered public and private hospitals are not to detain bystander or good Samaritan or demand payment for registration and admission costs, unless the good Samaritan is a family member or relative of the injured and the injured is to be treated immediately in pursuance of the order of the Hon’ble Supreme Court in Pt. Parmanand Katara vs Union of India & Ors [1989] 4 SCC 286. [1]²

A Good Samaritan is a person who, in good faith, without expectation of payment or reward and without any duty of care or special relationship, voluntarily comes forward to administer immediate assistance or emergency care to a person injured in an accident, or crash, or emergency medical condition, or emergency situation. In the last ten years, road crashes have killed over 13 lakh people in India. According to the Law Commission of India, 50% of these victims died of preventable injuries and could have been saved if they had received care on time. The role of the bystander is critical in providing emergency care to the victim. Yet, in India, bystanders have been hesitant to help the injured for fear of legal repercussions and procedural hassles. In 2012, a Public Interest Litigation (PIL) was filed in the Supreme Court of India, requesting the Hon'ble court to safeguard Good Samaritans who come forward to help the injured. Road

crashes claimed more than 200,000 lives in India alone and contributed to the economic loss of approximately 3% GDP. 17 people die every hour on Indian roads and around 4.07 LAC. [3]² It is mentioned that as per provisions under section 134(A) of the Motor vehicles (Amendment) Act, 2019, Rules of Good Samaritans have been notified by the Ministry vide Notification G.S.R. 594(E) dated 29th September, 2020 (Annexure II). Basically, the rules provide legal protection to people who give reasonable assistance to those who are, or who they believe to be, injured, ill, in peril, or otherwise incapacitated. [11]

Definition of Golden Hour: As per Motor Vehicle Act section 2(12A) "golden hour" means the time period lasting one hour following a traumatic injury during which there is highest likelihood of preventing death by providing prompt medical care. [2]²

Approximately 1.19 million people die each year as a result of road traffic crashes, which are the leading cause of death for children and young adults aged 5-29 years with 92% of the world's fatalities on the roads occurring in low- and middle-income countries, even though these countries have around 60% of the world's vehicles (adapted from UNECE, Eurostat, ITF, 2019 and WHO, 2023a). [12]

Road traffic crashes cost most countries 3% of their gross domestic product. The United Nations General Assembly has set an ambitious target of halving the global number of deaths and injuries from road traffic crashes by 2030 (A/RES/74/299). [13]

According to the Ministry of Road Transport and Highways Report-2022, a total of 4,61,312 road accidents has been recorded in the country during the year 2022 by the police departments of the states and union territories. In which 1,68,491 people lost their lives and 4,43,366 people were injured. During 2022, a total of 4,61,312 accidents were recorded in the country, out of which 1,51,997 (32.9%) accidents occurred on National Highways (including Expressways), 1,06,682 (23.1%) accidents occurred on State Highways (SH) and the remaining 2,02,633 (43.9%) accidents occurred on other roads, out of the total 1,68,491 deaths recorded in the year 2022, 61,038 (36.2%) occurred on national highways, 41,012 (24.3%) on state highways and 66,441 (39.4%) on other roads. Out of the total 1,55,781 fatal accidents recorded in the year 2022, 55,571 (35.7%) occurred on National Highways, 37,861 (24.3%) occurred on State Highways and 62,349 (40%) occurred on other roads. [14] Issued notification dated 25th February, 2022 mandating the procedure for detailed investigation of road accidents, the Electronic Detailed Accident

Report (eDAR) and its reporting, along with timelines for different stakeholders and for faster settlements of claims by the Motor Accident Claim Tribunal (MACT). Claims are filed at Motor Accident Claims Tribunals at State Level. Also notified rules for the Central Motor Vehicles (Motor Vehicle Accident Fund) Rules, 2022 vide notification dated 25th February, 2022. Advanced Traffic Management System (ATMS) is installed in high traffic density National Highways and National Expressways such as Delhi-Meerut Expressway, Trans-Haryana, Eastern Peripheral Expressway etc. by National Highways Authority of India (NHAI). Advanced Traffic Management System (ATMS) has provisions for various electronic enforcement devices which help in speedy identification of incidents on the highway stretches and effectively monitor the highways, thereby improving the response time of the on-site assistance. [6]² The internet user base has expanded exponentially in the past decade in India. As per the Telecom Regulatory Authority of India (TRAI)'s latest report there were approximately 936.16 million internet users in December 2023. More gadgets in the home and workplace are getting connected to the internet and this is a call for a concern of digital security of the Internet of Things (IoT). More smart devices are connected with edge gateways and cloud platforms. IoT, while streamlining data sharing through sensors, also produces a large amount of data, more than any other emerging technology. At the cornerstone of data protection in India lies the Information Technology Act, 2000 (ITA), the Reasonable Practices and Procedures and Sensitive Personal Data or Information Rules, 2011, the "Code of Practice for Securing Consumer Internet of Things (IoT)", 2022 and the Digital Personal Data Protection Bill (DPDPA), 2023 released by Ministry of Electronics & Information Technology (MeitY). These legislative instruments define the responsibilities of entities handling personal data and establish mechanisms for accountability in case of breaches. The new Telecommunications Bill of 2023 clearly emphasises on the new age technologies and particularly all the aspects of the IoT. This bill is a comprehensive collection of all the provisions related to IoT in India. The bill includes all the necessary provisions that can regulate all the necessary items that come under the IoT. This bill is imperative due to the fact that the technological landscape is undergoing a major revolution worldwide which has a significant impact on India. [10]² Experts predict that the number of linked IoT devices will

increase to 19.9 billion by 2023 and 22 billion by 2025, up from 13.1 billion today. IoT is a novel concept that combines a variety of smart methodologies, foundations, smart tools, and sensors (Srivastava & Pandey, 2022). [15]Study: Here in the study, we have found an important fact that as per the decision passed by the Hon'ble Court, it is easy to save the life of the injured person in the 'Golden Hour' accident and now the good Samaritan has

been given legal protection and the police cannot harass the good Samaritan in any way.

The purpose of the study of the research paper here is also that in India, if an injured or unconscious person is not helped by a good Samaritan in his 'golden hour', then he will die. To help road accident victims in India, there is a need for an automated accident reporting system based on IoT technology or a hybrid model.

Conclusion: When victims are unavailable, it becomes difficult for them to survive. Therefore, in this research paper, we emphasize the need for such a system in India, which automatically sends the report or intimation related to the vehicle accident to a designated help centre so that the injured person can get help and save his life. Because unless some good Samaritan calls the helpline 1033 or 112 and asks for help, it becomes difficult to get help. We also find from this study that in the traditional emergency helpline service on the road or highway, the person stranded on the road has to depend on others and in such a situation, there is a possibility of the injured person dying due to not getting help. Therefore, India needs a hybrid model based on IoT (connecting vehicles to the internet) and cloud computing (storing data). Here we present the "Digital Good Samaritan" as a supporting tool in a future digital approach to hybrid models for vehicle accident assistance.

References

- [1]THE SUPREME COURT OF INDIA , "WP (C) NO.235 OF 2012," 30 March 2016. [Online]. Available: <https://api.sci.gov.in/jonew/judis/43521.pdf>.
- [2]MoRTH, "Definition of Golden Hour," 21 April 2025. [Online]. Available: <https://morth.nic.in/sites/default/files/Scheme-Guidelines-on-RahVeer.pdf>.
- [3]MoRTH, "The Good Samaritan," [Online]. Available: <https://morth.nic.in/en/good-samaritan>.
- [4]hrvlt, "ABOUT VLT & EAS," [Online]. Available: <https://hrvlt.parivahan.gov.in/about-vlts>.
- [5]MoRTH, "GUIDELINES-112," [Online]. Available: <https://cdnbbsr.s3waas.gov.in/s3250413d2982f1f83aa62a3a323cd2a87/uploads/2025/05/202505151230594664.pdf>.
- [6]GOVERNMENT OF INDIA (RAJYA-SABHA), "ROAD ACCIDENTS AND EVASION OF ACCOUNTABILITY," 02 04 2025. [Online]. Available: https://sansad.in/getFile/annex/267/AU3627_BtVVDs.pdf?source=pqars.
- [7]IHMCL, "Helpline 1033," [Online]. Available: <https://ihmcl.co.in/24x7-national-highways-helpline-1033/>.

- [8]IHMCL, "24x7 National Highway Helpline 1033," [Online]. Available: <https://ihmcl.co.in/24x7-national-highways-helpline-1033/#>.
- [9]Government of India, "Emergency Response Support System," [Online]. Available: <https://112.gov.in/about>.
- [10]quatrohive, "IoT in India: Legal Insights," 15 August 2024. [Online]. Available: <https://quatrohive.com/iot-in-india-legal-insights/>.
- [11]M. o. R. T. a. H. G. o. India, "Awards for Good Samaritans," 27 October 2020. [Online]. Available: https://morth.nic.in/sites/default/files/circulars_document/Principal%20Secretary_compressed.pdf.
- [12]undrr, "Road Traffic Accident," [Online]. Available: <https://www.undrr.org/understanding-disaster-risk/terminology/hips/tl0405>.
- [13]WHO, "Road traffic injuries," 13 December 2023. [Online]. Available: <https://www.who.int/news-room/fact-sheets/detail/road-traffic-injuries>.
- [14]morth, "Road Accident Report-2022," [Online]. Available: <https://morth.nic.in/sites/default/files/Road-Accident-in-India-2023-Publications.pdf>.
- [15]P. S. a. K. S. Brar, "Awareness and Perception of Students Toward Execution of Internet of Things in Library Services: A study of Indian Institute Technologies of Northern India," 05 February 2024. [Online]. Available: <https://www.degruyterbrill.com/document/doi/10.1515/opis-2022-0167/html>.

Negotiating Hybrid Identities: Socio-Cultural Impacts of Migration on the Punjabi Diaspora and Rural Punjab.

Akash Bhati

Research Scholar

Centre for the Study of Indian Diaspora, School of Social Sciences, University of Hyderabad

Abstract

The Punjabi diaspora, millions of people with roots in the Punjab regions of India and Pakistan, shows just how deeply migration can reshape both the people who leave and the places they come from.

This paper looks at how folks in these scattered communities juggle mixed identities: holding onto classic Punjabi stuff while picking up habits, tastes, and vibes globally. It's that messy in-between zone, think Homi Bhabha's "third space" or Stuart Hall's idea of identity as something always shifting and never fixed, where old traditions bump into new surroundings. People in the diaspora keep re-working what "Punjabiyaat" even means. They do it through bhangra that's been remixed with hip-hop, reggae, or EDM beats; through Punjabi films that now tour international festivals; through keeping festivals alive (Vaisakhi melas, weddings that still go huge); and through language that gets bent into new shapes. At the same time, money sent back home (remittances) plus visits from NRIs are changing rural Punjab itself, building fancier houses, shifting social expectations, but also feeding into bigger problems.

The big picture that comes out: Punjabi culture has gone truly global. You see it in hybridized bhangra tracks blasting everywhere, in butter-chicken spots that adapt to local tastes, in dance teams at universities that mix traditional steps with whatever's trending. But there are real downsides too. Second- and third-generation kids overseas often lose fluency in Punjabi, speaking it less at home, picking up only bits at cultural classes or from music. Back in Punjab, the steady drain of young people (especially from farming families) worsens the agrarian mess: stagnant incomes, mounting debt, youth chasing visas instead of staying to work the land. Recent reports from 2023–2025 hammer this home, globalization speeds everything up, building resilience in some ways but splintering communities in others.

This paper pulls together a bunch of existing studies and secondary sources, no fresh fieldwork, just a close read of what's already out there, to add a clearer view of how migration, identity, and homeland change all feed into each other.

Keywords -Diaspora, hybrid identities, socio-cultural impacts, migration, transnationalism, cultural erosion, globalization, Punjabiyaat, remittances, agrarian crisis, Punjabi cinema, Sikh identity, generational shifts.

Introduction: -Migration from Punjab has always been part of its story, starting way back with colonial-era labor movements and carrying right through to today's massive global waves, pushed by economic dreams, dead-end jobs, and straight-up crises back home.

The Punjabi diaspora is huge now, probably somewhere between 3 to 10 million people scattered worldwide (depending on how broadly you count ethnic Punjabis vs. Narrower definitions), with the biggest clusters in Canada (likely pushing toward or past 700–800,000 when including recent inflows), the UK (around half a million), the US, Australia, and Gulf countries. It's a mixed crowd, Sikhs, Hindus, Muslims, Christians but Sikhs have historically led the pack in migration numbers, thanks to things like British Army recruitment in the old days and the massive displacements after Partition.

At the core of all this is how people navigate those blended identities: keeping Punjabi roots alive while soaking up whatever the new country throws at them, food, slang, music, values. It's exactly that in-between zone Homi Bhabha called the "third space," where real cultural mash-ups and fresh ideas happen, even if it's sometimes uncomfortable.

Especially from 2023 through 2025, the outflow from rural Punjab has ramped up hard. Agrarian distress is brutal, stagnant crop prices, mounting debt, shrinking government support for farming, combined with sky-high youth unemployment, a raging drug problem, corruption that makes everything harder, and just a general sense that staying means getting nowhere. Studies from Punjab Agricultural University and others paint a clear picture: young people (mostly 15–30, and often the better-educated ones from landowning or small-farmer families) make up the bulk of those leaving, chasing student visas, work permits, or sometimes riskier irregular routes to Canada, Australia, the UK, the US, or Europe.

That age group dominates because they're the ones hit hardest by no local opportunities and the pressure to "make it big" abroad.

On the diaspora side, there's real pride in Punjabi culture going global: bhangra beats in clubs worldwide, massive Vaisakhi parades, Punjabi films crossing borders, food spots everywhere adapting classics. Yet there's struggle too, facing racism, dealing with generational gaps where kids abroad lose the language or feel caught between worlds, identity crises that hit hard in the second generation.

The whole thing is a double-edged sword: it builds resilience and keeps Punjab connected to the world, but the scale of the youth exodus risks hollowing out villages long-term, worsening brain drain and social fractures. Recent work (like those PAU surveys from 2021-2023, still very relevant into 2025) shows just how deep the push factors run, not only jobs and farms failing, but drugs, corruption, and village politics making staying feel impossible for many.

This paper explores these impacts through a case study of Punjab, focusing on how migration shapes hybrid identities in the diaspora and reverberates in rural homeland settings. It addresses gaps in existing literature by integrating recent empirical data on youth migration and digital influences, arguing that while diaspora enables cultural reinvention, it exacerbates rural Punjab's vulnerabilities. The analysis is structured around historical context, literature review, theoretical framework, methodology, core findings on diaspora identities and homeland effects, discussion, and conclusions. By doing so, it contributes to interdisciplinary fields like migration studies, anthropology, and South Asian studies, emphasizing the need for balanced transnational policies.

Historical Context of Punjabi Migration: -The roots of Punjabi migration trace back to the 19th century under British colonial rule, when Punjabis, particularly Sikhs, were recruited into the imperial army and deployed across Asia, Africa, and Europe. This era marked the beginning of a global diaspora, with early settlements in places like Hong Kong, Singapore, and East Africa. The 1947 Partition of India further intensified displacements, bifurcating Punjab along religious lines and forcing millions to relocate, creating internal diasporas within India and Pakistan. Sikhs, in particular, experienced profound trauma, which shaped a resilient diasporic consciousness, evolving from ethnic group to a "nation-in-the-making."

Post-independence, economic opportunities drove waves of migration in the 1960s-1980s, with Jat Sikhs from rural Doaba region heading to the UK and Canada for labor in factories and farms. The 1984 anti-Sikh violence in India accelerated outflows, intertwining migration with political asylum. By the 21st century, globalization and neoliberal policies exacerbated rural

Punjab's challenges: declining agriculture (growth slowed to 1.61% between 2005-2015), farmer suicides (over 16,000 since 2000), and youth unemployment. Recent data from 2023-2025 indicates that 79% of migrants cite unemployment as a primary driver, with 53% using student visas to Canada.

This historical trajectory has fostered a diaspora that maintains strong homeland ties through remittances (exceeding \$10 billion annually to India alone) and philanthropy, yet it also introduces hybridity as migrants adapt to host societies. For instance, in the UK, early migrants preserved Punjabi culture through gurdwaras, but subsequent generations blend it with British culture, leading to evolved identities. In rural Punjab, migration has shifted from temporary sojourns to permanent aspirations, altering family structures and community dynamics. Understanding this context is crucial for analyzing contemporary socio-cultural impacts.

Scholarly discourse on the Punjabi diaspora has proliferated, emphasizing transnationalism, hybridity, and homeland linkages. Early works, like those on Sikh diaspora, frame migration as a response to historical victimhood, from Partition to 1984 events, fostering global solidarity. Recent studies (2023-2025) shift focus to youth migration, comparing regular and irregular pathways, revealing socio-economic costs averaging Rs. 1.3 million per migrant, often leading to debt and exploitation.

On hybrid identities, literature highlights cultural fusion in media and arts. Punjabi cinema, as analyzed in recent papers, depicts diaspora experiences through films like *Jatt & Juliet 2* (2013) and *Aaja Mexico Chaliye* (2022), portraying bilingual tensions and cultural fraternity. Music studies note Bhangra's hybridization with hip-hop, globalized by artists like Diljit Dosanjh, though at the cost of folk authenticity. Language erosion is a recurring theme; only 30% of second-generation Canadian Punjabis are fluent in Punjabi, prioritizing English for mobility.

This paper is grounded in postcolonial theories of hybridity and identity. Homi Bhabha's "third space" conceptualizes hybridity as a site of negotiation where cultural meanings are translated and transformed, enabling new identities beyond binary oppositions of home/host. For Punjabi diaspora, this manifests in cultural artifacts like fused music and cinema, where traditional Punjabi culture intersects with global influences.

Stuart Hall's fluid identities emphasize culture as positional and conjunctural, shaped by historical contexts and power relations. This framework illuminates generational shifts, where first-generation migrants cling to roots, while youth forge polycultural selves. Transnationalism, as per Basch et al., views migrants as embedded in multi-local social fields, explaining remittances and philanthropy as identity anchors.

Additionally, racial capitalism theory highlights how diaspora navigates exploitation in host societies, drawing on vernacular knowledge for resistance. These lenses collectively analyze how migration fosters hybrid Punjabi-ness while impacting rural dynamics. Hybrid identities in the Punjabi diaspora aren't some neat academic concept, they're real, lived messiness where people hold tight to their roots while figuring out how to fit (or not fit) into wherever they've landed. In places like Canada or the US, you see it play out vividly in Punjabi films that hit close to home for a lot of families.

Language is another big piece. Gurmukhi script and Punjabi get taught in community schools and weekend classes across North America, but by the second generation, fluency often drops off sharply—stats suggest only around 30% of Canadian-born kids from Punjabi families are really comfortable speaking it fluently at home. What you hear instead is this lively mix: Punjabi slang thrown into English sentences, code-switching mid-conversation, creating a whole new way of talking that's uniquely diaspora.

Cultural Dissemination, Preservation, and Erosion:

The Punjabi diaspora plays a pivotal role in the global dissemination of Punjabi culture, acting as a bridge that carries traditions far beyond the borders of Punjab while simultaneously preserving core elements and contributing to their gradual erosion through adaptation and hybridization. With over 10 million Punjabis living abroad—primarily in Canada, the UK, the US, Australia, and the Middle East—the diaspora has transformed Punjabi cultural forms into global phenomena, often through vibrant community institutions and media.

Dissemination occurs prominently via cuisine, music, festivals, and religious practices. Punjabi food has achieved worldwide popularity through diaspora-led restaurants and adaptations, such as tandoori chicken, butter chicken, and naan becoming staples in international cuisine. In the UK, chains like Dishoom blend authentic Punjabi flavors with fusion elements (e.g., tandoori pizza), introducing non-Punjabis to the cuisine while promoting cultural exchange. Similarly, Punjabi music—especially Bhangra—has disseminated globally. Originating as a rural harvest folk dance and music form accompanied by the dhol drum, Bhangra has been globalized through diaspora artists. In the 1980s–1990s, British Punjabi musicians fused traditional dhol beats with reggae, hip-hop, and pop, creating “British Bhangra” or “Asian Kool.” Artists like Diljit Dosanjh and AP Dhillon have taken hybridized tracks to international charts, with Punjabi lyrics over Western beats reaching billions via streaming platforms. This has elevated Punjabi sounds worldwide, from school curriculums in the UK incorporating Bhangra to global food and music festivals featuring Punjabi performances along with festivals which serve as key dissemination vehicles.

Back in urban Punjab (and even bleeding into diaspora spaces), globalization pushes Hindi or English as the “useful” languages for jobs, business, media. Only about 60% of young people in cities there use Punjabi as their main home language anymore, English creeps in for status, convenience, or just habit. The result is these rich hybrid identities: kids who can code-switch effortlessly, enjoy both old folk tales and global pop, feel Punjabi but also fully part of wherever they are. It adds layers and strength in some ways, but it also fragments the traditional Punjabi-ness, making it feel less unified, more personalized, sometimes diluted for the next generation trying to balance heritage with fitting in. The push-pull is ongoing: real efforts to hold on tight, real forces pulling things apart. It's what keeps the whole diaspora story so alive and complicated. Overall, dissemination and preservation empower Punjabi culture globally, yet erosion through adaptation highlights the tension between authenticity and relevance in a transnational world.

Socio-Cultural Impacts on Rural Punjab: -Mass migration from rural Punjab, driven by agrarian crises, unemployment, debt, drug issues, and aspirations for better opportunities, has profoundly reshaped socio-cultural life in the homeland. With 13–15% of rural households having emigrants (primarily youth aged 15–30), the outflow creates bidirectional influences: remittances and return visits bring wealth and new ideas, but also exacerbate inequalities, family disruptions, and cultural shifts. Economic and Social Transformations dominate impacts. Remittances, often billions annually, fund ostentatious homes, education, healthcare, and infrastructure like schools and gurdwaras.

Agriculture takes a direct hit from all this. With so many young people leaving, the sector's growth has crawled along (hovering around 1-2% in recent decades, way below what it needs to stay viable). Labor shortages hit hard during planting and harvest seasons, villages lose their able-bodied workers, farming gets tougher and less profitable, which just pushes even more youth to see migration as the only way out. It's a vicious cycle.

Family and social structures are changing fast and hard. Joint families are giving way to nuclear setups (some studies put nuclear households rising sharply, with joint ones still common but declining in practice). Elders are hit worst, around 52% report feeling lonely, and about 41% say they feel neglected as kids settle abroad or move to cities. Women often end up running households solo when husbands or sons leave, juggling everything from farm work to kids to in-laws, which shifts gender roles but piles on extra stress and burden. Peer pressure plays a huge role too, migration has become the ultimate status symbol, the ticket to upward mobility. Even families with decent land feel the heat to send kids

abroad so they don't "fall behind." Social media makes it worse: endless posts of diaspora life—fancy cars, big houses, trips—fuel the dreams, while also spreading half-truths about easy visas or ignoring the risks (like deportation stories or the Khalistan noise that sometimes complicates things).

On the brighter side, there's real resilience and connection. Diaspora groups rally for Punjab during crises (flood relief funds come quick), and returnees sometimes bring back skills, business ideas, or new ways of doing things that help locally. Still, the overall picture is tough: migration drains talent and energy from rural areas, splits families apart, speeds up cultural blending that can feel like loss, and leaves Punjab's villages more dependent on outside money while their social and cultural fabric gets remade in unpredictable ways.

These patterns show migration's double edge, it's a real lifeline for families facing dead-end farms, debt, drugs, corruption, and no jobs at home, but over time it fragments communities, hollows out villages, and pushes Punjab toward a future that's more connected globally yet less rooted locally.

In the end, the Punjabi diaspora proves how tough and flexible hybrid identities can be, they're born in the grind of moving across borders and keep reshaping both the people abroad and the villages back home. Migration spreads Punjabi culture far and wide through remixed bhangra, crossover films, massive overseas festivals, it adds real color to global life. Preservation hangs on through gurdwaras as community anchors, language classes, online groups sharing stories and edits to keep Punjabi visible. But the flipside is erosion too: language slipping away, traditions getting simplified or commercialized, authenticity feeling stretched thin. At the same time, rural Punjab feels the backflow, remittances build houses and pay debts, but youth leaving slows farming, strains families, and mixes in new habits that change everything from weddings to daily talk. It's a lifeline in crisis, no question, but it's also quietly transforming the place in ways that leave it more dependent, more divided, and forever changed. Sustain, yet stratify communities, social disruptions that fracture families and amplify inequalities, and cultural shifts that blend global influences with local norms, often at the cost of traditional cohesion.

Looking ahead, the trajectory of the Punjabi diaspora offers a visionary blueprint for navigating an increasingly interconnected world, where hybridity is not merely a survival strategy but a catalyst for innovation and empowerment. By 2030 and beyond, as globalization intensifies and digital technologies evolve, the diaspora could pioneer "digital Punjabyat"—virtual reality platforms and AI-driven language apps that revitalize Punjabi fluency among youth, countering erosion and fostering intergenerational bonds across continents. Envision a future where diaspora investments transcend remittances, channelling

resources into sustainable agriculture in Punjab, addressing climate crises through eco-friendly tech like precision farming and water conservation, thereby reversing agrarian decline and creating green jobs that stem youth exodus. *****

References:

THE EFFECT OF DIASPORA ON PUNJABI CULTURE. (2022). ShodhKosh. <https://www.granthaalayahpublication.org/Arts-Journal/ShodhKosh/article/view/5903>

Cultural Representation and Hybrid Identity Formation in Punjabi Cinema. (n.d.). Regional Tribune. <https://submissions.regionaltribune.com/index.php/trt/article/download/64/137/431>

Punjabi Diasporas: Conceptualizing and Evaluating Impacts of Diaspora-Homeland Linkages. (2015). Cambridge University Press. <https://www.cambridge.org/core/books/migration-mobility-and-multiple-affiliations/punjabi-diasporas-conceptualizing-and-evaluating-impacts-of-diasporahomeland-linkages/19EA2414593256CC459050639A0B43EA>

Globalisation and Punjabi Identity: Resistance, Relocation and Reinvention (Again!). (2012). Journal of Punjab Studies. <https://punjab.global.ucsb.edu/sites/default/files/sitefiles/journals/volume19/no2/Singh.pdf>

The Punjabi Diaspora's Impact on Punjab's Economy and Society. (n.d.). Taylor & Francis. <https://www.taylorfrancis.com/chapters/edit/10.4324/9780367817695-32/punjabi-diaspora-impact-punjab-economy-society-assessment-darshan-tatla>

Re-Emergence Of Khalistan: The Role Of The Diaspora And Social Media. (2023). TDHJ. <https://tdhj.org/blog/post/reemergence-khalistan-diaspora-social-media/>

An exploration of the social and cultural factors which influence Indian Punjabi men's alcohol consumption. (2014). University of Birmingham. <https://etheses.bham.ac.uk/5535/1/Duggal14PhD.pdf>

Cultural Representation and Hybrid Identity Formation in Punjabi Cinema. (2025). Zenodo. <https://zenodo.org/records/15062398>

Regular vs. Irregular migration from Indian Punjab: evaluating socio-economic contexts and motivations. (2025). Springer. <https://link.springer.com/article/10.1186/s40878-025-00499-z>

THE EFFECT OF DIASPORA ON PUNJABI CULTURE. (2025). Research Gate. https://www.researchgate.net/publication/393894408_THE_EFFECT_OF_DIASPORA_ON_PUNJABI_CULTURE

The Diasporic Pursuit of Home and Identity: Dynamic Punjabi Transnationalism. (2014). SAGE Journals. <https://journals.sagepub.com/doi/10.1111/1467-954X.12155>

Increasing trends of migration among the Punjabis. (2024). OAJI. <https://oaji.net/pdf.html?n=2023/1174-1760003994.pdf>

Drivers of overseas migration of students from rural Punjab, India. (n.d.). Extension Journal. <https://www.extensionjournal.com/article/view/2475/8-36>

Sikh Diasporic Approaches in Anti-Caste Activism. (2024). MDPI. <https://www.mdpi.com/2077-1444/15/8/1013>

Language, politics, and identity: Challenges to the Panjabi language in Panjab. (2024). Taylor & Francis. <https://www.tandfonline.com/doi/full/10.1080/17448727.2024.2408871>

Diasporic strategizing: Punjabi Sikh immigrant navigations of labor, citizenship, and violence in the US. (2024). Springer. <https://link.springer.com/article/10.1007/s10624-024-09749-5>

The Sikh Diaspora. (n.d.). Oxford Academic. <https://academic.oup.com/edited-volume/34369/chapter/291510384>

Diasporic strategizing: Punjabi Sikh immigrant navigations of labor, citizenship, and violence in the US. (2024). Springer. <https://link.springer.com/article/10.1007/s10624-024-09749-5>

Why are Sikh Youth in rural Panjab abandoning their outward identity. (2025). Facebook. <https://www.facebook.com/gurnam.s.khela/posts/why-are-sikh-youth-in-rural-panjab-abandoning-their-outward-identityearlierthis/10166335754538761/>

'लोकनायक युगे युगे' नाटक में धार्मिक समानता

डॉ. लक्ष्मण भोसले

सह प्राध्यापक- हिंदी विभाग

सरकारी प्रथम श्रेणी महाविद्यालय, जेवर्गी-585310, गुलबर्गा जिला, कर्नाटक.

सारांश-डॉ. बलदेव वंशी द्वारा रचित नाटक 'लोकनायक युगे युगे' स्वामी रामानंद को कलियुग का लोकनायक और विष्णु का अवतार मानकर प्रस्तुत करता है। नाटक रामानंद के जीवन, गुरुभक्ति, समाज सुधार और भक्ति प्रचार पर केंद्रित है। रामदत्त से रामानंद बने इस ब्राह्मण बालक ने जाति, धर्म, वर्ण और लिंग भेद मिटाकर सभी को भक्ति का द्वार खोला। उनके 12 पुरुष शिष्यों (जैसे कबीर, रविदास, पीपा, धना) और दो महिला शिष्यों (पद्मावती, सुरसरी) के माध्यम से समानता का संदेश फैलाया। नाटक दक्षिण से उत्तर भारत में भक्ति आंदोलन के प्रसार, गुरु महिमा, दीन-दलितों के उद्धार, नारी स्वाभिमान और वर्तमान समस्याओं (महंगाई, भ्रष्टाचार, धार्मिक नफरत) की आलोचना को जोड़ता है। यह भगवद्गीता के "यदा यदा हि धर्मस्य... संभवामि युगे युगे" से प्रेरित होकर राम, कृष्ण की तरह रामानंद को युग सुधारक दिखाता है।

बीज शब्द:-स्वामी रामानंद, लोकनायक युगे युगे, धार्मिक समानता, जाति-वर्ण भेद मिटाना, रामानंदी संप्रदाय, गुरुभक्ति, भक्ति आंदोलन, दीन-दलित उद्धार, नारी समानता, कलियुग सुधार, राघवानंद, कबीर-रविदास, पद्मावती-सुरसरी, महंगाई-भ्रष्टाचार, संघे शक्ति कलयुगे।

मूल आलेख :-रामदत्त ही रामानंद बने-आचार्य रामानंद जी का जन्म उत्तरप्रदेश के इलाहाबाद के पास मलिकोट नामक गाँव में ब्राह्मण परिवार में हुआ। उनका बचपन का नाम रामदत्त था। जन्म सन् 1299 ईसवी में और मृत्यु सन् 1410 में हुई। इस प्रकार स्वामी रामानंद 111 वर्ष का लंबा जीवन जोकर, अपने दीक्षागुरु आचार्य राघवानंद की समाजसुधार की आकांक्षा अपनी कर्मशक्ति से पूरी की। इन्होंने 'आनंदभाष्य' नामक ग्रंथ की रचना की।

गुरु महिमा-भक्ति साहित्य में गुरु को भगवान से श्रेष्ठ माना गया है। स्वामी रामानंद जी की भी इस नाटक में गुरुभक्ति स्मरणीय है। रामानंद कहते हैं— 'परम ब्रह्म (गौड) संपूर्ण सृष्टि में व्याप्त होता है, जिसका परिचय केवल गुरु ही दे सकता है।' अतः गुरु का महत्व सबसे ऊँचा है। मनुष्य का मन अस्थिर रहता है और गुरु की कृपा से ही मन की चंचलता मिट जाती और सही मार्ग से चलकर भगवान तक पहुँच सकता है। गुरु ही मनुष्य के सभी भ्रमों को मिटा देता है।

नाटक का परिचय-'लोकनायक युगे-युगे' इस नाटक में नाटककार डॉ. बलदेव वंशी जी ने जाति-धर्म के भेदभाव को मिटाकर पूरे मानव कुल को समानता का संदेश दिया है। त्रेता युग, द्वापर युग में जिस प्रकार राम और कृष्ण ने विष्णु का अवतार धारण कर के मानव कुल को सुधारने और संवारने का काम किया, उसी प्रकार स्वामी रामानंद ने कलियुग में विष्णु का ही अवतार धारण कर के संपूर्ण मानव जाति का उद्धार करने का महत्वपूर्ण काम किया है। आचार्य स्वामी रामानंद ही 'लोकनायक युगे युगे' इस नाटक के नायक हैं। त्याग, सेवा, समानता, सहन—शीलता, दीन-दलितों से प्रेम आदि विशेष गुणों के कारण रामानंद जी कलियुग के लोक उद्धारक सिद्ध हुए हैं। हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, बौद्ध आदि धर्मों में ब्राह्मण-क्षत्रीय-वैश्य-शूद्र आदि वर्गों में तथा स्त्री और पुरुष में भी समानता स्थापित कर के एक महान समाज सुधारक के रूप में भी उभरकर आते हैं।

राघवानंद के शिष्य—राजामी रामानंद जी आचार्य राघवानंद के

शिष्य हैं। रामानंद जी रामानंदी संप्रदाय की स्थापना कर के वैष्णव भक्ति का प्रचार करते हैं। श्री राम जी रामानंदी संप्रदाय के आश्रय देव हैं। स्वामी रामानंद जी के कुल बारह शिष्य हैं—अनंतानंद, सुरसुरानंद, सुखानंद, नरहरयानंद, भवानंद, योगानंद, गालवानंद, संत रविदास, संत कबीर, संत पीपा, संत धना और संत रौठा। इनके अतिरिक्त दो महिला शिष्य भी थे—पद्मावती और सुरेश्वरी।

भक्ति दक्षिण उपजी, लाये रामानंद जैसे कि हम सभी जानते हैं कि तेरहवीं शताब्दी में जो भक्ति परंपरा दक्षिण भारत में सुरु हुई वही भक्ति स्वामी रामानंद के द्वारा पूरे उत्तर भारत में फैल जाती है। दक्षिण के अलावर संत, महाराष्ट्र की वारकरी परंपरा, बंगाल के वैतन्य, महाप्रभु तथा पंजाब के गुरु नानक देव आदि सभी ने मानव कुल को सुधारने में अपना—अपना योगदान भक्ति द्वारा ही दिया है।

महान कार्य-आचार्य स्वामी रामानंद जी ने दीन-दलितों का उद्धार करके साथ ही नारी में स्वाभिमान की भावना जगाकर समाज में एक आदर्श तो स्थापित करते ही हैं साथ ही साथ उच्च वर्णियों द्वारा निम्न वर्गों के प्रति जाने अंजाने में किए—गये अच्युत अत्याचारों के प्रति क्षमा याचना करके एक यथार्थ भी स्थापित करते हैं। इस प्रकार रामानंद जी सच्चे अर्थों में लोक के महानायक के रूप में उभरकर आते हैं।

शीर्षक की सार्थकता

छो. बलदेव वंशी जी ने अपने 'लोकनायक युगे युगे' नाटक का नामकरण भगवद्गीता के 'संभवामिग्युर्युगे' के आधार पर किया होगा, इसमें कोई शक नहीं 'संभवामिग्युर्युगे' और 'लोकनायक युगे युगे' दोनों शीर्षकों का अर्थ है कि जब—जब इस पल्लोक के मानव समाज में पाप-अधर्म-आमानवीयता अधिक होगा तब—तब भगवान स्वयं मनुष्य के रूप में अवतार धारण करके मानव कुल को संवारने—सुधारने का महान कार्य करेंगे। राम, कृष्ण, मोहम्मद पेगबर, ईसा मसीह, गुरु शंकराचार्य, बुद्ध, रामानंद, अन्वडकर जैसे अनेकों का जन्म इस धरती पर तत्कालीन मानवकुल के महानायकों के रूप में ही हुआ था।

फूलों की चोरी-

बालक रामानंद वचपन में अपने गुरु दण्डी स्वामि के लिए आचार्य राघवानंद के आश्रम से फूल चुराकर गुरुसेवा में समर्पित करते थे। चोरी का भाव रामानंद को एक साधारण मनुष्य के रूप में व्यक्त करता है। लेकिन चोरी को ज्यों-का-त्यों मान लेना उन्हें साधारण व्यक्ति नहीं बल्कि असाधारण बनाता है, विशेष बनाता है, महान बनाता है।

“मैं, मैं चोर नहीं हूँ, गुरु जी। मेरा नाम रामदत्त है। मैं यहीं पास में दण्डी संन्यासी की कुटियाँ में उनकी रोवा में रहता हूँ। मैं अपने गुरु जी के लिए फूल ले जाता हूँ। उन्हें पूजा के लिए फूल चाहिए।”

भक्तों को समानता का संदेश-

स्वामी रामानंद जी अपने आश्रम श्रीमत पंच गंगा घाट में बैठकर प्रवचन करते हैं। उनके सामने अनेक भक्त बैठकर प्रवचन सुनते हैं। लोक नायक रामानंद जी बताते हैं— “सूर्य की किरणों पर सबका समान अधिकार है। वायु बिना किसी रोक टोक के सबके श्वासों में प्राण भरता है। पुष्प सब पर अपनी सुगंध बराबर लुटाते हैं।” गलती के लिए क्षमा **प्रार्थना-**

15-16 वर्ष का बालक जब आचार्य राघवानंद के आश्रम में फूलों की चोरी करते पकड़ा जाता है— तब तुरंत क्षमा याचना करता है— “भुझे क्षमा करें, गुरु जी। मेरी भूल क्षमा कर दें। मैं नासमझी मैं यह कुकर्म

करता रहा। मुझे शाप न दें। मैं अपनी सासों तक आपकी सेवा करूँगा।” बालक रामदत्त के इन शब्दों को सुनकर गुरु राघवानंद जी मन ही मन में सोचने लगते हैं— “अभी इस बालक की आयु ही कितनी है। यह अभी कलिरूप है। बड़ी होनहार आत्मा है, इसे यदि अवसर मिल जाए, तो समूची धरती को महकाने की क्षमता है इसमें।”

रामदत्त का घर त्यागना व माता-पिता को दुःख होना—बालक रामदत्त घर छोड़कर जानेवाला है। इसे जानकर उनके माता पिता को बड़ी चिंता होने लगती है। तब रामदत्त सोचता है— “माता-पिता संतान को पाल-पोसकर बड़ा करते हैं। उससे उन्हें कई उम्मीदें-अपेक्षाएँ होती हैं। जब उनकी अपेक्षाएँ पूरी नहीं होती, तो उन्हें बड़ा दुःख होता है। इस प्रकार मानव स्वयं ही अपने दुःख को जन्म देता है। लेकिन दुःख ही मानव को परिपूर्ण मनुष्य बनाता है। दुःख न हो तो जीवन का कोई अर्थ ही नहीं रहेगा। जीवन जीने का स्वाद खो जायेगा। रामानंद जी की माता जी उसे घर छोड़कर जाने के लिए अनुमति देते हुए कहती है— “ठीक है राम। तुम जाओ। तुम्हें नहीं रोकती। यह तो प्रकृति का नियम है। वृक्ष के प्राणों में जन्मी सुगंध तक वृक्ष को छोड़कर हवा के साथ हो लेती है। तुम भी प्रकृति का नियम पालन करो।” संतान और माँ का नाता सबसे गहरा होता है। नौ मास गर्भ में रहते दोनों एक साथ पीड़ाएँ छोलते हैं। इस संदर्भ में जब पिताजी की आँखों में पानी आने लगता है, तो अपने आपसे कहने लगते हैं— “अपने आँसू बाहर मत आने दो। बाहर तो बच्चों और स्त्रियों के आँसू गिरते हैं। पुरुषों के आँसू भीतर गिरते हैं। कमजोर पुरुष किसी के काम का नहीं रहता। न अपने काम का और न देश के काम का।” बालक रामदत्त के विचार में जन्म देनेवाली माँ, भारत माँ, और पूरी प्रकृति माँ तीनों समान हैं। अतः माता पिता के चरणों पर एक-एक हाथ रखकर दोनों के आगे सिर नवा देता है और उनसे विदाई लेता है।

आज की समस्या भ्रष्टाचार व मंहगाई—नाटककार डॉ. वलदेव वंशी जी ने अपने लोकनायक युगे युगे इस नाटक में समाज में व्याप्त (फैली) मंहगाई को बहुत ही सरल ढंग से व्यक्त किया है। इलाहाबाद के चौराहे पर सुखबू भाई की चाय की दुकान है, जहाँ पीटर, रामखेलावन, रफीक अहमद, सुद्धवा नामक मित्र चाय पीने आते हैं। उनमें धार्मिक, भेदभाव नहीं है। रफीक अहमद बड़े दिलदार आदमी हैं। हिंदुओं और ईसाइयों से बड़ी मोहबत से बातें करते हैं। रामखेलावन, रफीक अहमद, पीटर और सुद्धवा का चाय की दुकान पर संवाद सुनिए।

रामखेलावन : अरे भाई हमें भी चाय पिलाओ मियाँ रफीक।

रफीक : चाय मीठी पीयोगे या फीखी?

रामखेलावन : भाई अब चाय न तो मीठी रही, न फीकी। यह तो कड़वी हो गई है। इतनी मंहगी। चीनी, पचास रुपये किलो। गरीबों का तो अब मरण है। पीटर : रफीक भाई सलाम। राम भाई राम-राम।

रफीक : पिछले दस-बीस बरसों (दशक) से लगातार सभी चीजें मंहगी होती जा रही हैं। लगता है बाजार में आग लगी है।

पीटर : अब तो लूट मार मची है। जो सरकार आती है लगता है सदियों के भुखड़ आ गये हैं। बेहयाई से लूटते हैं। इनका पेट है कि कुआ, भरता ही नहीं। रामखेलावन : इनमें मानवता तो रही नहीं। ये जन रक्षक नहीं, जन भक्षक हैं। “उपर्युक्त संवादों में पढ़ने पर लगता है कि आज की मंहगाई और राजनेताओं का अमानवीय भ्रष्टाचार गरीबों का जीना ही हराम कर दिया है। कहीं न्याय नहीं, कहीं ईमानदारी नहीं, कहीं अच्छे दिनों की उम्मीद जगती नहीं, जीवन ही भयानक बना है। इनसान जो गरीब है, परेशान है और जो अमीर-बुद्धिमान है सैतान बन बैठा है। अमीर और गरीबों के बीच की खाई (का अंतर) कम होने के बजाय और अधिक बढ़ती जा रही है।

गरीब-दीन-दलितों में असमाधान-इलाहाबाद के बाहर की एक मलिन बरती में मजदूर, कारीगर जैसे गरीब हिंदू-मुसलमान रहते हैं। वहाँ के लोगों का ईश्वर पर से भरोसा टूट गया है। उनका जीवन मौत से बदतर बना हुआ है। वे सोचते हैं— “मौत की भयानक खाई में कदने से पहले हम भरसक हाथ पैर मारते हैं कहीं कोई सहारा मिल जाये। हमें नहीं तो हमारे बच्चों को ही किनारा मिल जाये। पर नहीं लगता है, हमारा भगवान सोया है। हमारा अल्ला वेखबर है। वह अंधा, बहरा और क्रूर है।”

विमर्श के विविध आयाम—“हम अपने देश-काल-जीवन से विचित्र हैं, आज कोई हमारी सुख लेनेवाला नहीं। कोई देव, कोई मानव, कोई समाज, कोई संत नहीं, हम हताश हो चुके हैं।”

इस प्रकार जीवन की उम्मीद खोये लोगों के नायक के रूप में स्वामी रामानंद जी इस नाटक में दीन दलितों के दाता बनकर, मानवता के पुजारी बनकर, धर्म-जाति-वर्ण के विरोधी बनकर आये हैं। हताश-निराश जनता को उनका मार्गदर्शन देखिए— “संघे शक्ति कलयुगों। अर्थात् संघटना ही इस कलियुग में सबसे बड़ी शक्ति है। और वे आगे कहते हैं— “कलयुग में इक (एक) नाम आधार” अर्थात् कलियुग में मनुष्य को सारे कष्टों से उभारने वाला, दीन-दलित-कमजोर लोगों का सहारा केवल भगवान का नामस्मरण ही होगा। आचार्य रामानंद जी साधारण लोगों को समझाते हैं कि परमात्मा का सदैव स्मरण करते हुए अपनी अपनी आत्माओं में झाँकना और आत्मिक रूप से सभी का जुड़ना ही एक मात्र सहारा होगा।

सारी दैवी शक्तियाँ जगे हुआँ का साथ देती हैं। निष्क्रिय, दुर्बलों, कायरों, खण्ड-खण्ड विश्वे हुआँ का नहीं। आज किर आप सब तिनका-तिनका विश्वर गये हो। किर वही नफरत, किर वही हिन्दू-मुसलमान का भेद, किर वही फसाद, खून खराबा तमी तुम्हारे दुःख बढ़े हैं। जीवन नरक बन गया है। इस प्रकार धार्मिक नफरत और जातीयता के भेदभाव के कारण मनुष्य मनुष्य का दोस्त नहीं बल्कि दुश्मन बनकर एक-दूसरे के दुःख का कारण बन रहा है।

रामानंद के प्रवचन का दलितों पर प्रभाव

गाँव के बाहर दलित बस्ती में गरीब दलित आपस में बातें करते हैं। धूर्त लोगों ने हमें कई तरह से बांट रखा है। तू बामन है। तू क्षत्रीय है। तू वैश्य है। तू शूद्र है। रेदासी (वमार) लोग सोचने लगते हैं— “हम तो सर्वाणियों के पौवों की रक्षा के लिए जुतो बनवाते हैं लेकिन वे श्रीमान हमारे बनाये जुतो तो पहनते हैं पर हमें अच्छत मानते हैं। हमें अपने जुतों के बराबर भी नहीं समझाते। अब यह नहीं चलेगा।” एक नाई कहता है— “हमसे तुड़ड़ी तो मुड़वाते हैं पर हमारी तुड़ड़ी देखने से इनका धरम भ्रष्ट हो जाता है। यह राब नहीं चलेगा। ऐसी बेइज्जती। ऐसी नफरत। खून खीलता है। कलेजा फटता है।” इस प्रकार दलितों में आत्माभिमान या स्वाभिमान जागने का महान कार्य स्वामी रामानंद और उनके शिष्यों ने किया। इसलिए रामानंद सच्चे अर्थों में लोकनायक हैं।

संत पद्मावती और सुरसरी का महिलाओं को संदेश

आचार्य रामानंद के बारह (12) पुरुष शिष्यों के अतिरिक्त दो (2) नारी शिष्याएँ थीं— संत पद्मावती और संत सुरसरी। स्त्री और पुरुषों को समान रूप से अपने शिष्यों के रूप में अपनाकर स्वामी रामानंद जी ने सारे संसार को समानता का संदेश देते हैं। धर्म-जाति-वर्ग-वर्ण-स्त्री-पुरुष जैसे अनेक भिन्नताओं को

समाज से निकालना लोकनायक रामानंद का उद्देश्य था। गुरु के इस महान कार्य को सफल बनाने में उनके शिष्यों ने भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वे अपने प्रवचनों से दीन-दलितों में आत्माभिमान जागने का प्रशंसनीय कार्य किया। पंच गंगा घाट पर रामानंदी संप्रदाय द्वारा स्थापित “स्वाधीन नारी सतसंग मंडल” की सदस्याएँ हैं— पद्मावती

और सुरसरी। वे साधारण महिलाओं को नाम स्मरण एवं भक्ति द्वारा जीवन मुक्ति का सरल मार्ग बताती हैं। एक महिला पूछती है— हम अपने गृहस्थी जीवन में अध्यात्मा का उपयोग कैसे करें? तब संत सुरसरी बहुत ही सरल उदाहरण देकर इस प्रकार समझाती है— "जिस प्रकार पानी से भरा गागर अपने सिर पर रखकर साथ चलनेवाली सखी—सहेलियों के साथ बातचीत करते हुए हंसती—खिलखिलाती हुई भी तुम रास्ते पर निश्चित चल सकती हो रास्तों तथा गागरों—दोनों पर आपका ध्यान बराबर लगा रहता है। हंसी—खिलखिलाहट में पानी की गागर से लापरवाह नहीं करती। इसी प्रकार अपना प्रत्येक घरेलू काम—काज करते हुए भी प्रभु को अनदेखा नहीं करो। जिसने जगत का निर्माण किया, उसे भी सबके साथ देखे। यही सम्यक दृष्टि है। संतों की अध्यात्मा दृष्टि ऐसी होती है।

निष्कर्ष—नाटक का मुख्य संदेश मानव समाज में व्याप्त भेदभाव, अन्याय और अधर्म के विरुद्ध **समानता, भक्ति और संघटन** की शक्ति है। स्वामी रामानंद को युग-युग में अवतरित होने वाले लोक उद्धारक के रूप में चित्रित कर नाटककार यह स्थापित करते हैं कि कलियुग में भी राम-कृष्ण जैसे महानायक जन्म लेते हैं, जो त्याग, सेवा और प्रेम से समाज को नई दिशा देते हैं। वर्तमान की महंगाई, भ्रष्टाचार और धार्मिक विभेद जैसी समस्याओं को रामानंद के प्रवचनों से जोड़कर नाटक आज के समाज को आत्मचिंतन और सुधार का आह्वान करता है। अंततः यह भक्ति को सभी वर्गों के लिए सरल और समावेशी मार्ग बताता है, जहां गुरु कृपा और नाम स्मरण से मुक्ति संभव है।

संदर्भ सूची:-

1. प्रदान किया गया पाठ: 'लोकनायक युगे युगे' नाटक का विस्तृत विवरण और अंश (उपयोगकर्ता द्वारा साझा)।
2. स्वामी रामानंद का जीवन परिचय: भारतकोश (bharatdiscovery.org) और विकिपीडिया (hi.wikipedia.org/wiki/रामानन्द)।
3. भगवद्गीता श्लोक 4.7-4.8: "यदा यदा हि धर्मस्य... संभवामि युगे युगे" – गीता सुपरसाइट (gitasupersite.iitk.ac.in) और अन्य स्रोत।
4. डॉ. बलदेव वंशी का परिचय: विकिपीडिया (hi.wikipedia.org/wiki/बलदेव_वंशी) और भारतकोश (bharatdiscovery.org)।

जुलाई - सितंबर -2025



<https://shodhutkarsh.com>

त्रैमासिक ऑनलाइन पत्रिका - 'शोध उत्कर्ष'



(RESEARCH ARETE JOURNAL)

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh

